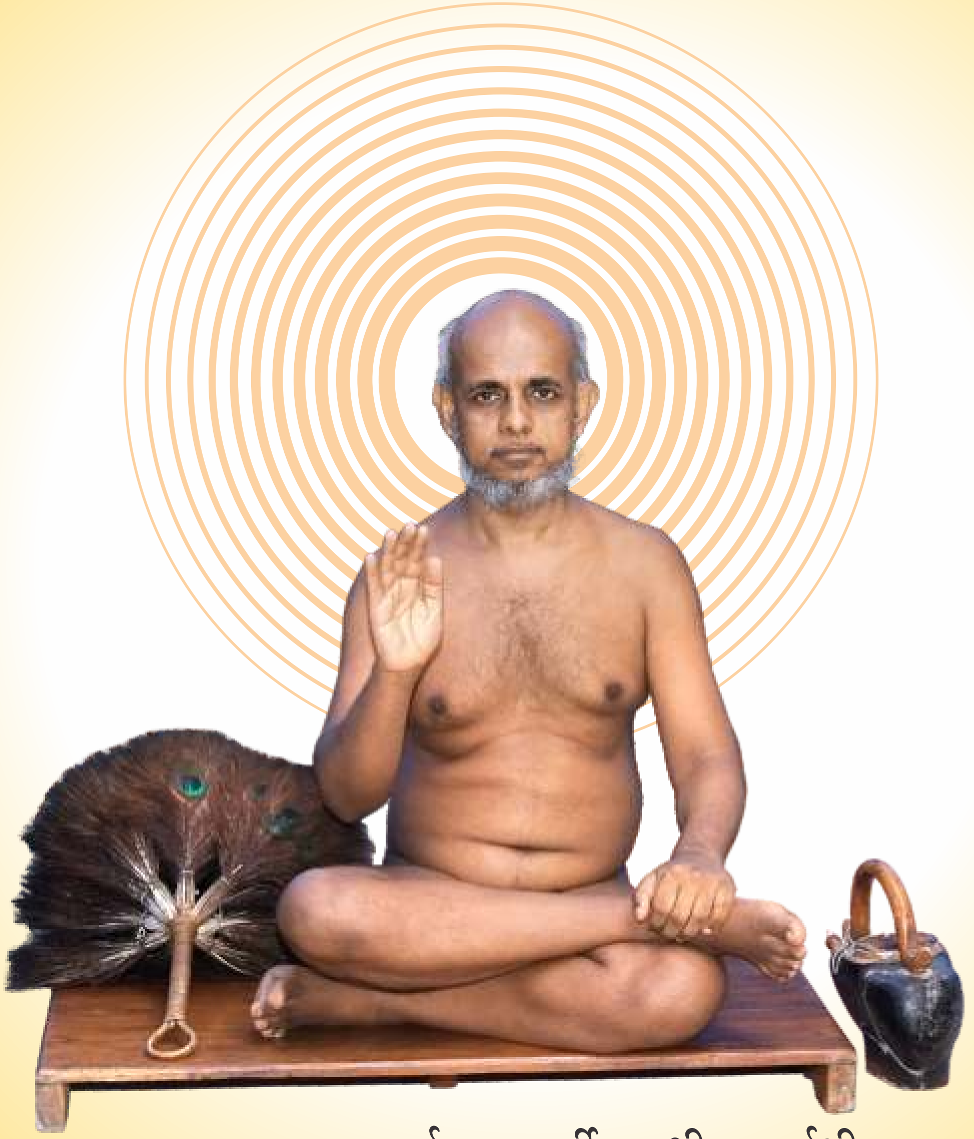

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणाः–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

आचार्य सोमकीर्त्ति एवं ब्रह्म यशोधर

लेखक एवं सम्पादक
डॉक्टर कस्तूरचन्द कासलीवाल

प्रकाशक
श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी जयपुर (राजस्थान)

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

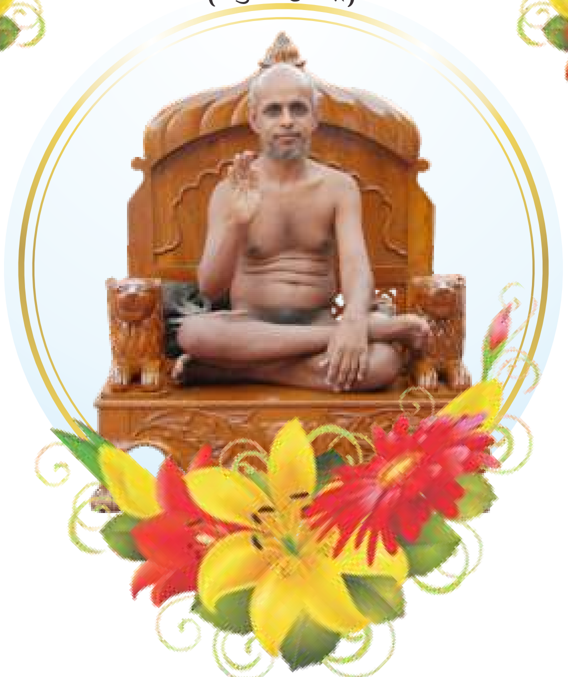

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तुत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

श्री महावीर ग्रंथ अकादमी–पंचम पुष्प

आचार्य सोमकीर्ति एवं ब्रह्म यशोधर

[१६ वीं शताब्दि के पांच प्रतिनिधि कवियों–आचार्य सोमकीर्ति, सांगु, ब्रह्म गुणकीर्ति, भ. यशःकीर्ति एवं ब्रह्म यशोधर के जीवन, व्यक्तित्व एवं कृतित्व के साथ में उनकी २७ कृतियों के मूल पाठों का संकलन]

लेखक एवं सम्पादक

डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल

एम. ए., पी-एच. डी., शास्त्री

प्रकाशक

श्री महावीर ग्रंथ अकादमी, जयपुर

मूल्य 60/-

संरक्षक की ओर से

श्री महावीर ग्रंथ अकादमी का पञ्चम पुष्प "आचार्य सोमकीर्ति एवं ब्रह्म यशोधर" को पाठकों के हाथों में देते हुए हमें अतीव प्रसन्नता है। इस प्रकार अकादमी की २० भागों के प्रकाशन की योजना का २५ प्रतिशत कार्य पूरा हो चुका है। इस पुष्प के साथ अब तक जिन अज्ञात एवं अल्प-ज्ञात हिन्दी जैन कवियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला जा चुका है। उनका विवरण निम्न प्रकार है—

	कवि का नाम	समय	मूल कृतियों की संख्या	भाग
१	महाकवि ब्रह्म रायमल्ल	१६–१७वीं शताब्दी	४	प्रथम
२	भट्टारक त्रिभुवनकीर्ति	,,	२	,,
३	कविवर बूचराज	१६वीं शताब्दी	८	द्वितीय
४	,, छीहल	,,	६	,,
५	,, ठक्कुरसी	,,	१३	,,
६	,, गारवदास	,,	१	,,
७	,, चतुरुमल	,,	२	,,
८	महाकवि ब्रह्म जिनदास	१५वीं शताब्दी	१४	तृतीय
९	भट्टारक रत्नकीर्ति	१७वीं शताब्दी	३७	चतुर्थ
१०	,, कुमुदचन्द्र	,,	६३	,,
११	,, अभयचन्द्र	,,	१	,,
१२	,, शुभचन्द्र	,,	३	,,
१३	,, रत्नचन्द्र	,,	—	,,
१४	,, श्रीपाल	,,	१	,,
१५	,, जयसागर	,,	—	,,
१६	,, चन्द्रकीर्ति	,,	—	,,
१७	,, गणेश	,,	—	,,
१८	आचार्य सोमकीर्ति	१६वीं शताब्दी	४	पञ्चम
१९	कविवर सांगु	,,	१	,,

२०	ब्रह्म गुणकीर्ति	१६वीं शताब्दी	१	पञ्चम
२१	भट्टारक यशःकीर्ति	,,	४	,,
२२	ब्रह्म यशोधर	,,	२६	,,
			१६०	

इस प्रकार १६वीं एवं १७वीं शताब्दी के २८ प्रतिनिधि कवियों का मूल्याङ्कन एवं उनकी छोटी-बड़ी १६० कृतियों का प्रकाशन एवं महत्वपूर्ण उपलब्धि है, जिसके लिए अकादमी के निदेशक एवं प्रधान सम्पादक डॉ० कासलीवाल अभिनन्दनीय हैं। वास्तव में डॉ० कासलीवाल का यही प्रयत्न रहा है कि अज्ञात कोनों में से प्राचीन सामग्री एवं परम्पराओं का अन्वेषण कर उन्हें प्रकाश में लावें। प्रस्तुत ग्रन्थ भी उनकी इसी शुभवृत्ति का सुफल है। प्रस्तुत ग्रंथ के लेखक एवं प्रधान सम्पादक भी डॉ. कासलीवाल ही हैं। वैसे तो वे गत ३५ वर्षों से साहित्यिक कार्यों में संलग्न हैं लेकिन गत ४ वर्षों से तो उनका पूरा समय ही साहित्य देवता के लिए समर्पित है।

पंचम भाग के सम्पादक मण्डल के सदस्यों में डॉ० महेंद्रसागर प्रचंडिया अलीगढ़, श्री नाथूलाल जैन, मुख्य अभियन्ता राजस्थान सरकार, जयपुर एवं श्रीमती डॉ० कोकिला सेठी हैं। तीनों ही विद्वानों ने प्रस्तुत ग्रंथ के सम्पादन में जो परिश्रम किया है उसके लिए हम इनके आभारी हैं। आशा है अकादमी को सभी विद्वानों का भविष्य में भी सहयोग प्राप्त होता रहेगा।

अकादमी की लोकप्रियता में निरन्तर वृद्धि हो रही है। चतुर्थ भाग का विमोचन पूज्य क्षुल्लक रत्न १०५ श्री सिद्धसागर जी महाराज द्वारा भागलपुर में इन्द्रध्वज विधान महोत्सव पर हुआ था और उन्हीं की प्रेरणा से विमोचन समारोह में मैंने स्वयं ने देखा था कि, उपस्थित समाज ने अकादमी की साहित्यिक योजना में अपना पूर्ण सहयोग देने में प्रसन्नता प्रकट की थी। चतुर्थ भाग के प्रकाशन के पश्चात् अ. भा. दि. जैन महासभा के उत्साही अध्यक्ष एवं श्रावक रत्न श्री निर्मलकुमार जी सेठी, सरिया लखनऊ (बिहार) के प्रसिद्ध समाज सेवी श्री महावीर प्रसाद जी सेठी एवं जयपुर के उद्योगपति श्री कमलचन्द जी कासलीवाल ने अकादमी का संरक्षक सदस्य बनने की अतिकृपा की है उसके लिए हम तीनों ही महानुभावों के आभारी हैं। इसी तरह मूडबिद्री के भट्टारक एवं पण्डिताचार्य स्वस्ति श्री चारुकीर्ति जी महाराज ने अकादमी का परम संरक्षक बनने की स्वीकृति दी है। भट्टारक जी महाराज स्वयं साहित्य-प्रेमी, अच्छे वक्ता एवं लेखक हैं। अकादमी को आपके द्वारा जो संरक्षण प्राप्त हुआ है हम उसके लिये पूर्णाभारी हैं। वैसे अकादमी के पाँचों ही प्रकाशन मध्य काल में होने वाले भट्टारकों एवं उनके शिष्य प्रशिष्यों की अभूतपूर्व साहित्यिक सेवा के

परिचायक हैं। वास्तव में डॉ० कासलीवाल ने अपने इन प्रकाशनों द्वारा भट्टारकों के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक योगदान को पुनः प्रकाश में लाकर समाज का प्रशस्त मार्गदर्शन किया है।

चतुर्थ भाग के विमोचन के पश्चात् हम सभी नये उपाध्यक्षों सर्वश्री तिलकचन्द बाकलीवाल, पद्मकुमार जैन नेपालगंज, सम्पतराय अग्रवाल कटक, रतनलाल विनायक्या भागलपुर एवं डॉ० ताराचन्द बख्शी जयपुर का हार्दिक स्वागत करते हैं। सभी उपाध्यक्ष हमारे समाज के जाने माने सज्जन हैं तथा सामाजिक क्षेत्र में इनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। इसी तरह संचालन समिति के सभी माननीय नये सदस्यों एवं विशिष्ट सदस्यों के प्रति आभार प्रकट करता हूं जिन्होंने अपना सहयोग देकर अकादमी को गति प्रदान की है। मैं सर्वश्री माणिकलाल सेठी सुजानगढ़ एवं ताराचंद प्रेमी फिरोजपुर—झिरका का विशेष आभारी हूं जो स्वयं अकादमी के सदस्य बन गये हैं एवं अन्य महानुभावों को भी सदस्य बनाने में अपना पूर्ण सहयोग देते हैं। हम चाहते हैं कि पंचम भाग के प्रकाशन के पूर्व अकादमी की सदस्य संख्या कम से कम ५०० तक पहुंच जाय। आशा है कि इस दिशा में सभी का सहयोग प्राप्त होगा।

पूनमचन्द गंगवाल

झरिया (बिहार)
दिनांक १०-८-८२

सम्पादकीय

वैदिक, बौद्ध और जैन साहित्य मिलकर भारतीय साहित्य के रूप को स्वरूप प्रदान करते हैं। वैदिक साहित्य के लिए वेद, बौद्ध-वाङ्मय के लिए पिटक और जैन साहित्य के लिये आगम शब्द का व्यवहार आरम्भ से ही होता रहा है। सम्पूर्ण आगम को (१) प्रथमानुयोग, (२) करणानुयोग, (३) चरणानुयोग, तथा (४) द्रव्यानुयोग इन चार भागों में विभाजित किया गया है।

प्रथमानुयोग के शास्त्रों में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष अथवा जिनेन्द्र देवों पर आधृत अनेक ज्ञानपूर्ण कथाएँ तथा पुराणों का समावेश है। करणानुयोग के शास्त्रों में कर्म सिद्धान्त और लोक व्यवहार का विशद व्याख्यान है। चरणानुयोग के शास्त्रों में श्रावक तथा यति अर्थात् साधु-संगठन और आचार-संहिता का विशद विधान वर्णित है। द्रव्यानुयोग के शास्त्रों में चेतन-अचेतन, षट्द्रव्यों तथा तत्व लक्षणों का विस्तार पूर्वक विश्लेषण किया गया है।

प्राकृत भाषा अपने अनेक प्रांतीय रूपों को समेटती भारतीय-संस्कृति को शब्दायित करती रही है। मागधी, अर्द्धमागधी, पालि आदि रूपों को ग्रहण करती हुई उसका जो रूप घिस-पिस कर स्थिर हुआ वह अपभ्रंश के नाम से समादृत हुआ। अपभ्रंश के वक्ष से पुरानी हिन्दी ब्रजभाषा का आदिम रूप उगा—अंकुरित और पल्लवित हुआ। इस प्रकार उकार बहुल ब्रजभाषा हिन्दी का आदिम रूप अपभ्रंश के क्रोड से उत्पन्न हुआ। संस्कृत हिन्दी की जननी है, यह धारणा भाषा-विज्ञान की दृष्टि से चिरञ्जीवी नहीं रह सकी।

राजस्थानी डिंगल और पिंगल स्वरूपा हिन्दी विविध कालों में अपने—अपने समुदाय और समाज के स्वरूप को अभिव्यक्ति देती रही है। राज्याश्रित कवियों द्वारा राज—सत्ता और महत्ता का सातिशय वर्णन शब्दायित हुआ। कहीं कहीं अमुक-अमुक काव्य—धाराओं से अनुप्रेरित कवियों ने तत्सम्बन्धी संकीर्ण विचारणाओं को व्यक्त किया है। इस प्रकार काल-क्षेत्र को ध्यान में रखते हुए हिन्दी साहित्य का कलेवर वृद्धङ्गत होता गया।

पदयात्री संतों की अपनी एक परम्परा रही है। जैन सन्त इस परम्परा के नायक और उन्नायक रहे हैं। जैन मुनियों, आचार्यों तथा सिद्ध-साधकों, मनीषियों ने देश के प्रधान-उपप्रधान तथा क्षेत्रीय भाषा और उपभाषाओं में जनकल्याणकारी

विपुल साहित्य की आगम के अनुकूल रचना की है, फलस्वरूप इसमें शुभ, सत्य और सुखद सम्भावनाओं का समीकरण आरम्भ से ही परिलक्षित है। जैन साहित्य जिनवाणी संग्रहों में सुरक्षित रहा जिसके स्वाध्याय की नियमित परम्परा जैन समुदाय में विद्यमान रही। देश में अनेक 'स्वाध्याय शैलियाँ' स्थिर हुयीं जिनके द्वारा शास्त्र-प्रवचन, शंका समाधान, तत्व चर्चा आदि दृष्टियों से साहित्य का अध्ययन-अनुशीलन चलता रहा।

कालान्तर में जब साहित्यिक इतिहास रचे गये तब हिन्दी भाषा में रची गई कृतियों की खोज-खबर ली गई। शक्ति और सामर्थ्यानुसार जिन-जिन साहित्याचार्यों ने काम किये वे अनुशंसित हुए परन्तु जैन हिन्दी साहित्य को प्रकाश में लाने और उसे हिन्दी साहित्य के सिंहासन पर प्रतिष्ठित करने-कराने का श्रेय महापण्डित राहुल सांकृत्यायन, नाथूराम प्रेमी, बाबू कामताप्रसाद जैन, मुनिश्वर जिन विजय जी महाराज आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, पंडित अगरचन्द नाहटा तथा डॉ० रामसिंह तोमर आदि अनेक अनुसंधित्सुओं और साहित्य-साधकों को रहा है परिणामस्वरूप आज साहित्यिक इतिहास नये सिरे से रचे जाने लगे हैं।

जैन कवियों ने हिन्दी में आरम्भ से ही लिखना आरम्भ कर दिया और बड़ी विशेषता यह है कि अभिव्यक्ति के अनेक रूपों को स्थिर करने में इन कवियों ने अगुवा बनकर जिस सृजनात्मक भूमिका का निर्वाह किया वह विद्वत् समाज में आज भी समादृत है। भाव-सम्पदा, भाषा अलंकार छन्द, व्याकरण, काव्य रूप तथा शैली शिल्प आदि अनेक काव्य शास्त्रीय दृष्टि से यदि जैन हिन्दी साहित्य को अन्वित और और समन्वित नहीं किया गया तो हिन्दी साहित्य कभी पूर्ण नहीं कहा जा सकता, यह वस्तुतः गवेषणात्मक सत्य है।

अनेक अब्दियों और दशाब्दियों पूर्व जब मेरी पहले-पहल अनुसन्धान की दृष्टि से राजस्थानी-यात्रा प्रारम्भ हुई थी उस समय हिन्दी जैन साहित्य को उजागर करने का प्रश्न सामने आया था। अनेक शोधार्थियों की समस्या और उसके समाधान पर आदरणीय प्रियवर डॉ० कस्तूरचन्द जी कासलीवाल, पं० अनूपचन्द जी शास्त्री आदि जयपुरिया साहित्यिक खोजियों से विचार-विमर्श हुए और तय हुआ कि लुप्त विलुप्त भांडारों में भरी पड़ी सामग्री को प्रकाशित कराया जाय। दशाब्दियों बाद यह सौभाग्य बन पाया कि श्री महावीर ग्रंथ अकादमी के माध्यम से हिन्दी साहित्य को इस रूप में व्यवस्थित और प्रकाशित किया जा रहा है। हर्ष का विषय है कि मुझ जैसे अनेक भाइयों के निर्देशन में अनेक विश्वविद्यालयों के अधीन, पी-एच० डी० उपाधि के लिए हिन्दी जैन कवियों पर अध्ययन हुआ है और कार्य चल रहा है।

इस कार्य सम्पादन में भाई कासलीवाल जी को कितने पापड़ बेलने पड़े हैं, इसकी प्रतीति मुझे है, वस्तुतः विचारणीय बात है। वे इस भागीरथ काम को पार लगा रहे हैं वस्तुतः बहुत बड़ी बात है।

सामाजिक श्रेष्ठियों को इस दिशा में सक्रिय सहयोग देना चाहिए ताकि जिनेन्द्र वाणी—हिन्दी साहित्य धारा में भी समवेत होकर कल्याणकारी मार्ग का प्रवर्तन कर सके ।

अकादमी के प्रस्तुत पंचम पुष्प में सोलहवीं शताब्दी के समर्थ कविमनीषी सोमकीर्ति, ब्रह्म यशोधर, सांगु, गुणकीर्ति तथा यशःकीर्ति का प्रामाणिक व्यक्तित्व तथा कृतित्व परक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । हिन्दी के समकालीन गुरु नानक, कबीरदास, चरणदास, अनन्तदास तथा पुरुषोत्तम आदि अनेक कवि उल्लेखनीय हैं जिनके साथ इन कवियों का तुलनात्मक तथा साहित्यिक मूल्याङ्कन होना चाहिए । मान्य शोध—निदेशक-बन्धुओं से निवेदन है कि वे कतिपय मेधावी शोधार्थियों का चयन कर जैन कवियों के साहित्य का स्तरीय अङ्कन और मूल्याङ्कन प्रस्तुत करावें ।

इस प्रकार प्रस्तुत पुष्प के प्रकाशन की आवश्यकता-उपयोगिता असंदिग्ध है । आशा ही नहीं पूरा भरोसा है कि श्री महावीर ग्रंथ अकादमी की यह पुष्प-प्रकाशन की परम्परा चिरञ्जीवी रहेगी और हिन्दी साहित्यिक के कलेवर को अभिवृद्ध करेगी तथा साहित्यक कुलकरों की कुल-कीर्ति को सुरक्षित रख सकेगी । हम इस मूल्यवान योजना के सतत् साफल्य की हार्दिक मंगल कामना करते हैं ।

आगरा रोड
अलीगढ़
२९.७.८२

महेन्द्र सागर प्रचंडिया
कृते सम्पादक मण्डल

लेखक की कलम से

राजस्थानी एवं हिन्दी भाषा की पाण्डुलिपियों के लिये राजस्थान के जैन ग्रन्थागार विशाल भण्डार हैं जिनमें सैंकड़ों महत्वपूर्ण, अज्ञात एवं अल्प–ज्ञात कृतियों का संग्रह मिलता है। इस दृष्टि से जैनाचार्यों, भट्टारक गण एवं विद्वानों की साहित्यिक सेवाएं अत्यधिक उल्लेखनीय है। जिन्होंने विगत ६००–७०० वर्षों से अपनी सैंकड़ों कृतियां साहित्यिक जगत् को भेंट करके अपने हिन्दी प्रेम को प्रदर्शित किया है और आज भी कर रहे हैं। प्रस्तुत पञ्चम भाग में १६ वीं शताब्दि के पांच ऐसे ही कवियों को लिया गया है जो राजस्थानी/हिन्दी के लिये समर्पित रहे हैं तथा जिनका व्यक्तित्व एवं कृतित्व दोनों ही विद्वानों के लिए अज्ञात अथवा अल्पज्ञात रहा है।

सोमकीर्त्ति १६ वीं शताब्दि के प्रथम चरण के कवि थे। राजस्थानी उनकी प्रिय भाषा थी जिसमें उन्होंने दो बड़ी एवं पांच छोटी रचनायें निबद्ध की थी। 'गुरु नामावली' में उन्होंने राजस्थानी गद्य का प्रयोग करके गद्य साहित्य की लेखन परम्परा को बहुत पीछे ला पटका है। राजस्थानी/हिन्दी साहित्य के इतिहास के लिये गुरु नामावली एक महत्वपूर्ण कृति है। संवत् १५१८ (सन् १४६१) में निर्मित यह कृति गद्य पद्य मिश्रित है। यह संस्कृत की चम्पू कृति के समान है। कवि ने अपने गद्य भाग को बोली लिखा है जिसमें यह स्पष्ट है ऐसी ही भाषा उस समय बोलचाल की भाषा थी और उसे बोली कहा जाता था। बोलचाल की भाषा के लोकप्रिय शब्द कुण, आपणा, बोलता, ढीली, नयर, पालखी, इसी, इणी, का खूब प्रयोग हुआ है। सोमकीर्त्ति अपने युग के प्रभावशाली भट्टारक थे। काष्ठासंघ की भट्टारक गादी के सर्वोपरि साधु थे। साथ में वे भाषा शास्त्री भी थे। संस्कृत कृतियों के साथ ही राजस्थानी में कृतियों का लेखन उनकी राजस्थानी के प्रति गहरी रुचि का सफल है।

सांगु इस काल के दूसरे कवि थे। अभी तक इनकी एक ही कृति 'सुकोसल राय चुपई' उपलब्ध हो सकी है लेकिन यह एक ही कृति कवि की काव्य प्रतिभा परिचय के लिये पर्याप्त है। यह एक लघु प्रबन्ध काव्य है जिसमें काव्य–गत सभी लक्षण विद्यमान है काव्य पूरा रोमाञ्चक है जिसमें कभी विवाह, कभी युद्ध, कभी

गृह त्याग, कभी तपस्या एवं कभी उपसर्ग के समय का वर्णन मिलता है ।

महाकवि ब्रह्म जिनदास के शिष्य ब्रह्म गुणकीत्ति इस पुष्प के तीसरे कवि हैं जिनका परिचय भी साहित्य जगत् को प्रथम बार मिल रहा है । रामसीतारास एक खण्ड काव्य है जो राजस्थानी भाषा की अत्यधिक सुन्दर कृति है । महाकवि तुलसीदास के १४० वर्ष पूर्व रचित यह एक लघु रामायण है जो अपने गुरु महाकवि ब्रह्म जिनदास के रामरास का मानों लघु संस्करण है । रामसीतारास भाव, भाषा, शैली एवं विषय की दृष्टि से उत्तम कृति है ।

चौथे कवि भ. यशःकीर्ति हैं जिनके दो पद एवं दो लघु रचनायें प्रस्तुत ग्रंथ में दिये गये हैं ।

ब्रह्म यशोधर पांचवें कवि हैं जो भ. यशःकीर्ति के प्रशिष्य एवं विजयसेन के शिष्य थे । भ. यशोधर अपने युग के जबरदस्त प्रभावशाली कवि थे जिनका समस्त जीवन साहित्य सेवा में समर्पित रहता था । यद्यपि वे भट्टारक नहीं थे किन्तु उनकी ख्याति एवं सम्मान किसी भट्टारक में कम नहीं था । साहित्य रचना के क्षेत्र में तो वे अपने गुरु से भी आगे थे । उन्होंने चुपई संज्ञक काव्य लिखा, नेमिनाथ, वासुपूज्य एवं मल्लिनाथ पर स्तुति परक गीत लिखे, अपने गुरु की प्रशंसा में विजयकीत्ति गीत लिखा जिसे एक ऐतिहासिक गीत भी कहा जा सकते हैं, एवं विभिन्न राग रागनियों में नेमि राजुल से सम्बन्धित पद लिखे । बलिभद्र चुपई एक ऐसा प्रबन्ध काव्य है जिसमें कवि की काव्य प्रतिभा के स्थान २ पर दर्शन होते हैं । नेमिनाथ गीत में कवि ने गागर में सागर भरने जैसा कार्य किया है । वर्णन इतना रोचक है कि पढते ही कवि के प्रति श्रद्धा के भाव जाग्रत होते हैं । भ. यशोधर द्वारा अपनी कृतियों में शब्दों का चयन भी पूर्ण विद्वत्ता के साथ किया है । कवि ने नेमिनाथ गीत में पान बीडी का उल्लेख किया है । विवाह में पानों का बीड़ा देकर बरातियों का स्वागत करने की प्रथा है जो १५वीं शताब्दि में भी यथावत थी । इसी तरह 'लू' शब्द के लिये 'लूय' का प्रयोग किया है । लूय शब्द ठेठ राजस्थानी भाषा का शब्द है ।

भाषा के अध्ययन की दृष्टि से इन पांचों ही कवियों की रचनायें महत्वपूर्ण हैं । जैन कवि अपनी रचनायें सरल बोलचाल की भाषा में निबद्ध करते रहे हैं । यद्यपि वे काव्य गत लक्षणों के आधार पर रचनायें निबद्ध करने में विश्वास नहीं रखते थे लेकिन फिर भी उनकी कृतियों राजस्थानी हिन्दी की अमूल्य कृतियां है

---

१. चोवा चंदन छडा फूलडा रे पान बीडीय अमूल/सा./४०/पृष्ठ संख्या २०१.

२. उन्हालि लू ऊन्ही वाय, तपन ताप तनु सह्यु न जाय ।। १७२/ ,, १६१.

और उनमें वे सभी तत्त्व उपलब्ध होते हैं जो किसी एक काव्य में मिलने चाहिये।

प्रस्तुत पुष्प में पांच कवियों की अब तक उपलब्ध सभी ३७ कृतियों के पाठ दिये गये है जिनमें से अधिकांश कृतियां प्रथम बार सामने आयी हैं। वास्तव में जैन ग्रंथागारों में राजस्थानी/हिन्दी ने अभी तक सैंकड़ों कृतियां हैं जिनके अस्तित्व का हमें पता नहीं है परिचय मिलना तो बहुत दूर की बात है। राजस्थान एवं गुजरात के शास्त्र भण्डारों में इन पांच कवियों की और भी कृतियां मिल सकती है।

आभार

पुस्तक के सम्पादक में डा. महेन्द्रसागर जी प्रचंडिया अलीगढ़, भाषा–शास्त्री श्री नाथूलाल जी जैन एडवोकेट जयपुर एवं श्रीमती डा. कोकिला सेठी का जो सहयोग मिला है उसके लिये में उनका पूर्ण आभारी हूं। डा. प्रचंडिया जी ने सम्पादकीय लिखा है जो कितने ही दृष्टियों में अत्यधिक महत्वपूर्ण है। मैं अकादमी से सम्पादक मंडल के प्रमुख सदस्य एवं सहयोगी पं. अनूपचन्द जी न्यायतीर्थ का भी आभारी हूँ जिनका मुझे साहित्यिक कार्यों में पूर्ण सहयोग मिलता रहता है।

डा. कस्तूर चन्द कासलीवाल

अमृत कलश; किसान मार्ग
बरकत कालोनी
टोंक फाटक जयपुर,

८ अगस्त १९८२

विषय सूची

क्रम संख्या	पृष्ठ संख्या
१. श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी का परिचय	
२. संरक्षक की ओर से	
३. सम्पादकीय	
४. लेखक की कलम से	
५. पूर्व पीठिका	१–२
६. आचार्य सोमकीर्ति	३–३२
कृतियां : (१) श्रेपनक्रिया गीत	२८
(२) आदिनाथ विनती	२९
(३) मल्लिजिन गीत	३०–३२
(४) यशोधर रास	३४–७३
(५) गुरु नामावली	७४–८६
(६) रिषभनाथ की धूलि	८७–९१
(७) लघु चितामणी पार्श्वनाथ जयमाल	९२
७ कविवर सांगु	९३–१०३
(८) सुकोसलराय चुपई	१०४–११९
८. ब्रह्म गुणकीर्ति	१२०–१२९
(९) रामसीतारास	१३०–१५६
९. भट्टारक यशःकीर्ति	१५७–१५९
(१०-११) यशःकीर्ति के पद	१५९–९०
(१२) योगी वाणी	१९१
(१३) चौबीस तीर्थंकर भावना	१९१–१९३

१०. ब्रह्म यशोधर १६४–१७६

(१४) बलिभद्र चपई १७७–१८३

(१५) विजयकीर्ति गीत १८४–१८५

(१६) वासुपूज्य गीत १८५–१८६

(१७) वैराग्य गीत १८७

(१८-१९) नेमिनाथ गीत (२) १८७–२०२

(२०) मल्लिनाथ गीत २०३–२०४

(२१-३७) पद साहित्य (१७ पद) २०४–२१३

११. अनुक्रमणिकाएं २१४

पूर्व पीठिका

इस भाग में संवत् १५१५ से १५६० तक होने वाले पांच हिन्दी जैन कवियों का जीवन, इतिहास एवं उनका मूल्यांकन प्रस्तुत किया जा रहा है। ये कवि हैं आचार्य सोमकीर्ति, सांगु, यशःकीर्ति, गुणकीर्ति, एवं ब्रह्म यशोधर। इसके पूर्व दूसरे भाग में हमने संवत् १५४० से १६०० तक के प्रतिनिधि कवियों—बूचराज, छीहल, ठक्कुरसी, चतुरुमल एवं गारवदास का जीवन परिचय एवं उनकी कृतियों का मूल्यांकन प्रस्तुत किया था साथ ही में उन कवियों की सभी छोटी बड़ी कृतियों के के पाठ भी दिये थे जिससे सभी पाठक गण उसके काव्यों का रसास्वादन कर सके।

संवत् १५१५ से १५६० तक के काल को हिन्दी साहित्य के इतिहास में दो भागों में विभक्त किया है। मिश्रबन्धु विनोद ने संवत् १५६० तक के काल को आदि-काल माना जाता है तथा १५६१ से आगे वाले काल को अष्टछाप कवियों के नाम से सम्बोधित किया है। रामचन्द्र शुक्ल ने भी इस काल का अष्टछाप नामकरण किया है। लेकिन वास्तव में यह काल भक्ति युग का आदिकाल था। एक ओर गुरु नानक एवं कबीर जैसे संत कवि अपनी कृतियों से जन-जन को अपनी ओर आकृष्ट कर रहे थे तो दूसरी ओर आचार्य सोमकीर्ति, भट्टारक यशः कीर्ति, सांगु एवं ब्रह्म यशोधर जैसे हिन्दी भाषा के जैन कवि अपनी कृतियों के माध्यम से समाज में अर्हद् भक्ति, पूजा, एवं प्रतिष्ठाओं का प्रचार कर रहे थे। समाज में भट्टारक परम्परा की नींव गहरी हो रही थी। उनकी जगह-जगह गादियां स्थापित होने लगी थी। भट्टारक गण एवं उनके शिष्य भी अपने आपको भट्टारक के साथ-साथ मुनि, आचार्य, उपाध्याय, एवं ब्रह्मचारी सभी नामों से संबोधित करने लगे थे। साथ ही में वे सब संस्कृत के साथ-साथ राजस्थानी एवं हिन्दी भाषा को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बना रहे थे। देश पर मुसलमानों का राज्य था जो अपनी प्रजा पर मनमाने जुल्म ढा रहे थे। ऐसी स्थिति में भी भट्टारकों एवं उनके शिष्यों ने समाज के मानस को बदलने के लिए तत्कालीन लोक भाषा में छोटे बड़े रास काव्यों, का पद एवं स्तवनों का निर्माण किया। दूसरे भाग में निर्दिष्ट कवियों के अतिरिक्त इन ४५ वर्षों में १५ से भी अधिक जैन एवं जैनेतर कवि हुए जिनमें कुछ के नाम निम्न प्रकार है—

जैन कवि		जैनेतर कवि	
१. आचार्य सोमकीर्ति	सं. १५१८	१. गुरुनानक	सं. १५२६–१५९६
२. कनककलशसूरि	सं. १५३०	२. कबीरदास	,, १५७५ से पूर्व
३. उपाध्याय ज्ञान सागर	सं १५३१	३. चरणदास	,, (१५३६)
४. भट्टारक यशःकीर्ति	सं १५३८	४. अनन्तदास	,, (१५५८)
५. ब्रह्म यशोधर	सं १५८५ से पूर्व	५. हरिराम	,, (१५५८)
६. सांगु कवि	सं. १५५०	६. पुरुषोत्तम	,, (१५५८)
७. गुणकीर्ति	सं १५२०		
८. संवेग सुन्दर उपाध्याय	सं. १५४८		
९. वाचक मतिशेखर			

गुरु नानक एवं कबीरदास से सभी परिचित हैं। ये कवि भारतीय जन मानस के कवि बन चुके हैं। अनन्तदास कबीर के शिष्यों में से थे जिन्होंने रैदास की परिचई कबीरदास की परिचई एवं त्रिलोचनदास की परिचई जैसे काव्यों की रचना की। हरिराम की गीताभानु प्रकाश (सं १५५८) तथा पुरुषोत्तम की धर्माश्वमेध (सं. १५५८) रचनायें मिलती हैं। इसी समय कुतवन शेख ने मृगावती तथा सेन कवि ने भी अपनी कविताओं के माध्यम से भक्ति रस की धारा को प्रवाहित किया।[1]

जैन कवियों में ज्ञानसागर ने संवत् १५३१ में श्रीपालरास की रचना की थी[1] इसकी एक प्रति राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर में उपलब्ध है। संवेगसुन्दर उपाध्याय ने संवत् १५४८ में सारसिखामन रास की रचना की थी तथा रामचन्द्र सूरि ने रजर्षि चरित की संवत् १५५० में रचना की थी। यह समय महाकवि ब्रह्म जिनदास से प्रभावित युग था जिन्होंने पचास से भी अधिक रासकाव्यों की रचना करके एक नया कीर्तिमान स्थापित किया था। इसलिए अधिकांश जैन कवि उन्हीं के पद चिह्नों पर चलकर रास नामान्तक काव्यों की रचना करने में लगे हुए थे।

---

१. मिश्र बन्धु विनोद-प्रथम भाग-पृष्ठ संख्या 111–113

आचार्य सोमकीर्ति

आचार्य सोमकीर्ति इस काल के प्रमुख प्रतिनिधि कवि थे । वे अपने युग के उद्भट विद्वान प्रमुख साहित्य सेवी एवं सर्वोच्च सन्त थे । वे योगी थे । आत्म साधना में तल्लीन रहते और अपने शिष्यों एवं अनुयायियों को उस पर चलने का उपदेश देते थे । वे प्रवचन करते, साहित्य सर्जन करते एवं अपने शिष्यों को साहित्य निर्माण करने की प्रेरणा देते । सोमकीर्ति प्राकृत, संस्कृत, राजस्थानी, गुजराती एवं हिन्दी के प्रकांड विद्वान थे । उन्होंने संस्कृत एवं हिन्दी दोनों ही भाषाओं को अपनी रचनाओं से उपकृत किया । उनका राजस्थान एवं गुजरात दोनों ही प्रमुख क्षेत्र रहे तथा जीवन भर इन क्षेत्रों में विहार करके जन-जन के जीवन को आत्म-साधना एवं अर्हद् भक्ति की ओर मोड़ते रहे । उनकी प्रेरणा से कितने ही मन्दिरों का निर्माण संपन्न हुआ । बीसों पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठाएं उनके निर्देशन में संपन्न हुई तथा हजारों जिन प्रतिमाएं प्रतिष्ठित होकर राजस्थान एवं गुजरात के विभिन्न मन्दिरों में विराजमान की गई । आचार्य सोमकीर्ति श्रमण संस्कृति, साहित्य एवं शिक्षा के महान् प्रचारक थे । ऐसे सन्त पर किस समाज एवं राष्ट्र को गर्व नहीं होगा ।

लक्ष्मीसेन के दो शिष्य थे । एक भीमसेन एवं दूसरे धर्मसेन । दोनों ने ही अपनी अलग-अलग भट्टारक गादियां स्थापित की थी । इन्हीं भीमसेन के सोमकीर्ति प्रमुख शिष्य थे । काष्ठासंघ की एक गुरुनामावली में भीमसेन का परिचय निम्न प्रकार दिया गया है :—

> श्री लक्ष्मसेन पट्टोधरण पावपंक छिपि नहीं ।
> जे नरह नरिंदे वन्दियि, श्री भीमसेन मुनिवर सही ।।2।।
> सुरगिरि सिरि कौ चड़ पाउकरि प्रतिकलवंतो
> कोवि रणीयर तीर, पुहत जय तरंतो ।
> कोई आयास प्रमाण, हत्थ करि गाहि कमंतो ।।
> कट्ठसंघ संघगुण परिलहि दुविह कोईलहंतो
> श्री भीमसेन पट्टह धरण गच्छ सिरोमणि कुलतिलो
> जाणंति सुजाणह जाण नर श्री सोमकीर्ति मुनिवर भलौ ।।3।।

सोमकीर्ति भीमसेन के कब संपर्क में आये तथा प्रारम्भ में उनके पास कितने वर्षों तक रहे इसकी जानकारी नहीं मिलती । इसके अतिरिक्त सोमकीर्ति के माता-पिता, जन्मस्थान, एवं शिक्षा-दीक्षा के बारे में भी कोई इतिहास उपलब्ध नहीं होता । लेकिन इतना अवश्य है कि उन्हें संवत् १५१८ में काष्ठासंघ नन्दीतट गच्छ की भट्टारक गादी पर अभिषिक्त किया गया था । उस दिन आषाढ़ सुदी अष्टमी थी । वे

८७ में भट्टारक थे।[1] उनका पट्टाभिषेक गुजरात के सोजित्रा नगर में शांतिनाथ के मन्दिर में हुआ था। भट्टारक श्री भूषण ने सोजित्रा का वर्णन करते हुए लिखा है—

श्रीगुर्जरे प्रस्ति पुरं प्रसिद्ध सोजित्र नमाभिधमेवसारं[2]। सोजित्रा जैनधर्म एवं संस्कृति का केन्द्र था तथा काष्ठा संघ के भट्टारकों की यहां गादी थी। सोमकीर्ति संवत् १५१८ से प्रकाश में आये और अपने अन्तिम जीवन तक समाज के जगमाते नक्षत्र रहे। श्री जोहरापुरकर ने अपने भट्टारक सम्प्रदाय में इनका समय संवत् १५२६ से १५४० तक दिया है जो इस पट्टावली से मेल नहीं खाता। संभवतः उन्होंने यह समय इनकी संस्कृत रचना सप्तव्यसनकथा के आधार पर दिया मालुम देता है क्योंकि कवि ने इसे संवत् १५२६ में समाप्त की थी।

सोमकीर्ति ने भट्टारक गादी पर बैठते ही गुजरात एवं राजस्थान के विभिन्न भागों में विहार किया तथा जन-जन से सम्पर्क करके उन्हें अहिंसा धर्म के परिपालन पर जोर दिया। उस समय देहली पर लोदी वंश का राज्य था। बहलोल लोदी दिल्ली का सुलतान था। ये मुस्लिम शासक इतने धर्मान्ध एवं असहिष्णु थे कि उन्हें मन्दिरों, मूर्तियों एवं ग्रन्थों के विध्वन्स के अतिरिक्त कुछ भी अच्छा नहीं लगता था। हिन्दुओं एवं जैनों में इतना भय व्याप्त था कि उन्हें अर्हद् भक्ति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं दिखता था। भट्टारक उनके संरक्षक थे जिनका सम्बन्ध इन बादशाहों से भी अच्छा था। भट्टारक सोमकीर्ति के लिये ब्रह्म श्रीकृष्णदास ने लिखा है कि वे "यवनपतिकरांभोज संपूजितांध्रि थे अर्थात् भट्टारक सोमकीर्ति का यवन बादशाह भी सम्मान करते थे। इससे सोमकीर्ति के प्रभाव एवं यश में और भी वृद्धि हो गई। पहिले सन्त फिर प्रकाण्ड विद्वान, वक्ता और फिर बादशाह पर हाथ। वे तो सर्वगुण सम्पन्न हो गये। वे अत्यधिक प्रभावशाली थे। जहां विहार होता वहीं उनके भक्त बन जाते। साहित्य रचना वे स्वयं करते और समाज से व्रत विधान एवं प्रतिष्ठा विधान कराते। राजस्थान के मन्दिरों में उनके द्वारा प्रतिष्ठित पचासों मूर्तियां मिलती हैं। मूलसंघ के क्षेत्र में काष्ठासंघ का इतना जबरदस्त प्रभाव उनके स्वयं के व्यक्तित्व का सुपरिणाम था।

---

१. पनरहसिअठार मास आषाढह जाणु
   शुक्रवार पंचमी बहुल पक्षह परवाणु।
   पुव्वाभद्द नक्षत्र श्री सोमकीर्ति पुरवरि
   सन्यासी पर पाट तणु प्रबन्ध जिणि परि॥

प्रतिष्ठा विधान

संवत् १५१८ में वे भट्टारक पद पर आसीन हुए। इसके पश्चात् उन्होंने देश में पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठाएं सम्पन्न करवाने में रुचि ली।

डूंगरपुर जिले के सुरपुर (सुर्यपुर) के मन्दिर में शीतलनाथ स्वामी की ४०''×४८'' अवगाहना वाली श्याम पाषाण की भट्टारक सोमकीर्ति द्वारा संवत् १५२२ में प्रतिष्ठित प्रतिमा है। इस प्रतिष्ठा में आचार्य श्री वीरसेन उनके सहायक थे तथा प्रतिष्ठा कराने वाले पंडित पदमा, समधर, खेड्या सा. लक्ष्मा भीमा आदि श्रावक थे। राजस्थान में यह प्रथम मूर्ति है जो सोमकीर्ति द्वारा प्रतिष्ठित प्राप्त हुई है।[1]

संवत् १५२५ में इन्हीं के द्वारा प्रतिष्ठित जयपुर के समीप जयसिंहपुरा खोर के मन्दिर में भगवान पार्श्वनाथ की श्वेत पाषाण की प्रतिमा है। जयसिंहपुरा खोर प्राचीन समय में जैनों का प्रसिद्ध केन्द्र था। पहाड़ियों के मध्य में स्थित होने से कारण यह साधुओं के लिए चिन्तन मनन का अच्छा केन्द्र था। जयपुर का क्षेत्र मूल-संघ के भट्टारकों का गढ़ रहा है। इसलिए काष्ठासंघ के भट्टारकों द्वारा प्रतिष्ठित मूर्ति को विराजमान करना सोमकीर्ति एवं उनके शिष्यों के प्रभाव को सूचित करता है।

इसके पश्चात् संवत् १५२७ वैशाख सुदी ५ को इन्हीं भट्टारक द्वारा प्रतिष्ठित चौबीसी की प्रतिमा जयपुर के सिरमोरियों के मन्दिर में एवं दि० जैन मन्दिर संभवनाथ उदयपुर में विराजमान हैं। दोनों चौबीसियों में आदिनाथ स्वामी की मूलनायक प्रतिमा है। यह प्रतिष्ठा नरसिंहपुरा जातीय श्रावक द्वारा सम्पन्न करवायी गयी थी। आचार्य वीरसेन भट्टारक सोमकीर्ति के सहयोगी थे।[2]

---

१. संवत् १५२२ वर्षे पौष सुदी ५ तिथौ श्री काष्ठासंघे भट्टारक सोमकीर्ति प्रतिष्ठितं श्री शीतलनाथ बिम्बं पंडित पदमा समधर खेड्या सा० लक्षमा भीमा कारापितं शिष्य आचार्य श्री वीरसेन युक्तः।

२. संवत् १५२७ वर्षे वैशाख बदी ५ गुरौ श्री काष्ठासंघे नन्दीतटगच्छे विद्यागणे भट्टारक श्री सोमकीर्ति आचार्य श्री वीरसेनयुग के प्रतिष्ठितं नरसिंहपुरा जातीय पडनहरगोत्रे सा. मोहनपी भार्या तेजु पुत्र ५ कडुआ भार्या २ छाछुआ, रुपा। भार्या रुपा पुत्र भाऊ पुत्र जुठउ नांदू पुत्र २ संवरु। सी. हलुवी भार्या लक्ष्मी पुत्र सरवण सा. सुदरा भार्या भासु मो. सहद्वराम भार्या लालू साकडआ, खेमाआ कावण श्री आदिनाथ बिम्बं करापितं।

भट्टारक सोमकीर्ति ने संवत् १५३३ फागुण शुक्ला ७ बुधवार को फिर एक पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा का नेतृत्व किया। जयपुर के ठोलियों के मंदिर में भगवान पार्श्वनाथ की धातु की उक्त पञ्चकल्याणक में प्रतिष्ठित मूर्ति विराजमान है।[1] इसके एक वर्ष पूर्व संवत् १५३२ में भी वीरसेन सूरि के साथ एक शीतलनाथ की मूर्ति का प्रतिष्ठा करवायी थी।[2]

संवत् १५३५ माघ सुदी ५ को सोमकीर्ति अहमदाबाद गये। वहां विशाल स्तर पर ५२ जिन बिम्बों की प्रतिष्ठा की गयी। इस प्रतिष्ठा में भी सोमकीर्ति के साथ आचार्य वीरसेन और उनके शिष्य ब्र. नाना प्रमुख थे। प्रतिष्ठा कराने वाले थे प्रागवाट जातीय..........राणीसुत जोगदास।[3]

यद्यपि भट्टारक सोमकीर्ति का काल मुस्लिम काल था जिसमें मन्दिर एवं मूर्ति को तोड़ना जिहाद समझा जाता था लेकिन सोमकीर्ति का अपना प्रभाव था। वे श्रावकों के लिये रक्षक का कार्य करते थे तथा धार्मिक विधि विधानों को बड़े ठाट से सम्पन्न कराया करते थे। संवत् १५३६ में इन्होंने दो प्रतिष्ठाओं को अपना आशीर्वाद प्रदान किया। सर्व प्रथम वैशाख सुदी १० बुधवार को चतुर्विंशति तीर्थंकर प्रतिमा की प्रतिष्ठा करायी इसमें प्रतिष्ठाकारक थे हूंबड जातीय वध गोत्र वाले गांधी भूपा भार्या राज सुत गांधीमना। मनागांधी की धर्मपत्नी का नाम काऊ था तथा पुत्र एवं पुत्र वधु का नाम रडा एवं जाडिकी था। वर्तमान में चौबीसी की प्रतिमा जयपुर के पाण्डे लूणकरण जी के मन्दिर में विराजमान है। जयपुर के पहिले यह प्रतिमा संभवतः आमेर में होगी। इससे यह पता चलता है कि बागड प्रदेश में सम्पन्न इस प्रतिष्ठा में आमेर, सांगानेर के जैन बन्धु भी सम्मिलित हुए थे। इस प्रतिष्ठा में भी भट्टारक सोमकीर्ति के प्रमुख शिष्य आचार्य वीरसेन साथ थे। इसी वर्ष दूसरी प्रतिष्ठा माघसुदी १५ गुरुवार को नरसिंह जातीय सापडिया

---

१. संवत् १५३३ वर्षे फागुण शुक्ला ७ बुधे श्री काष्ठासंघे नंद्याम्नाये भ. भीमसेन तत्पट्टे भ. श्री सोमकीर्ति प्रणमति।

२. संवत १५३२ वर्षे वैसाख सुदि ५ रवौ काष्ठासंघे नंदीतट गच्छे भ. श्री भीमसेन तत्पट्टे सोमकीर्ति आचार्य श्री वीरसेनसूरी युक्त प्रतिष्ठितं नरसिंह जातीय बोरडेक गोत्रे चापा भार्या परमू। भट्टारक सम्प्रदाय–पृष्ठ २९५

३. संवत् १५३५ वर्षे माघसुदी ५ गुरौ श्री काष्ठासंघे नंदितट गच्छे विद्यागणे भट्टारक श्री भीमसेन तत्पट्टे भ. श्री सोमकीर्ति शिष्य आचार्य श्री वीरसेन युक्तैः प्रतिष्ठितं अहमदाबाद वास्तव्ये श्री प्रागवाट जातीय.......... राणी सुत जोगदासेन आचार्य श्री वीरसेन।

गोत्र वाले साह खेभारा भांभू के पुत्र सीवा ने सम्पन्न करायी थी। नरसिंहपुरा जाति प्रतापगढ़ की ओर रहती है। इसलिए सोमकीर्ति ने उधर ही किसी स्थान पर यह प्रतिष्ठा सम्पन्न करायी होगी। इस प्रतिष्ठा में उनके शिष्य वीरसेन प्रमुख थे। चौबीसी की एक प्रतिमा जयपुर के ही चौधरियों के मन्दिर में विराजमान है। चौबीसी में श्रेयान्स नाथ स्वामी की मूलनायक प्रतिमा है।[5]

प्रतिष्ठाओं का यह क्रम बराबर चलता रहा। भट्टारक सोमकीर्ति ने अपने जीवन में कितनी प्रतिष्ठाएं सम्पन्न करायी इसकी निश्चित संख्या बतलाना तो कठिन है क्योंकि राजस्थान के अभी सैंकड़ों मंदिर ऐसे हैं जिनके मूर्ति लेखों पर कार्य नहीं हो सका है लेकिन इतना अवश्य है कि अपने २५ वर्ष के भट्टारक काल में सोमकीर्ति ने ५० से अधिक पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएं सम्पन्न करायी होंगी। अंतिम प्रतिष्ठा जिसका हमें उल्लेख मिला है वह है संवत् १५४० की वैशाख बुदी १० के शुभ दिन की प्रतिष्ठा जिसको नरसिंहपुरा जातीय मोकलवाड़ सा. महिपा एवं उसके परिवार के सदस्यों ने सम्पन्न करायी थी। इस प्रतिष्ठा में प्रतिष्ठित भगवान संभवनाथ की एक प्रतिमा उदयपुर के दि. जैन मन्दिर संभवनाथ में विराजमान है। ऐसा मालूम होता है कि इस मंदिर का नामकरण इसी प्रतिष्ठा के साथ जुड़ा हुआ है।

विहार—

भट्टारक सोमकीर्ति कभी एक स्थान पर जम के नहीं रहे। उनका अधिकांश समय एक नगर से दूसरे नगर में विहार करने में ही सम्पन्न हुआ। राजस्थान एवं गुजरात प्रदेश के ग्राम एवं नगर उनके विहार के प्रमुख स्थान थे। कभी वे विधान सम्पन्न कराने जाते तो कभी प्रवचन के लिये उन्हें जाना पड़ता। कभी समाज पर आने वाली विपत्तियों को निवारणार्थ वे जाते तो कभी अपनी कृतियों के विमोचन समारोह में सम्मिलित होते। उनके विशाल व्यक्तित्व के सहारे समाज अपने आपको आश्वस्त मानता था। 'सोजित्रा' नगर उनका प्रमुख केन्द्र था। यहां उनकी गादी थी और पट्टाभिषेक हुआ था। मारवाड़ का गूढली नगर भी उनकी गतिविधियों का केन्द्र था। वहां शीतलनाथ स्वामी का मंदिर था जिसमें उनकी भट्टारक गादी थी। यशोधर

---

१. संवत् १५३६ वर्षे माघ सुदी १५ गुरौ श्री काष्ठासंघे नंदितटगच्छे विद्यागणे भट्टारक श्री भीमसेन तत्पट्टे भट्टारक श्री सोमकीर्ति शिष्य आचार्य श्री वीरसेन युक्तैः प्रतिष्ठितं नरसिंह जातीय सापडिया गोत्रे सा. खेभारा भांभू पुत्र लीवा भार्या लाडी पुत्र ४ मोड़ण रणधीर खिवादेवा सा. शिवा श्री श्रेयान्स नित्यं प्रणमति।

राम एवं यशोधर चरित्र दोनों को उन्होंने इसी नगर एवं मन्दिर में समाप्त किया था।

स्वागत

आचार्य सोमकीर्ति का जब विहार होता तो समाज में आनन्द का वातावरण छा जाता। हजारों स्त्री-पुरुष नगर के बाहर उनके स्वागत के लिए एकत्रित होते और बड़े समारोह पूर्वक उनको अपने यहां ले जाते। विविध वाद्य यंत्र बजाये जाते और बधावा गाये जाते। स्त्रियां कलश लेकर उनका स्वागत करती। उनकी आरती उतारी जाती। इस प्रकार सोमकीर्ति का विहार समाज में एक नये उत्साह को लेकर आता।

व्यक्तित्व

वे स्वयं विशाल व्यक्तित्व के धनी थे। उनके दर्शन मात्र से ही विरोधियों का मद गल जाता। जब वे प्रवचन करते तो श्रोताओं को अध्यात्म रस में डुबो देते। कथाओं के माध्यम से अपनी बात कहते तो लोगों को अर्हद पूजा, दर्शन एवं स्तवन का महात्म्य बतलाते। जीवन को सप्त व्यसनों से रहित बनाने पर जोर देते। भट्टारक रामसेन एवं भट्टारक भीमसेन दोनों का ही उन्हें आशीर्वाद प्राप्त था। वे संस्कृत, प्राकृत, गुजराती, राजस्थानी एवं हिन्दी के जबरदस्त विद्वान थे। वे वक्ता एवं लेखक दोनों ही थे। एक ओर वे संस्कृत में काव्य रचनाएं करते तो वहीं राजस्थानी में उससे भी अधिक काव्य कृतियां लिखना उनके लिए बहुत सरल कार्य था। वे किसी भी क्षेत्र में अपने आपको योग्यतम सिद्ध करते। यही कारण है कि तत्कालीन मुस्लिम शासक भी उनका पूर्ण सम्मान करते थे और उनका गुणानुवाद करते। समाज पर उनका वर्चस्व स्थापित था इसलिए जो भी कार्य चाहते उसे वे सरलता से सम्पन्न करा देते।

कृतित्व—

आचार्य सोमकीर्ति संस्कृत एवं राजस्थानी दोनों के ही प्रकाण्ड विद्वान एवं लेखनी के धनी थे इसलिए दोनों ही भाषाओं में उन्होंने रचनायें निबद्ध की है। उनकी संस्कृत एवं राजस्थानी कृतियों के नाम निम्न प्रकार है—

संस्कृत रचनाएं

१. सप्तव्यसन कथा समुच्चय
१' प्रद्युम्न चरित्र
३. यशोधर चरित्र।

४. अष्टाह्निका व्रत कथा ।
५. समवसरण पूजा ।

राजस्थानी रचनाएं

१. यशोधर रास ।
२. गुरु नामावली ।
३. रिषभनाथ की धूल ।
४. त्रेपन क्रिया गीत ।
५. आदिनाथ विनती ।
६. मल्लिगीत ।
७. चिन्तामणी पार्श्वनाथ जयमाल ।

सोमकीर्ति की संस्कृत रचनाओं का सामान्य परिचय निम्न प्रकार है—

१. सप्तव्यसन कथा समुच्चय

यह कथा साहित्य की अच्छी कृति है। कथा समुच्चय में सात व्यसनों के आधार पर सात कथाएं दी हुई हैं। सात व्यसनों में जुआ खेलना, चोरी करना, शिकार खेलना, वेश्या सेवन, परस्त्री सेवन, मद्यपान, एवं मांस खाने को गिनाया गया है। इसमें सात सर्ग हैं। पूरी कृति दो हजार सडसठ श्लोकों में बनाकर समाप्त की गयी है। कथा समुच्चय भट्टारक रामसेन की कृपा से रचित ग्रन्थ है। कवि ने इसे संवत् १५२६ में समाप्त किया था। संभवतः कवि की यह संस्कृत में निबद्ध प्रथम रचना है। राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों में सप्तव्यसनकथा की पचासों प्रतियां मिलती है जो इसकी लोकप्रियता की ओर संकेत करती हैं। सबसे प्राचीन प्रति डूंगरपुर के शास्त्र भण्डार में है जो संवत् १६०५ की लिखीहुई है।[1] कथा समुच्चय का अन्तिम भाग निम्न प्रकार है—

> नन्दीतटाके विदिते हि संघे श्रीरामसेनस्य पदप्रसादात् ।
> विनिर्मितो मंदधिया ममायं विस्तारणीयो भुवि साधुसंघैः ।।६९।।
>
> यो वा पठति विमृश्यति भव्योपि (शु) भवनायुक्तः ।
> लभते स सौख्यमनिशं ग्रन्थं (श्री) सोमकीर्तिनारचितं ।।७०।।

---

१. राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रन्थ सूची भाग पञ्चम-पृष्ठ संख्या ४९२ ।

रसनयनसमेते बाणयुक्तेन चन्द्रे (१५२६)
गतवति सति नूनं विक्रमस्यव काले ।
प्रतिपदि धवलायां माघ-मासस्य सोमे ।
हरिभदिनमनोज्ञे निर्मितो ग्रन्थ एषः ।।७१।।

सहस्रद्वयसंख्योऽयं सप्तषष्ठिसमन्वित: (२०६७) ।
सप्तैव व्यसनाद्यश्च कथासमुच्चयो ततः ।।७२।।

यावत्सुदर्शनो मेरुर्यावच्च सागराधरा ।
तावन्नन्दत्वयं लोके ग्रन्थो भव्यजनाश्रित: ।।७३।।

इति श्री इत्यार्षे भट्टारक-श्री धर्मसेनाभः श्री भीमसेन देवशिष्य-आचार्य सोमकीर्ति-विरचिते सप्तव्यसनकथासमुच्चये परस्त्रीव्यसनफलवर्णनो नाम सप्तमः सर्गः । इति सप्तव्यसनचरित्रकथा संपूर्णा ।

२. प्रद्युम्न चरित्र

प्रद्युम्न का जीवन चरित्र जैन कवियों के लिये बहुचर्चित रहा है । अब तक अपभ्रंश, संस्कृत, राजस्थानी एवं हिन्दी भाषा में २५ कवियों के प्रद्युम्न चरितों का पता लगाया जा चुका है[1] इस काव्य में श्रीकृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न के जीवन का वर्णन किया गया है । प्रद्युम्न की माता रुक्मणी थी । प्रद्युम्न की गिनती पुण्य पुरुषों में की जाती है । प्रस्तुत प्रद्युम्न चरित्र १६ सर्गों में विभक्त है जिसका रचनाकाल संवत् १५३१ पौष बुदी १३ बुधवार है । यह काव्य कवि ने अपने गुरु भट्टारक भीमसेन के प्रसाद से लिखा था ।

श्री भीमसेनस्य पदप्रसादात् सोमादिसत्कीर्तियुतेन भूमौ ।
रम्यं चरित्रं विततं स्वभक्त्या संशोध्य भव्यैः पठनीयमेतत ।।१६८।।

संवत्सरे सत्तिथिसंज्ञके वै वर्षेऽत्र त्रिंशैकयुते (१५३१) पवित्रे ।
विनिर्मितं पौषसुदेश्च तस्यां त्रयोदशी या बुधवारयुक्ता ।।१६९।।

३. यशोधर चरित्र

भट्टारक सोमकीर्ति ने यशोधर के जीवन पर संस्कृत एवं हिन्दी दोनों में

१. देखिये—प्रद्युम्न चरित की प्रस्तावना पृष्ठ—१२ ।
साहित्य शोध विभाग श्री दि. जैन अ. क्षेत्र श्रीमहावीरजी की ओर से प्रकाशित ।

रचनायें निबद्ध की हैं। इससे पता चलता है कि यशोधर की कथा उस समय बहुत ही लोकप्रिय थी। प्रस्तुत यशोधर चरित्र आठ सर्गों में विभक्त काव्य है जिसका रचना काल संवत् १५३६ है। इसकी रचना कवि ने गोढिल्ल मेदपाट (मेवाड़) में भगवान शीतलनाथ के सुरम्य मन्दिर में की थी। कवि ने इसको निम्न प्रकार लिखा है:—

नन्दीतटाख्यगच्छे वंशे श्री रामसेनदेवस्य।
जातो गुणार्णवैकश्च (श्चैकः) श्री मांश्च (मान्) श्रीभीमसेनेति ॥६१॥

निर्मितं तस्य शिष्येण श्रीयशोधरसंज्ञकं।
श्रीसोमकीर्तिमुनिना विशोध्याऽधीयतां बुधाः ॥६१॥

वर्षे षट्त्रिंशसंख्ये तिथि पहगणनायुक्तसंवत्सरे (१५३६) वै।
पंचम्यां पौषकृष्णे दिनकरदिवसे चोत्तरास्थे हि चन्द्रे।
गोढिल्यां मेदपाटे जिनवरभवने शीतलेन्द्रस्य रम्ये।
सोमादिकीर्तिनेदं नृपवरचरितं निर्मितं शुद्धभक्त्या ॥६२॥

कवि की अष्टाह्निकाव्रत कथा एवं समवसरण पूजा लघु रचनाएं हैं तथा कथा एवं पूजा विषयक हैं।

राजस्थानी कृतियां

भट्टारक सोमकीर्ति की राजस्थानी भाषा में निबद्ध सात रचनाओं की खोज की की जा चुकी है। लेकिन राजस्थान एवं गुजरात के सभी कुछ ग्रन्थ-भण्डारों का सूचीकरण होना शेष है इसलिए संभव है कवि की और भी कृतियों की उपलब्धि हो सके। फिर भी जो कृतियां उपलब्ध हो चुकी है वे कवि की राजस्थानी भाषा पर अगाध विद्वत्ता की द्योतक है। सोमकीर्ति के पास संस्कृत एवं हिन्दी जानने वाले दोनों ही तरह की समाज आती थी इसलिए उन्होंने दोनों ही भाषाओं में काव्य रचना करना श्रेयस्कर समझा। वैसे उस युग में इस तरह की परम्परा भट्टारक सकलकीर्तिने डाली थी और उसका अनुकरण किया महाकवि ब्रह्म जिनदास, भट्टारक ज्ञानभूषण एवं भट्टारक शुभचन्द्र ने। सोमकीर्ति ने भी अपने पूर्ववर्ती मूलसंघ में होने वाले भट्टारकों का अनुसरण किया और अत्यधिक लोकप्रियता प्राप्त की।

कवि द्वारा राजस्थानी भाषा में निबद्ध सात रचनाओं में यशोधर रास सबसे बड़ी कृति है। इस काव्य का रचना काल नहीं दिया हुआ है। हां रचना स्थान का अवश्य उल्लेख किया हुआ है जो मेवाड़ का गुढली नगर है। जहां आपने

संवत् १५३६ में संस्कृत में यशोधर चरित्र की रचना की थी इसलिये यह सम्भव है कि इस काव्य की रचना भी संवत् १५३६ के आसपास ही हुई होगी ।

१. यशोधर रास

राजा यशोधर का जीवन जैन साहित्यकारों के लिए अत्यधिक रुचिकर रहा है। प्राकृत संस्कृत, अपभ्रंश, राजस्थानी एवं हिन्दी सभी भाषा के कवियों ने यशोधर के जीवन पर खूब लिखा है । महाकाव्य, चम्पूकाव्य, खण्ड काव्य, रास काव्य, चौपईबन्ध काव्य, वेलि, फागु एवं चरित नामान्तक सभी तरह के काव्य मिलते हैं । यशोधर के जीवन ने श्रावक समाज को इतना अधिक प्रभावित किया कि जब तक कोई कवि यशोधर के जीवन पर कलम नहीं चला ले तब तक उसे कवियों की कोटि में स्थान मिलना कठिन है । यही कारण है कि अपभ्रंश के महाकवि पुष्पदन्त ने भी जसहरचरिउ छन्दोबद्ध किया तथा आचार्य सोमदेव ने संस्कृत में यशस्तिलक चम्पू लिखकर विद्वानों के समक्ष प्रस्तुत किया । हिन्दी, राजस्थानी में तो बीसों यशोधर चरित लिखे गये हैं जिनमें ब्रह्म जिनदास का यशोधर रास विशेषतः उल्लेखनीय है । आचार्य सोमकीर्ति तो यशोधर के जीवन वृत्त से इतना अधिक प्रभावित थे कि उन्होंने पहले संस्कृत में यशोधर चरित्र एवं फिर राजस्थानी में यशोधर रास की रचना करके जैन कवियों के समक्ष एक अनोखा उदाहरण प्रस्तुत किया ।

रचना काल एवं स्थान

राजस्थानी भाषा में इस रास काव्य को आचार्य सोमकीर्ति ने गुढली नगर में शीतलनाथ स्वामी के मन्दिर में कार्तिक बुदी प्रतिपदा बुधवार के शुभ दिन समाप्त करके जन-जन के समक्ष स्वाध्याय के लिए प्रस्तुत किया ।[1] कवि ने रास काव्य के समाप्ति काल का महिना, वार एवं स्थान तो दिया है लेकिन संवत् का उल्लेख नहीं किया । कवि ने संस्कृत के यशोधर चरित्र की रचना संवत् १५३६ पौष बुद्धि पंचमी रविवार को समाप्त की थी । रचना स्थान दोनों का समान है अर्थात् संस्कृत काव्य को भी गुढली नगर एवं शीतल नाथ स्वामी के मन्दिर में ही लिखा गया था । संस्कृत भाषा में कवि ने काव्य की रचना को अधिक प्राथमिकता

---

१. कातीए उजली पाखि पडिया बुधवार कीउ ए ।
सीतलूए नाथ प्रासादि गुढली नगर सोहामणुं ए ।
रिषि वृद्धिए श्री पास पोसाउ हो जो निति श्री संघह घरिए ।
श्री गुरुए चरण पसाउ श्री सोमकीरति सूरि भणू ए ।।

दी थी इसलिए ऐसा लगता है कि संस्कृत में यशोधर चरित्र की रचना करने के पश्चात् राजस्थानी में यशोधर रास की रचना की थी। इस आधार पर रास की रचना संवत् १५३६ के बाद की मानी जा सकती है।

यशोधर रास को कवि ने सर्गों एवं अध्यायों में विभक्त, नहीं करके ढालों में विभक्त किया है। जिनकी संख्या १० है। इससे दो प्रयोजन सिद्ध हो गये। एक तो काव्य में १० प्रमुख छन्दों—रागों में निबद्ध करना तथा दूसरा ढालों के माध्यम से अध्यायों में विभक्त करना। हिन्दी के अधिकांश जैन कवियों ने इसी परम्परा को अपनाया है। कवि ने ढाल के अन्त में वस्तुबन्ध छन्द का प्रयोग किया जो ढाल समाप्ति का सूचक माना जाता है।

कवि ने रास का प्रारम्भ मंगलाचरण से किया है जिसमें पंच परमेष्ठियों को नमस्कार करने के पश्चात् यशोधर रास रचने का संकल्प व्यक्त किया गया है।

कथा सार

जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में यौध देश था। वहां राजपुर नगर एवं मारदत्त उसका राजा था। जो सुन्दरता में तथा दान देने में इन्द्र के समान लगता था। वह छह दर्शन के सिद्धांतों पर विचार करता लेकिन कौनसा दर्शन तारने वाले तथा कौनसा डुबाने वाला है इसको वह नहीं जानता था। उसी नगर के दक्षिण दिशा की ओर देवी का मठ था। जहां देश विदेश के स्त्री-पुरुष दर्शनार्थ आते थे। देवी का नाम चण्डमारि था। उसका रूप कज्जल के समान काला था। भक्तगण आसोज, एवं चैत्रमास में, नवरात्रा में उसकी विशेष पूजा करते थे। लोग पशु पक्षियों को लेकर आते थे।

जब चैत्र मास आया सभी पेड़ पौधे पल्लवित एवं पुष्पित हो गये। तभी वहां एक जोगी आया। उसके वहां कितने ही शिष्य शिष्याएं बन गये। मूर्ख लोगों को वह कितनी ही तरह से बहकाने लगा तथा कहने लगा उसको राम, लक्ष्मण, ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि दिखायी देते हैं। यह सुनकर राजा ने भी उसे दरबार में बुलाया। जोगी अपने सात शिष्यों के साथ वहां आया। राजा ने सम्मान पूर्वक उसे आसन दिया। परस्पर में चर्चा हुई और उस जोगी ने कहा कि वह मोहनी, वशीकरण एवं स्तम्भन मन्त्र जानता है, आकाश गामिनी विद्या जानता है, यही नहीं सभी रसायन मन्त्र तन्त्र का वह ज्ञाता है। राजा उसकी बात सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ। और उससे आकाश गामिनी विद्या देने की प्रार्थना की। जोगी ने उसे आशीर्वाद दिया और अपना शिष्य घोषित कर दिया तथा कहा कि चण्डमारी देवी के आगे जितने भी जलचर, थलचर एवं नभचर जीव हैं उनके युगल लाये जावें। इतना सुनते ही राजा ने अपने सेवकों द्वारा सैंकड़ों जीवों के युगल देवी के मन्दिर में लाकर

एकत्रित कर दिये इसमें हरिण, रीछ, हाथी, घोड़े, बकरी, भैंस, गाय, बैल, बगुला, सारस चकवा आदि न जाने कितने जीव थे। राजा मन्दिर में गया और सिंहासन पर बैठ गया। वहां आने पर जोगी ने राजा से कहा कि वह बत्तीस लक्षण युक्त नर युगल का अपने हाथों से बलिदान कर सके तो उसे उसी क्षण देवी की कृपा से आकाशगामिनी विद्या सिद्ध हो जायेगी। राजा ने फिर अपने सेवकों को चारों ओर भेजा।

तीन दिन पूर्व ही दिगम्बर मुनि सुदत्ताचार्य का संघ वहां आया था और वन में ठहर गया था। मुनि के प्रभाव व वह जंगल सघन हो गया। फूल खिल गये और कोयल मधुर गान गाने लगी। इसको देखकर वह मुनि ध्यान के लिये श्मशान में चले गये। श्मशान की विभीत्सता देखते ही डर लगता था। स्थान स्थान पर अस्थियों के ढेर लगे हुए थे। लेकिन मुनि प्रासुक भूमि देखकर वहीं ध्यानस्थ हो गये। उस दिन चैत्र सुदि अष्टमी थी इसलिए उपवास ले लिया। इतने में ही एक क्षुल्लक एवं एक क्षुल्लिका गुरु के पास आये और दोनों प्रोषधोपवास व्रत लेने की प्रार्थना करने लगे। मुनि ने उनकी लघु आयु देखकर नगर में जाकर आहार लेने के लिए कहा। वे दोनों आहार के लिये नगर की ओर चल दिये।

राजा के सेवक भी ऐसे ही नर युगल की तलाश में थे। वे दोनों को देखते ही प्रसन्न हो गये और उनको चण्डमारी देवी के मठ में ले गये। राजा ने उन दोनों को देखकर प्रसन्नता व्यक्त की लेकिन उनके सलोने रूप को देखकर आश्चर्य प्रगट किया और क्रोधित होकर अपनी तलवार सम्हालने लगा। लेकिन जैसे ही दोनों क्षुल्लक, क्षुल्लिका युगल ने राजा को शुभाशीर्वाद दिया, उसके यश की कामना की तथा करोड़ वर्ष तक जीने का आशीर्वाद दिया इससे राजा का क्रोध कम हुआ। उन दोनों के रूप को देखकर वह दंग रह गया और इतनी छोटी उम्र में साधुवेष अपनाने का कारण जानना चाहा लेकिन क्षुल्लक ने कहा कि वह जानकर क्या करेगा। वह तो पाप बुद्धि में फंसा हुआ है। उसके हाथ में तलवार है। संसार को पाने की उसकी इच्छा है। लेकिन राजा ने उससे फिर निवेदन किया। राजा की प्रार्थना को सुनकर क्षुल्लक ने अपने जीवन का इतिवृत्त कहना प्रारम्भ किया।

उज्जयिनी का राजा यशोघ था। चंद्रमती उसकी रानी थी। दोनों ही सुन्दरता की मूर्ति, सम्यक्त्वी एवं श्रावक धर्म को पालने वाले। जब चन्द्रमती के पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ तो उसका नाम यशोधर रखा गया। नगर में विभिन्न उत्सव किये गये। पांच वर्ष का होने पर उसे उपाध्याय के पास पढ़ने भेजा गया।

तथा वहां उसने सभी विद्याओं में पारंगता प्राप्त की। काव्य, अलंकार, तर्कशास्त्र, सिद्धांत, नाटक, ज्योतिष, वैद्यक, आदि सभी शास्त्रों का अध्ययन किया। यही नहीं संगीत, नृत्य आदि में प्रवीणता प्राप्त की। उपाध्याय को इस उपलक्ष में एक लाख दीनार भेंट की तथा अपना पूरा आभूषण उतार करके दिया। यौवन प्राप्त करते ही विवाह के प्रस्ताव आने लगे। एक दिन कैशक राजा के यहां से विवाह का प्रस्ताव लेकर एक दूत आया। राजा ने विवाह का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया तथा अपने पुत्र का विवाह कर दिया। विवाह के उपलक्ष में नगर को सजाया गया। बिन्दौरियां निकाली गयी। तेल चढ़ाया गया। तथा गीत गाये गये। उद्यान में जाकर विवाह किया गया। जब वधु का रूप देखा गया तो सभी प्रसन्न हो गये। वधु को लेकर राजमहल में गये और सब सुख से रहने लगे। बहुत वर्षों तक राज्य सुख भोगने के पश्चात् राजा यशोध अपने पुत्र यशोधर को राज्य देकर स्वयं ने जिन दीक्षा धारण करली।

यशोधर एवं रानी यशोवती राज्य करने लगे। जीवन आनन्द से बीतने लगा। एक तो यौवन, फिर सुन्दरता, राज्य वैभव एवं परस्पर में घना प्रेम, सब कुछ दोनों के पास था। इसलिए वैभव में दिन व्यतीत होने लगे। एक रात्रि को जब राजा-रानी एक पलंग पर सो रहे थे। अर्धरात्रि का समय आते ही रानी अपने पलंग से उठी और पूरे अभूषण पहिन कर महलों से नीचे चलने लगी। राजा को जब जाग हुई तो वह भी तलवार लेकर रानी के पीछे-पीछे चलने लगा। राजा ने देखा कि रति के समान रानी एक कोढ़ी के पास गयी तथा उसके चरण पकड़ कर जगाने लगी। कोढ़ी के हाथ-पांव गल गये थे। शरीर से दुर्गन्ध आ रही थी। उस कोढी ने रानी को देर से आने पर उसे खूब मारा लेकिन रानी ने ऊफ भी नहीं कहा और देर से आने के लिए क्षमा मांगने लगी। राजा ने जब यह सब अपनी आंखों से देखा तो क्रोधित होकर उसे तलवार से मारने लगा लेकिन फिर सम्भल गया। और वापिस अपने महल में जाकर सो गया। जिस रानी के साथ जीवन बिताने में राजा को आनन्दानुभूति होती थी अब उसे वह जहर के समान लगने लगी।

प्रातः काल होने पर जब उसकी माता जिन पूजा आदि से निवृत होकर राजमहल में आयी तो राजा ने रात्रि स्वप्न की बात कही तथा स्वप्न की भयंकरता को देखते उसने वैराग्य लेने की इच्छा प्रगट की। लेकिन माता ने उसे कायरता बतलाया तथा कहा कि कुलदेवी के आगे बलि चढ़ाने से सारे उपद्रव दूर हो सकते हैं। लेकिन यशोधर ने किसी भी जीव की बलि देने से साफ इन्कार कर दिया। माता

ने उसे पुनः समझाया तथा जगत में जीवों के जन्म मरण की बात कही लेकिन यशोधर ने एक भी नही सुनी। अन्त में आटे का कुकुडा बनाकर देवी के मन्दिर में गया और देवी के आगे उसे मार दिया और इस प्रकार हिंसा का बन्ध कर लिया।

जब रानी को राजा के दीक्षा लेने की बात मालूम पड़ी तो वह शीघ्र राजा के पास गयी। कहने लगी कि एक बार उसके हाथ का प्रिय भोजन करके वैराग्य लेना वह भी उन्हीं के साथ तपस्विनी बन जावेगी। तथा 'तप करसां दोउं' इस प्रकार अपनी मार्मिक रीति से भावना व्यक्त की। राजा ने रानी की बात मानली। राजा जिन पूजा के पश्चात् रानी के महल में गया। रानी ने सोने के थालों में राजा के लिए भोजन परोसा। विविध प्रकार के व्यञ्जन परोसे गये लेकिन उनमें विष मिला दिया गया। तभी रानी ने कहा कि एक आवश्यक कार्यवश उसे अपने पीहर जाना है। सात दिन बाद वापिस आजावेगी। रानी ने दो विष मोदक बनाये। एक माता के लिये और एक राजा के लिए। दोनों को विष के लड्डू खिला दिये। माता चन्द्रमती तो तत्काल ही मर गयी और राजा भी वैद्य-वैद्य करता मर गया। रानी ने फिर त्रिया चरित्र दिखलाया।

> इम बोली हा हा करी छोडीय केश कलाप।
> मूरछ मसि उपरि पडी हीयडलि आणीय पाप ॥

दोनों का दाह संस्कार किया गया। ब्राह्मणों को दान दिया गया। इसके पश्चात् राजा यशोधर एवं माता चन्द्रमती के भवों का क्रम प्रारम्भ होता है—

राजा यशोधर मर कर श्वान हुआ और चन्द्रमती मोर हुई। एक शिकारी ने उस श्वान को पकड़ लिया और उज्जैनी नगरी में आकर राजा के पास ले गया राजा ने श्वान को देखकर प्रसन्नता व्यक्त की तथा कुत्ते को सोने की जंजीर से बांध दिया। एक दिन कुत्ते ने रानी को कुबड़े के साथ कुकर्म करते हुए देख लिया। देखते ही कुत्ते को जाति स्मरण हो गया। वह अत्यधिक क्रोधित होकर तथा सांकल को तोड़ कर मोर का गला पकड़ लिया। राजा ने तत्काल श्वान को मार दिया। मोर भी मर गया। मोर मर कर काला सांप हुआ तथा श्वान सेहलु हुई। दोनों ने जब एक दूसरे को देखा तो फिर लड़ मरे और दोनों ही मर गये। अगले भव में सेहलु मर कर बड़ा मगर हुई तथा सांप रोही हो गया। एक दिन राजा की दासी उस तलाब पर नहा रही थी तभी उस मगर ने दासी को पकड़ लिया और जब राजा को खबर लगी तो उसने धीवर से मगर को पकड़ने का आदेश दिया। रोही ने जाल डाल कर उसे पकड़ लिया और उसे खूब मारा गया। अंत में वह मर

कर बकरी हुई। रोही मर कर बकरा हुआ। जब वह बकरा दूध पीने लगा तो उसे देखकर बड़ा क्रोध आया और उसे मार डाला गया। लेकिन वह फिर बकरा हो गया। बकरा मर कर पुनः भैंसा हो गया। जिस को वरदत्त बणजारा भार लादने का काम लेने लगा। उसके पश्चात् वे दोनों मर कर मुर्गा मुर्गी की योनि में पैदा हुए। उस मुर्गा मुर्गी ने मुनिराज से व्रत लिये। लेकिन राजा उनके बोलने से अप्रसन्न हो गया इसलिये दोनों को शब्दवेधी बाण से मार दिया। वे दोनों फिर रानी के गर्भ में आकर पुत्र-पुत्री हुए, जिनका नाम अभयरुचि एवं अभयमति रखा गया।

एक दिन राजा यशोमति बसंत ऋतु आने पर अपनी रानी के साथ वन भ्रमण को गया। उसी वन में सुदत्त मुनि ध्यानस्थ थे। मुनि को देखकर वे भी उनके पास जाकर बैठ गये और अपने पूर्व भवों का वृतान्त जानने की इच्छा प्रकट करने लगे। मुनि ने जगत की असारता, पापों की भयानकता एवं अहिंसा धर्म पालन की महत्ता बतलाई साथ ही आटे के कुकुट युगल को मारने की भाव हिंसा करने से यशोधर को कितने भवों तक जन्म धारण करके दुःख सहन करने पड़े इस बारे में विस्तार से कहा।

एक दिन वह शिकारियों को साथ लेकर वन में गया। वहां ध्यानस्थ मुनि को देखकर क्रोधित हो गया तथा मुनि के ऊपर जंगली कुत्ते छोड़ दिये। उधर से एक कल्याण नामक बणजारा अपने बैलों के साथ जा रहा था। जब उसने मुनि को ध्यानस्थ देखा तथा उस पर राजा द्वारा छोड़े हुए कुत्तों को देखा तो उसने राजा से मुनि महात्म्य के बारे में कहा। तो राजा ने मुनि के शरीर की ओर संकेत करते हुए कहा कि जो कभी स्नान नहीं करता, दांत साफ नहीं करता वह कैसे पवित्र हो सकता है। बणजारे ने इसके पश्चात् विस्तार से मुनि जीवन की विशेषताएं बतलायी तथा कहा कि "मुनिवर सदा पवित्र मंगल परमए जाए जे।" साथ में यह भी कहा कि ये मुनि कलिंग राजा सुदत्त हैं। कल्याण बणजारा मुनि के चरणों के समीप बैठ गया। मुनि के वचनों के प्रभाव से राजा को भी वैराग्य हो गया। जब उसके दो पुत्रों को राजा के वैराग्य की मालूम पड़ी तो तो उन दोनों ने भी वैराग्य धारण कर लिया और वे अभयरुचि एवं अभयमति के रूप में सामने हैं। कल्याण ने भी जिन दीक्षा धारण करली।

मुनि सुदत्ताचार्य ने कषायों, लेश्याओं की उग्रता, नरक योनि के दुःख के बारे में विस्तार से बतलाया तथा जिन पूजा, पात्र-दान, णमोकार मन्त्र का जाप, सत्य भाषण, आदि की जीवन में उपयोगिता के बारे में बतलाया।

श्रावक समाज के व्रतों, दस धर्मों, अनुप्रेक्षाओं पर विस्तृत प्रकाश डाला और उन्हें जीवन में उतारने पर जोर दिया। राजा मारिदत्त यशोधर के पूर्व भवों की कथा को सुनकर जगत से भयभीत हो गया और क्षुल्लक क्षुल्लिका के पांव पड़ गया। उधर सुदत्ताचार्य भी वहां आ गये। अभयरुचि ने उनसे राजा को दीक्षा देने के लिये निवेदन किया। मारिदत्त ने मुनि दीक्षा लेकर स्वर्ग प्राप्त किया। योगी ने भी हिंसावृत्ति को छोड़ कर जिनदीक्षा धारण कर ली। देवी के मन्दिर को स्वच्छ कर दिया गया और जीव हिंसा सदा के लिये बन्द हो गयी। अभयरुचि एवं अभयमति तपस्या करते हुए मर कर स्वर्ग में इन्द्र प्रतीत हुए। बणजारा कल्याण ने भी जिन दीक्षा धारण कर स्वर्ग प्राप्त किया। इस प्रकार यशोधर रास में सूक्ष्म हिंसा से भी कितने भवों तक कष्ट सहने पड़ते हैं, इसका विस्तृत वर्णन किया है। इस रास काव्य को जो पढ़ता है अथवा सुनता है उसे अपूर्व पुण्य की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार का यशोधर रास के कथानक को कवि ने बहुत ही सीधी सादी एवं तत्कालीन बोलचाल की भाषा में निबद्ध किया है। कवि ने काव्य के मूल कथानक में यद्यपि कोई परिवर्तन नहीं किया है किन्तु अपने काव्य को लोकप्रिय बनाने के लिये उसके वर्णन में नवीनता लाने का अवश्य प्रयास किया है। उसमें सामाजिक पुट स्थान स्थान पर मिलता है तथा तत्कालीन जन भावनाओं की अभिव्यक्ति भी मिलती है। प्रकृति वर्णन, नगर वर्णन, शासन वर्णन आदि भी स्थान स्थान पर मिलते हैं। उस समय की अध्ययन अध्यापन स्थिति का भी काव्य से पता लगाया जा सकता है साथ ही में राजा एवं प्रजा के सम्बन्धों पर भी कहीं कहीं प्रकाश डाला गया है। काव्य के अन्त में हिंसा से मुक्ति पाने के लिये उसके अवगुणों का विस्तृत वर्णन मिलता है तथा जीवों की स्थिति, उत्पत्ति, एवं विविध योनियों का अच्छा वर्णन किया गया है।

कवि ने श्मशान एवं देवी मंडप की विभित्सता का बहुत अच्छा वर्णन किया है जिसे पढ़ते ही मन में ग्लानि होने लगती है। राजपुर के श्मशान का चित्र प्रस्तुत करते हुए कवि ने लिखा है—

> **ठामि ठामि सब तणीय गंधि अति अस्थि असंख।**
> **काक सेह सोयाल स्वान सिहा आचि पंख ॥ २६ ॥**

इसी तरह देवी के मठ का वर्णन देखिये—

देवीय मंडप विवभु वीठउ, सुण तरगु भय मन माहि पिठउ
ठामि ठामि श्रीहामरणए ।। ३१ ।।

अस्थि तरगा को ही डूंगर दीसि
अस्थि सिघासरिण जोगी बइसि
अस्थि दंड ते कर लेइए ।। ३२ ।।

अमिष तणा ढगला अति पुरण ।
अमिष ठाम दीसिहि अति घरण ।
अमिष भखी पंखी चुणिए ।। ३३ ।।

लेकिन जब प्राकृतिक छटा का वर्णन करने लगता है तो कवि उसमें भी जीवन डाल देता है---

कोइल करइ टहुक भमरा रुण झुण ध्वनि करि रे
सखी फूल्या केसु फूल. सहकारे मांजिर घरणी रे ।[1]

इसी तरह उसने क्षुल्लक क्षुल्लिका के सन्दौर्य का वर्णन किया है—

कइ इन्द्र इन्द्राणी देहू ।
यस कीरति धुरि आवि देहू ।
चन्द्रा रोहिणी सुं मिलिए ।। ४३ ।।

सुरधरना देव सरीसु मारणस ।
रूपन हुइ ईसु ।
कामि सहित सुं रति हुइए ।। ४४ ।।

सामाजिक स्थिति में कवि ने तत्कालीन विवाह विधि का विस्तृत वर्णन किया है—

कुमार यशोधर के विवाह का प्रस्ताव लेकर ऋथकैशक राजा के यहां से दूत आता है। दूत का प्रस्ताव सुनकर राजा उससे उज्जयिनी आकर ही विवाह करने का प्रस्ताव रखता है। दूत राजा के प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है। तथा राजा, राजपरिवार एवं कन्या सहित वन में आकर ठहर जाते हैं।

---

१. ढाल आठमी ।

विवाह का प्रारम्भ बिन्दोरी से होता है। घर-घर बिन्दोरियां निकलती हैं तथा मंगलगीत गाये जाते हैं। सौभाग्यवती स्त्रियां तेल चढ़ाती हैं। शांति विधान करती हैं। यशोधि राजा नपरिवार तोरण मारने के लिये बरात सजा कर चलते है। उस समय खूब दान दिया जाता है। जब लग्न वेला आती है तो तोरण की विधि पूरी की जाती है। वर कन्या का मुख देखता है। वर कन्या का हाथ से हाथ मिलाया जाता है। हथलेवा होता है। जब हथलेवा छोड़ते हैं तो श्वसुर आशीर्वाद देता है। विवाह के पश्चात् वर वधु मन्दिर जाते है। इस प्रकार विवाह के सामाजिक दायित्व को पूरा किया जाता है।

इसके पश्चात् जब वर-वधु घर आते है तो सास श्वसुर उन्हें अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य एवं परिग्रह व्रत के पालन की शिक्षा देते हैं। इसके साथ ही रात्रि को भोजन नहीं करने पर जोर दिया जाता है।

धर्म अहिंसा मनि धरिए, मा० बोलिम कूडीय साखि ।। ११० ।।
चोरीय आत उं मां करे से मा० परनारी सहो टालि ।
परिग्रह संख्या नितु करिए, गुरुवाणी सदा पालि ।। १११ ।।
न्याय पाले लोकह सहूए, रमणीय भोजन वारि ।।

शिक्षा—अध्यापकों को उपाध्याय कहा जाता था। जैन उपाध्याय होते थे। पांच वर्ष का होते ही यशोधर को पढ़ने भेज दिया गया था और पन्द्रह वर्ष की अवस्था तक वह पढ़ता रहा था। उपाध्याय के पास उसने किन किन विषयों का अध्ययन किया इसका निम्न पंक्तियों में विवरण देखिये--

वृत्तनि काव्य अलंकार तर्क सिद्धान्त प्रमाण।
भरह नइ छंद सुपिंगल नाटक ग्रन्थ पुराण।। ६६ ।।

आगम ज्योतिष वैदिक हय नर पसुयनु जेह।
चैत्य चैत्यालां गेहनी गढ मढ करवानो तेह ।। ६७ ।।

माहो माहि विरोधीइ कठा मनावीइ जेम।
कागल पत्र समाचरी रसोयनी पाईइ केम।। ६८ ।।

इन्द्रजाल रस भेदजे रूपनइ भूभनु कर्म।
पाप निवारण वाचन नत्तन माहि जे मर्म।। ६९ ।।

नारी निन्दा

१६ वीं १७ वीं शताब्दि में हिन्दी कवि नारी निन्दा अनेक पद्य अवश्य लिखते थे। आचार्य सोमकीर्ति ने भी अपने काव्य यशोधर रास में नारी निन्दा निम्न शब्दों में की है—

नारी विसहर वेल. नर वंचेवाए घडी ए।
मारीय नामज मेल्हि, नारी नरक प्रतोलडीए।
कुटिल पणानी खाणि, मारी नीचह गामिनीए।
सांचु न बोलि वाणि, वाधिए सापिए अगनि शिखा।
नर आलगीय एह दोष निवाने पूरीजए॥

लेकिन एक दूसरे प्रसंग में कवि ने नारी की प्रशंसा भी की है—

सखी नारी बहु गुणवंत कुल लक्षण दाखि भली रे।
सात भूमि जे गेह राज दिधि मोरिम घणी रे॥

मृत्यु के समय

आचार्य सोमकीर्ति के समय मृत्यु के पहिले गाय, भूमि, एवं स्वर्ण दान में देने की प्रथा थी। राजाओं का दाह संस्कार चन्दन से किया जाता था। ब्राह्मणों को भोजन एवं दान दक्षिणा देने की प्रथा भी थी।[1] राज परिवार में श्राद्ध होता था और उसमें ब्राह्मणों को भोजन कराया जाता था।[2]

हिंसा दो प्रकार की होती है। एक भाव हिंसा एवं दूसरी द्रव्य हिंसा। मन में हिंसा का विचार मात्र ही भाव हिंसा कहलाती है फिर चाहे उसमें अपने हाथ से जीव हिंसा मरें या नहीं मरें। द्रव्य हिंसा—साक्षात् प्राणिघात का ही नाम है। प्रस्तुत यशोधर रास की रचना छोटी से छोटी हिंसा के कितने भयानक परिणाम भुगतने पड़ते हैं इसी बात को दर्शाने के लिये की गयी है। राजा यशोधर स्वयं हिंसा में विश्वास नहीं करता। वह हिंसा कार्य से बचना चाहता है लेकिन अपनी मां के आग्रह से वह आटे का कुकडा कुकडी बनाकर उनकी हत्या कर डालता है। इसलिये चाहे उसने वास्तविक जीवित कुकडा कुकडी को नहीं मारा हैं किन्तु आटे में कुकडा कुकडी की स्थापना करके उन्हें मारने का उपक्रम

१. ढाल छट्ठी
२. ढाल सातवीं

अवश्य किया था। इसी हिंसा के कितने परिणाम अनेक जन्मों तक भुगतने पड़ते है यही यशोधर रास के कथानक की मूल वस्तु है।

२. गुरु नामावली

सोमकीर्ति की यह दूसरी रचना है जिसमें उसने अपने संघ की पट्टावली नामोल्लेख किया है तथा उसका ऐतिहासिक परिचय दिया है। काष्ठा संघ की उत्पत्ति एवं उसमें होने वाले अपने पूर्व भट्टारकों के नाम, किसी किसी भट्टारक की विशेषता साथ ही में नरसिंहपुरा जाति एवं भट्टपुरा जाति की उत्पत्ति का वर्णन भी दिया गया है। गुरु नामावली की पूरा विवरण निम्न प्रकार है—

संस्कृत में मंगलाचरण के पश्चात् सोमकीर्ति अपनी शक्ति अर्थात् ज्ञान के अनुसार अपने गुरुओं की नामावली कहने की इच्छा प्रकट करते हैं।

भगवान आदिनाथ के ८४ गणधर हुए और महावीर स्वामी के ग्यारह। भरतेश्वर जिस प्रकार चक्रवर्तियों के शिरोमणि थे उसी प्रकार काष्ठासंघ अन्य सभी संघों में शिरोमणि था। लाड़ बागड़ गच्छों में नन्दी तट संज्ञक संघ प्रसिद्ध है। अर्हद्वल्लभसूरि उस गच्छ के प्रथम आचार्य थे। उस गच्छ में पांच गुरु हुये। वे हैं गंगसेन, नागसेन, सिद्धान्तदेव, गोपसेन, नोपसेन।

दक्षिण देश में नन्दी तटपुर में नोपसेन मुनि रहते थे। उनके पांचसौ शिष्य थे उनमें चार शिष्य प्रमुख थे। रामसेन प्रथम शिष्य थे जो वाद एवं शास्त्रार्थ करने में पटु थे। अपने शिष्य की विद्वत्ता एवं शास्त्रार्थ पटुता को देखकर नोपसेन ने कहा कि यदि वह नरसिंहपुरा जाकर वहां के निवासियों में व्याप्त मिथ्यात्व को दूर कर सके तब उसकी शास्त्रार्थ पटुता को समझी जावेगी। नागड़ देश में मथुरा नगरी में तथा लाड़ देश में मिथ्यात्व फैला हुआ है। गुरु की वाणी को मन में धारण कर वहां से वे चारों शिष्य चले।[1]

मुनि रामसेन नरसिंहपुरा नगर में आये। नगर के बाहर सरोवर के किनारे मासोपवासी बन कर ध्यान करने लगे। उसी नगर में भाहड नामक श्रीमन्त था जिसके सात पुत्र थे लेकिन पौत्र एक भी नहीं था। सेठ मुनि की वन्दना करने वहां आया और हाथ जोड़कर बैठ गया। तथा महामुनि के आदेश की प्रतीक्षा करने लगा। मुनि ने मिथ्यात्व दूर करके जिनधर्म फैलाने की इच्छा प्रकट की

---

१. रामसेन के अतिरिक्त तीन शिष्यों का नाम नहीं दिये गये हैं।

तथा मन्दिर बनवा कर उसमें भगवान की प्रतीमा की प्रतिष्ठित करने की बात रखी। मुनि ने उत्तर बाडुपुर जाने को कहा तथा अपनी तपस्या के प्रभाव से नरसिंहपुरा एवं उत्तर बाडुपुर के निवासियों को सम्बोधित किया और जैन धर्म में दीक्षित कर नरसिंहपुरा जाति की स्थापना की तथा उसे २७ गोत्रों में विभक्त किया

रामसेन वहां से चित्तौड़ आये। रामसेन के साथ उनके शिष्य नेमिसेन मुनि भी थे। जो प्रायश्चित्त स्वरूप छह महिने का उपवास कर रहे थे। रामसेन ने अनशन करने की बात छोड़ने के लिये कहा। गुरु की बात को ध्यान में रख कर वहां से वे जाउर नामक प्रसिद्ध स्थान पर आ गये तथा अन्न, जल त्याग करके ध्यानस्थ हो गये। इस प्रकार सात दिन व्यतीत हो गये। एक दिन मुनि नेमसेन के ऊपर से पद्मावती देवी निकल गयी। उधर से कैलाश से सरस्वती देवी भी सामने आती हुई मिल गयी। दोनों में भेंट हुई तथा बातचीत हुई। नेमिसेन मुनि अपनी काया को क्यों कष्ट दे रहा है। यह कह कर दोनों देवियां मुनि के सामने जाकर खड़ी हो गयी। मुनिवर ने दोनों को देखकर कहा कि वे क्यों कष्ट कर रहीं हैं इस पर दोनों देवियां उससे प्रसन्न हुई। सरस्वती की प्रसन्नता के कारण उसे शास्त्रों का अपार ज्ञान प्राप्त हुआ तथा पद्मावती के कारण, आकाश गामिनी विद्या प्राप्त हुई। प्रातःकाल नेमसेन ने अनशन तोड़ दिया। मुनि ने उसके पश्चात् प्रतिदिन शत्रुंजय, रैवताचल, तुंगेश्वर, पावागिरी, एवं तारंगा क्षेत्र की यात्रा करने के पश्चात् ही आहार ग्रहण करने का नियम ले लिया।

नेमसेन वहां से चित्तौड़ आये। वहां आकर अपने गुरु की वन्दना की। गुरु ने आशीष देते हुये कहा कि मेवाड़ देश में भट्टपुरा नगर है वहां के लोगों में मिथ्यात्व फैला हुआ है तथा वे धर्म के मर्म को नहीं समझते। तुम विशेष ज्ञान के धारक हो इसलिये वहां जाना चाहिये। नेमसेन ने गुरु की आज्ञा शिरोधार्य की। चित्त में उस कार्य का चिन्तन किया तथा शीघ्र ही भट्टपुर नगर में पहुंच गये। वे नगर में गये और लोगों में फैले हुए मिथ्यात्व को देखा तब उसे नष्ट करने का संकल्प किया। वहां के नागरिकों को अपने ज्ञान से सम्बोधित किया। एक भट्टपुरा जाति की स्थापना की। भट्टपुरा में चौबीस तीर्थंकरों की प्रतिमाओं को भ० नेमसेन ने प्रतिष्ठापित किया।

नेमसेन भट्टपुरा से चल कर अपने गुरु के पास आये। भक्ति पूर्वक वन्दना की। तथा भट्टपुरा के सम्बन्ध में पूरा विवरण सुनाया। इसके पश्चात् सोमकीर्ति नेमसेन के पट्ट में भट्टारकों के नामोल्लेख करते हैं जो निम्न प्रकार है—

१. अर्हद् बल्लभ सूरी
२. गंगसेन
३. नागसेन
४. गोपसेन
५. नोपसेन
६. रामसेन
७............
८............
९............
१०............[1]
११. नेमसेन
१२. नरेन्द्रसेन
१३. वासवसेन
१४. महेन्द्रसेन
१५. आदित्यसेन
१६. सहस्रकीर्ति
१७. श्रुतकीर्ति
१८. देवकीर्ति
१९. विजयकीर्ति
२०. केशवसेन
२१. महासेन
२२. मेघसेन
२३. कनकसेन
२४. विजयसेन
२५. सूरसेन
२६. चारित्रसेन
२७. वीरसेन
२८. ऋषभसेन
२९. मेरसेन
३०. शुभंकरसेन
३१. नयकीर्ति
३२. चन्द्रसेन
३३. सहस्रकीर्ति
३४. महाकीर्ति
३५. यशःकीर्ति
३६. गुणकीर्ति
३७. पद्मकीर्ति
३८. त्रिभुवनकीर्ति
३९. विमलकीर्ति
४०. मदनकीर्ति
४१. मेरुकीर्ति
४२. गुणसेन

४२ वे भट्टारक गुणसेन महा मुनीश्वर थे। एक रात्रि को जब वे ध्यानस्थ थे तब सर्पाधिराज ने प्रत्यक्ष होकर वचन दिया कि वे बड़े शक्तिशाली हैं इसलिये उनके वचन व पीछी जिस पर फेर दी जावेगी उसके सर्प का विष कभी नहीं चढ़ेगा। मुनीश्वर ध्यान से, विद्या से, तप से, इतने प्रभावशाली थे कि स्वयं बृहस्पति भी उनसे हार मान लेता था।

---

१. चार के नाम नहीं लिखे हुये हैं।

४३. रत्नकीर्ति
४४. जयसेन
४५. कनककीर्ति
४६. भानुकीर्ति
४७. संयमसेन
४८. राजकीर्ति
४९. विश्वनन्दि
५०. चारुकीर्ति
५१. विश्वसेन
५२. देवभूषण
५३. भूषणकीर्ति
५४. लभकीर्ति
५५. श्रुतकीर्ति
५६. उदयसेन
५७. गुणदेव
५८. विशालकीर्ति
५९. अनन्तकीर्ति
६० महसेन
६१. विजयकीर्ति
६२. जिनसेन
६३. रविकीर्ति
६४. अश्वसेन
६५. श्रीकीर्ति
६६. चारुसेन
६७. शुभकीर्ति
६८. भवकीर्ति
६९. भवसेन
७०. लोककीर्ति
७१. त्रिलोककीर्ति
७२. अमरकीर्ति
७३. सुरसेन
७४ जयकीर्ति
७५. रामकीर्ति
७६. उदयकीर्ति
७७. राजकीर्ति
७८. कुमारसेन
७९. पद्मकीर्ति
८०. भुवनकीर्ति
८१. भावसेन
८२. वासव सेन
८३. रत्नकीर्ति
८४. लक्ष्मसेन
८५. धर्मसेन
८६. भीमसेन
८७. सोमकीर्ति

सोमकीर्ति के पूर्ववर्ती भट्टारक रत्नकीर्ति, लक्ष्मसेन भी बड़े प्रभावशाली भट्टारक थे। उनके बारे में सोमकीर्ति ने निम्न पंक्तियां लिखी हैं—

कहि कहि रे संसार सार। म जाणु तहुने असार।
म छि अति असार। सेव करि। पूजु पूजु रे रे अरिहंत देव।
सुरनर करि सेव। हवि मसाड वेग भावधरी।
पालु पालु रे अहिंसा धम्म। मणयनु लाभ जम्म।

म कह कुरिसल कम्म। भवह भणे।
तह तह रे उत्तम जन अवर म आणि मनि।
ध्याइ सर्वज्ञ धनं। लखमसेन गुरु एम भणे।।४।।
दीठि दीठि रे अति आणंद। मिथ्यातना टालि कंद।
गयण विहूणउ चंद। कुलहिं तिमु।
जोइ जोइ रे रमणी दीसि। तत्व पद लहो कीशि।
धरि आवेश सोसि। तेह भलु। तरि तरि रे संसार।
करतिम गुरु मुकिइ मुकिइ मोकलु कर दान भणी।
छंडि छंडि रे रुडी बाल। लेइ बुद्धि विशाल।
वाणीय अति रसाल। लखमसेन मुनिराउ तणी।।५।। ६७।।

उक्त भट्टारकों में ८० वें भट्टारक भुवनकीर्ति ने दिल्ली के बादशाह महमूद शाह के सभा में अपनी विद्यावश पालकी आकाश में चला दी थी। जिस कारण महमूदशाह ने उन्हें बड़ा सम्मान दिया था। भुवनकीर्ति ने बादशाह की सभा मध्य सभी मिथ्यात्वियों को शास्त्रार्थ में जीत लिया तथा जैन धर्म के यश को द्विगुणित किया था।

८२ वें भट्टारक वासवसेन ने यद्यपि मलिन गात्र वाले थे लेकिन उनके नाम-करण से तथा पिच्छी के स्पर्श मात्र से कुष्ट का रोग दूर हो जाता था।

८३ वें भट्टारक रत्नकीर्ति भी निर्मल चित्त वाले तथा कामदेव पर विजय पाने वाले थे।

रचना काल—

"गुरु छन्द" को सोमकीर्ति ने संवत् १५१८ आषाढ सुदी पंचमी रविवार को समाप्त किया था। रचना स्थान सोझित्रापुर था जो भट्टारक सोमदेव का केन्द्र स्थान था। वहीं उनकी गादी थी तथा वहीं उनका पट्टाभिषेक भी हुआ था।

रचना की विशेषता—

गुरुछन्द ऐतिहासिक कृति तो है ही साथ में भाषा की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। सोमकीर्ति ने छन्द के प्रथम तीन पद्य संस्कृत में निर्मित किए हैं। फिर राजस्थानी भाषा में पद्य एवं गद्य दोनों निर्मित हैं। राजस्थानी गद्य को कवि ने बोली लिखा है जो तत्कालीन बोलचाल की भाषा थी।

उस समय १५ वीं शताब्दी में इस प्रकार की रचना स्वयं में ही महत्वपूर्ण है। १५ वीं शताब्दी में निबद्ध राजस्थानी गद्य-पद्य का नमूना अच्छी तरह से देखा जा सकता है। पूरा छन्द १०४ पद्यों में पूर्ण होता है इसके अतिरिक्त बोली वाला भाग अलग है।

दूहा बंध, दूहा पाथडी अर्ध-त्रोटक, छन्द हवि दूहा, छन्द त्रिवलय, आदि छन्दों का प्रयोग किया गया है। कवि को दूहा छन्द प्रिय था इसलिए उसने दूहा बंध, दूहा, हवि दूहा के नाम से प्रयोग किया है। इसी तरह बोली हवि बोली इन दो नामों से राजस्थानी गद्य का प्रयोग अपने आप में ही उज्ज्वल पक्ष है।

(३) रिषभनाथ की धूल

यह एक लघु काव्य कृति है जिसमें भगवान आदिनाथ के पांचों कल्याणकों का वर्णन किया गया है। इसमें चार ढाल हैं। यद्यपि कवि ने इस लघु कृति की रचना आदिनाथ की जीवन गाथा वर्णन करने के उद्देश्य से की थी लेकिन कहीं-कहीं उसके अपने काव्य कौशल का परिचय मिलता है। प्रारम्भ में नाभि राजा की रानी मरुदेवी की परिचर्या में देवियां किस प्रकार लगी हुई थी इसका एक वर्णन देखिये—

> **केवि सिर छत्र धरंति करंति केवि धूपणाए।**
> **केविउ गह देइ अंगि, सुवंगरे पूजा घणी ए ॥**
> **केवि सयन अनि आसन, भोजन विधि करिए।**
> **केवि खडगधरी हाथि सो, साथइ नितु फिरिए ॥**

तीर्थंकर ऋषभ को पाण्डुक शिला पर स्नान कराने के पश्चात् इन्द्राणी बड़े भाव से उनका श्रृंगार करती है। उन्हें सोलह प्रकार के आभूषण पहिनाती है। इन्द्र स्वयं तीर्थंकर के अंगूठे में अमृत डाल देता है। खूब उत्सव होते हैं तथा देव एवं देवियां तथा अयोध्या के नर नारी खुशी से नाच उठते हैं।

> **इन्द्र इंद्राणीय करि अभिषेक, आप आपणि रंगि रचियां विवेक।**
> **स्नान कराविय सोल विभूषण, भूषणं ते जिनवर सहि जु सुलक्षण।**
> **इन्द्र अंगूठि अमृत देइ, आनीय धर्मभवन नवि लेइ ॥**

कवि ने रचना के अन्त में अपने नाम का उल्लेख किया है लेकिन कृति का रचना काल नहीं दिया है—

राजा राणिम सवि सुख सहूए,

श्री सोमकीरति कहि बिउ बहूए।

मूल श्री ऋषभनु गाइसिंग,

तहां चितत फल सहू पाइसिए ।।

(४) त्रेपन क्रिया गीत

इस लघु गीत में श्रावकों द्वारा त्रेपन क्रियायें करने पर जोर दिया गया है। इन क्रियाओं के पालन करने से मनुष्य का जीवन सात्विक बनता है तथा उसे स्वर्ग एवं मुक्ति की प्राप्ति होती है। पूरे गीत में ६ अन्तरे हैं तथा गीत के अन्त में कवि ने अपने नाम का भी उल्लेख किया है। पूरा गीत निम्न प्रकार है—

त्रेपन क्रिया गीत

सरसित स्वामिणि मह् निशि समरी जिण चुवीस नमी जि।
सहि गुरु चलण कमल प्रणमीनि किरीया त्रिपन लीजि ।।

सहिए त्रिपन किरिया पालु पाप मिथ्यातज टालु।
सानु समकित हृदय धरीनि आविकुल अजुयालु सही ।।१।।

रूडु समकित ते एक कीजि तेस उपमा कुण दीजि।
ईग्यार प्रतिमा निरमल भणीइ, ते साचि चित कीजि ।।सही।।२।।

दर्शन ज्ञान चारित्रि चाहु, मुगती जु उमाहु।
रत्नत्रय भंडार करीनि निज मन निश्चल साहु ।।सही।।३।।

आठ मूलगुण निश्चल जाणु व्रत बारि वखाण्ड।
बाह्याभितर तपविहु भेदे, दुष्कुले मनि आणु ।।सही।।४।।

च्यार दान विहु पात्रा सारु जल गालण तिणि वार।
एक अणथमी अति घणु सूधी, तु तिरसु संसार ।।सही।।५।।

सोमकीर्ति गुरु केरी वाणी, भवकि जीव मनि आणी।
त्रिपन किरिया जे नर गाइ, ते स्वर्ग मुगति पंथ थाई।।सही।।६।।

गुटका पत्र संख्या १३७

आदिनाथ गीत

गागर में सागर भरने के समान प्रस्तुत गीत में आदिनाथ स्वामी के जीवन पर प्रकाश डाला गया है। इस प्रकार के गीत लिखने में जैन कवि बड़े चतुर थे। छोटे-छोटे गीतों के माध्यम से वे विविध विषयों पर अपनी काव्य शक्ति का प्रदर्शन करते थे। आचार्य सोमकीर्ति भी इस प्रकार के गीत लिखने में सिद्ध-कवि थे। प्रस्तुत गीत भी इस प्रकार का एक गीत है। इसमें २१ पद्य हैं। गीत निम्न प्रकार है—

आदिनाथ विनती

नाभि नरिंद मल्हार, मुरा देवी राणी उर रयण ।
त्रिभुवन तारणहार, हेलां जिणि जीतउ मयण ॥१॥
नयर अजोध्यां वास, कुल इष्वाकह मंडणु ए ।
सुर नर सेवि तास, वर्णां सुवर्णह जास सवे ॥२॥
पंचसइ धनु देह, रूप रंग रस रूयडु ए ।
गुणह न लाभि छेह, लक्ष चुरासी आयु कही ॥३॥
पूरव तेह विचारि, सत्तिर लक्षह कोडि तिहा ।
छपन सहस मझारि, इणी परि वरसासु एक हूउ ॥४॥
पूरव तेह ज भेउ, जे मिथ्याति वाहीया ए ।
किम करी जाणि तेह, वीस लक्ष बाला पणइ ॥५॥
त्रिसठ राज अभ्यास, एक पूरव चारित्र धरीअ ।
भवयां पूरीय आस, अपछरा देखि वैराग भउ ॥६॥
छोडीय तब निज राज, च्यार सहस्र नरपति समुय ।
कीधु तब निज काज, वरस दिवस पारणु भउए ॥७॥
घरि श्रेयासह आइ, ईक्षु रसि आहार लीउ ।
अंजलि अहूठ प्रमाण, सहस्र वरस गर्या जपतुए ॥८॥
निरमल केवलज्ञान, प्रातिहार्य आठि हूया ए ।
अंनत चतुष्टय च्यार, अतिसिइीस विराजतू ए ॥९॥
त्रिहू आगलि सविचार, समोसरण स्वामी तणउं ।
दीसि जोयण बार, बीस सहस्र पग थारीयां ए ॥१०॥

वेदी अतिहि विसाल, सिंघासन हीरे जड्यु ये।
ते पुण अतिहि विसाल, छत्रत्रए सिर भलमलियां ॥११॥
चुसठि चमर बीजंत, सुरनर गण गंध्रव मिलीया।
जन्म सफल कीजंति, नाटक नाचि देवीयां ए ॥१२॥

तुंबर गेह करंति, वापी वन अति वालिका ए।
पोल प्रवेस राजंति, चुरासी गणधर हूया ए ॥१३॥
वाणीय सप्तविभंग, दिन दिन उच्छव इम हुइये।
पूजीय मन तणि रंगि, भावना भाविसुं आपणीयां ॥१४॥

सुण स्वामी मुझ वात, दुःख निवारण तुं धणीया।
तुं माता तुं तात, तुं बांधव तु जगह सुरो ॥१५॥
भवि भवि भम्यु अपार, जन्म जरा मरणादिवयु।
सहियां दुःख सविचार, इन्द्री पांचे निरजय्यु ए ॥१६॥
मनह सरिरे विनाण, मयण पापी घणुरो सव्यु ए।
मोह माया नि मान, गर्भवास दुख बहु सह्या ए ॥१७॥
थावर त्रसह मभारि, नरक सात निगोदीयां ए।
मानव देव संसार, पंचमिथ्याति वाहीउ ए ॥१८॥

कुगुरु कुदेव अनंत, अवरदेव सवे जोयतां ए।
मितुं दीठु माहंत, तिणि कारणि तुझ पय कमलो ॥१९॥
सरण पयठउ देव, राखि किया करे माहरीये।
राव करूं किकेवि, नव निधि जस घरि संपजिए ॥२०॥
अहनिशि जपतां नाम, आदि तीर्थंकर आदि गुरु।
आदिनाथ आदिदेव, श्री सोमकीर्त्ति मुनिवर भणिए।
भवि भवि तुझ पाय सेव, चरणकमल वंदन करूं ॥२१॥

इति श्री आदिनाथ वीनती समाप्तः

मल्लि जिनगीत

प्रस्तुत गीत में तीर्थंकर मल्लिनाथ का स्तवनात्मक वर्णन किया गया है। यह एक लघु गीत है। इसलिये उसे अविकल रूप से पाठकों के पठनार्थ यहां दिया जा रहा है—

मल्लिजिन गीत

स्वामीय श्रीय मल्लि जिणवर देव तोरा गुण गाउं
तोरा नित नित पायवी सेव अति घणु आउ ।।चउाल
ध्याउं अति घणु तह्म पाये सेवा चिहुं गति माहि भमीउ।
कुगुरु कुदेव पासंइ रुलीउ जु जिण घर मन रमीउ
राग द्वेष मनमथमय भोल्यु बुधि करीय घणु लामी।
जोतां जोतां मित्तुं लाधु मल्लिनाथ जिन स्वामी ।।१।।
चुरासीय लक्ष जीवा योनि भमी भमी भागु
वली पुण्यतणि परिमाण ठाकुर तह्म पीये लागु ।।
तह्म पाइ कमले लागु अवरन मांगु भावे२ तम्ह पाइ सेव लहुं
तोरा गुण अछि अनंता एक जीव करि केम कहुं।
थावर त्रसह नगोदि भमीउ गति सवलीयमि वासी ।।२।।
पंच महाव्रत पंच सुमति अति गुपति न पाल्यां
चारित्र दूषण जे ते स्वामी न टाल्या ।।
नवि टाल्यां दूषण करम मूसाइ मूढ पणि अति भोल्यु
इंद्री मनह विकारि वमीउ मोहि अति अंखाल्यु
समकित रयण चारित्र नवि आण्यां धुरि न सूधु संच।
नहि गुरु पाय कमल घणु सेव्यां पाल्या महाव्रत पंच ।।३।।
देव दया करु स्वामी संभाल सेकनीय कीजि।
जिम२ जिणवर वीय वाणि सांभलि मोरूं मन भीजि ।।
मोरूं मन भीजि ते परि की जिलुं गिरि पुरवा राज।
वैराग्य रंग रसि घणुं रातु अवर नहीं मुझ काज।
आठ मद ते मनि था छांडी वीनवुं छुं हेव।
श्री सोमकीरति गुरु इणी परि बोलि भवि भवितुं मुझ देव ।।४।।

गुटका पत्र संख्या ५४-५५

लघु चिंतामणि पार्श्वनाथ जयमाल

आचार्य सोमकीर्ति का यह चिंतामणि पार्श्वनाथ जयमाल स्तवनात्मक है। इसकी एक विशेषता यह है कि जयमाल अपभ्रंश भाषा में है। १५ वीं शताब्दि में अपभ्रंश का प्रचलन था तथा कविगण कभी-कभी अपभ्रंश में भी अपनी कृतियों की रचना करते थे। इसलिये सोमकीर्त्ति ने भी अपना अपभ्रंश के प्रति प्रेम प्रदर्शित करने के लिये इसकी रचना की हो अथवा पार्श्वनाथ के प्रति अपनी भक्ति प्रदर्शित करने की दृष्टि से कवि ने इस जयमाल का निर्माण किया गया दिखता है।

आचार्य सोमकीर्ति की कृतियाँ

१. यशोधर रास

२. गुरु छन्द

३. रिषभनाथ की धूलि

४. त्रेपन क्रिया गीत

५. आदिनाथ विनती

६. मल्लिजिन गीत

७. लघु चिंतामणि पार्श्वनाथ जयमाल

यशोधर रास

श्री जिनइ स्वामी श्री जिनइ स्वामी पाउ प्रणमेवि ।
सिद्धह आचारिय नमुं उवज्झाय वली साधु मुनिवर ।
सरसइ जिनमुख निगाइ गुरुह जिन पयकमल मधुकर ।।
राय यसोधर जणासुं रचुं रास मन सुधि ।
भवीयण जण तह्मे संभलु जिम पामु घणु रिद्धि ।।१।।

यौध देश का वर्णन :

जंबूदीपह भरहखेत महीयल अति सोहि ।
यौधे देश सोहामणुए, तिहां जण मण मोहि ।
वाडी वन सरोवर अपार, नद नदीय विशेष ।
ठामि ठामि जिहां दानसाल, नर रूपडा वेष ।।२।।

अति मोटां ढकडां गाम, सुर नगर समान ।
जे जे आगर वस्तु तणां सर्व रत्नहवान ।
नयर मनोहर राजपुर[1] ते देश मझारे ।
जु वर्णंहुं जिसुं अछइ तउ लागि वारे ।।३।।

मारदत्त[2] नरनाह तिहां सोहि अति सुन्दर ।
दान मान जस रूप रिधि अभिनवउ पुरंदर ।
छहं दरसनना शास्त्र जिके ते करइ विचार ।
किम तिरीइ किम बूडीइए ते जाणि न सार ।।४।।

देवीय मठ[3] दक्षिण दिशि तिहां नयर सोहावि ।
देश विदेश तणा ज लोक यात्रा सवे आवि ।
जाणे कज्जल घडीय एह तस भीषण रूप ।
चंडिमारि[4] तस तणउं नाम प्रणमि सवे भूप ।।५।।

आसोज चैत्रीय नुरताए, तिसु पूज करेवा ।
जीव सहित आवीज लोक तस करइज सेवा ।

---

१. नगर का नाम, २. राजपुर के राजा का नाम ३. देवी का मठ, ४. देवी का नाम

चैत्र वसंतज आवीउए वनसपती फूली ।
कामिनि काम विआकुलीए पति देखीय भूली ।।६।।

भैरव जोगी का आगमन :

तिणि अवसर जोगीय एक तिहां आवि पहूत ।
चेला चेली भगति करि आनि राउल बहूत ।
सेरी सेरीय भमइ सहू अनि चरीया गांइ ।
मूरख लोकां भोलवि वली सीगी वाइ ।।७।।

लोकह आगिल ते कहि अह्म वरस बहूत ।
दीठउ राम ज लखमरा अनि अंजनि पूत ।
ब्रह्मा विष्णु महेस सवे पांडव अह्मे दीठा ।
रोगि ग्रसीया राय जिके मुझ सरण पईठा ।।८।।

सेव कराउ संभालीउ ए स्वामी सुणि वात ।
भैरव राउल[1] आवीउ ए चेलां सह मात ।

राजसभा में जोगी का आगमन :

जोगीराइ तेडावीउ ए ते आव्यु ताम ।
उठी भूपति मानीउ ए वली करीय प्रणाम ।।९।।

आसीस देईय भूप सहित निज बिठा आपणि ।
वात पूछेवा राउ ताम वली करइ चिमासिणि ।
जोगीय बोलि राउ निसुणिहूँ प्रत्यक्ष देव ।
आपुं संगा राज रिद्धि जे करि मुझ सेव ।।१०।।

तुझसुंतु हरउं राज वली करउं जगहितु ।
जिणि काजि तेडीउ ए ते कहि मुझ चिहितु ।
कामण मोहण वसीयकरण थंभण घणा जाणुं ।
विद्या गयणाह गामिनी ए वली मंथ वखाणुं ।।११।।

सहू रसायण मंत तंत ते सघला सूझूं ।
मद्य मांस अनि छोति धोति ते किमहि न मूझऊं ।
राजा मन माहि हरखीउ ए जोगी प्रति बोलि ।
कोइ न दीठउ सृष्टमाहि जोगी तुझ तोलि ।।१२।।

---

१. जोगी का नाम

तिह्मा गयगाह् गामनी ए तह्मे मुझनि आपु ।
देई हाथ मो मस्तकि चेलु करी थापु ।
जोगीय बोलि राउ निसुणि चंडमारी देवी ।
न आणीस घणा जीव हणी अई पूजा करेसी ॥१३॥

देवी के सामने बलिदान के लिए जीवों का लाना

जलचर खेचर भूमिचर जे जीव कहीजि ।
तेह तणां जे युगल मलिते ते आणीजइ ।
कोटवाल तेडीउ राइ आदेश ज दीध ।
आणु अति घणा जीवरासि प्रणाम ज कीधु ॥१४॥

गउ कोटवाल देश माहि बहु जीव अणावि ।
अति घणा जुगलज आवीयां ए कोइ नाम न जाणि वि।
हरिण रोझ गज अश्व छाग महिषी वृष मेष ।
बक सारस अनइ चक्रवाक जे जीव असंख ॥१५॥

देवी मठ सहू पूरीउ ए तेहे जीवे आणी ।
राजा वेगि पधारीउ ए तेहे आव्यां जाणी ।
जोगीय आव्या ताम सवे बिठा निज आसणि ।
राजा देवी पाय पडी ए बली साहि सिंघासणि ॥१६॥

तिसी मंत्री प्रति भणि तुह्मे राउल पूछउ ।
कांइ न हणीआ जीव अजी किंपिअछि उछव ।
पूछयउ जोगी कहिय ताम संभलि तुं भूप ।
बत्तीस लक्षण नरह युगमये हुइ सरूप ॥१७॥

ते आणी आपणि हाथ तई होम करेवु ।
पुजीय देवि संतोष करी सहू विघन हरेवु ।
तिह्मा गयगाह गामनीए तुझ ततक्षण तूसि ।
इम कीधा पाखिकहुं मुझ देवी हसि ।
सुणीय बात तिहां भूमिपाल, तलवर हकार ।
बत्तीस लक्षण नरह युगम आणेला इम बार ॥१८॥

आपणि तलवर चालीउ ए नृप करीय प्रणाम ।
सेवक सवे तिणि दहदिशि ए पाठवीया ताम ।

संघ सहित सुदत्त मुनि का आगमन :

तिणि दिनि मुनिवर संघ सहित सुदत्तह नाम ।
आवी पुहुतु वनह मझि दिन चडिउ याम ॥१९॥

कोइल करइं टहूकडा ए मधुकर भंकार ।
फूली जातज वृक्ष तणीये वनह मझार ।
वनदेवी मुनिराउ भणि इहां नहीं मुझ काज ।
ब्रह्मचार यतिवर रहितु आवि लाज ॥२०॥
इम जाणी मुनिराउ सही समसान पहूत ।
मुनिवर आणी तास तणि से अछइ बहूत ।
ठामि ठामि सब तणीय गंधि अनि अस्थि असंभ ।
काक ग्रेह सीयाल स्वान तिहां आवि पंथ ॥२१॥
फासूय भूमि बलोक करी मुनिराउ बइठउ ।
वैराग्य सरीपु ठाम देखि मनमाहि संतुठ्ठ ।
चैत्र मास सुदि आठमि सहूलइ उपवास ।
ब्रह्मचार अनिषुडीय एक आव्यां गुरु पास ॥२२॥
गुरु प्रणामी कर जोडि दोइ मागि ने औषध ।
संसार दुख निवारवाए ए अछइ औषध ॥
मुनिवर बोलि सुणउ वत्स तम्हे अछउ बालां ।
नयर मझि आहार लिउ वली पुहुचु पालां ॥२३॥

॥ वस्तु ॥

ताम षलिकषलिक सुणीय गुरुवाणि ।
प्रणमीय तव बेह चालीयां रूपवंत गुण अछिबालां ।
लखण सवह विभूषीयां हंस गमण करि जाइ पालां ।
तव ते तलवर मूलगु मारगि मलीउ जाम ।
देखी दोइ मन चीतवि सरीयां सवि मुझ काम ॥

अथ ढाल बीजी

क्षुल्लिका युगल का आना : (२)

क्षुल्लिक युगलं दीठउं जाम । तलवर मनमाहि हरख्या ताम ॥
देवी पूजा होइसि ए ।
इम बोली पाषलि फरिवरीया तलवर सवि भूमि परिवरीया ।
ब्रह्म ते पुढी प्रतिभणिए ॥२४॥
मम कंपि सतुं बहिन लगार, अथिर असार अछइ संसार मरण, तणु ब्रह्म भय किस ए ॥२५॥

बहिन हसी भाई प्रति बोलि ।
इसे वयणे मन किमहिन डोलि ।
जउ जिनवर हीयडि वसिए ॥२६॥

कहि तुं राज सरीरह कास ।
मुनिवर न करि कहिनी आस ।
राजा रूठउ सुं करि ए ॥२७॥

निश्चल हीयडुं बिहुं जणकीधुं ।
सावधि अनसन ततक्षण लीधुं ।
ते तलवरह सुं भणि ए ॥२८॥

रह बेगला तह्मे अह्म आभडसु ।
मुनिवर छबतां नरय पडेसु ।
जिहां रेडु तिहां आवसु ए ॥२९॥

दूर थका तलवर सविजाइ ।
क्षुल्लक जूडी आगलि थाइ ।
देवीमंडप आवीयां ए ॥३०॥

देवी मन्दिर की दशा :

देवीय मंडप विषमु दीठउ ।
सूग तणु [illegible] [illegible] पिठउ ।
ठामि ठामि बीहामणु ए ॥३१॥

अस्थितणा कोही डुंगर दीसि ।
अस्थि सिंघासणि जोगी बाइसि ।
अस्थि दण्ड ते कर लेइ ए ॥३२॥

आमिष तणा कगला अति पुण ।
आमिष ठाम दीसिछि अतिघण ।
आमिष भखी पंखी चुणिए ॥३३॥

रुधिर तणा सिहां जल आधार ।
रुधिर करी लीपि तिणीबार ।
रुधिर जु कुंकुम मंडणु ए ॥३४॥

मस्तक तणी दीसि रूंडमाल ।
जिह्वक तणा तिहां वंदरमाल ।
आंतर तोरण अति घणा ए ॥३५॥

तिणि मंडपि दोइ बालिक लेइ ।
तलवर राउ प्रणाम करेइ ।
करजोडी इम वीनविए ॥३६॥

मंडयां छइ दोइ सबले लक्षण ।
रूपवंतनि अतिहि विचक्षण ।
स्वाम आदेशि आणीयां ए ॥२७॥

राजा रीसि खड्गजु तोलि ।
अवरह माणस फेरि भोलि ।
ततक्षण सनमुख जोईउं ए ॥३८॥

राजा का तलवार उठाना तथा साधु द्वारा आशीष देना :

ब्रह्मचार तव देइ असीस ।
राजन जीवे कोडि वरीस ।
जस तोरु अति उजलु ए ॥३९॥

जे ये महियल अतिघण निर्मल ।
ते ते जाणे धर्म तणु बल ।
तिणि धर्मि तो जय घणु ए ॥४०॥

जे तलि राजा सुणी आसीस ।
ते तलि मन थी उतरी रीउ ।
वली वली साम्हुं जोइ ए ॥४१॥

राजा द्वारा परिचय पूछना :

सनमुख जोतांही इ विमासी ।
अबली बात होइ मोवासि ।
कुण थाणक थी आवीयां ए ॥४२॥

कइ इंद्र इन्द्राणी बेहू ।
यसकीरति धुरि आविदेहू ।
चंदा रोहिणि सुं मिलिए ॥४३॥

सूरयना देव सरीसु ।
माणस रूप न हुइ ईसु ।
कामि सहित सुरति हुइए ॥४४॥

भाणोज युगल ते कारण जाणी ।
सहि गुरु केरी संभलि वाणी ।
लीधी दीक्षा तेहुइए ॥४५॥

एसा निरदय मोरू चित्त ।
पुण्यवंत घरे ये सुचित्त ।
स्नेह उपनु अतिघणु ए ॥४६॥

राज चिन्हि दीसि सवे अंगि ।
सामुद्रक बोलिन वररंगि ।
ते ते सवि इहा अछिए ॥४७॥

राजरिधि सघली काइ छांडी ।
बालपणि दीक्षाकाइ मांडी ।
एवडुं साहस काइ कीउं ए ।।४८।।

अथवा एवडी काइ बिमासणि ।
बिसारी सनमुख बली भासणि ।
एवा इवणी [illegible] सह ए ।।४९।।

राजा बलिक साह्यमुं जोय ।
पाप बुधि सघली ते धोइ ।
बिनि करीनि पूछीउं ए ।।५०।।

कवण कुल बेले तह्मे अवतरीया ।
सूरज जिमि तेजि परिवरियां ।
कुणि कारणि दीक्षा लेइ ए ।।५१।।

जे कारण छि मनमाहि मोरा ।
सम देउं छुंहुं गुरु तोरा ।
जु तुम्हे कांई उलवु ए ।।५२।।

क्षुल्लक द्वारा उत्तर देना

क्षुल्लक[1] बलतुं इम बोलि । जाणे सुरगुरु केरि तोलि ।
काई कहुं ब्रह्म पूछीइए ।। ५३

पाप बुधि छि राजन तोरी । धर्म कथा छि निश्चल मोरी ।
तु आपणउं किम मलिए ।। ५४

येह बिमास्युं छि निज चित्ते । तेति जाण्युं छइ पुण तत्वे ।
हृषि बिमासणी करिए ।। ५५

खडग कोस तव धरूं राइ । हृष्ट ठवी छि बलिक पाइ ।
कर जोडी ए सुं भणिए ।। ५६

कहु स्वामि तह्म तणएं चरित्त । सहू सांभलयो एकि चित्त ।
कोलाहल को मां करुए ।। ५७

लोक सवेनि बोगी नाम । देवी पुण चित्त कीधुं ठाम ।
ब्रह्मचार तब इम भणिए ।। ५८

पुण्य तथा सहूइ सांभलयो । पाप बात माहि छि टलयो ।
सवि सुख पामउ तु सहूए ।। ५९

---

1. मूल पाठ—ब्रह्मचार

जे जै मई निज नयणे दीठउ । कर्मज जाणी अति घणा मीठउं ।
ते पुण अंगि भोगव्युए ।। ६० ।।

वस्तु—कहि षुल्लिक सुणउ सहू बात ।
जिणि कारणिमि दुख सह्यां । जेणि कम्मि बहु जोणि फिरियां ।
जिणि जिणि भवि जिम भोगव्यउं । जेम जेम बली पाप भरीया ।
ते ते परि सघली कहुं, सहू सांभलयो सार ।
कुमध विमाउण सांथ त्यजीय, जिम तिरसु संसार ।। ६१ ।।

अथ ढाल श्रीजी
(३)

उज्जयिनी के राजा यशोधर का वर्णन

जंबूदीप वखाणीइ भारत क्षेत्र मझारे ।
मालव देश[1] सोहामणु, नयरी उजेणीय[2] सारे ।। ६२ ।।

गढ मठ मंदिरउ रडा देउल संख न पारे ।
वाजिय वन सर वर घणां वाईय कूप अपारे ।। ६३ ।।

नयर नवेश नदी वहि सिप्रा नाभि गंभीरे ।।
राय यसोधर[3] नामि तिहां राज करि अति सूरो ।। ६४ ।।

दाता धर्मी ववेकीय भोगीय गुणह भंडारो ।।
समकित रयण विभूषी श्रावक तणउ आचारो ।। ६५ ।।

चन्द्रमती[4] राणी तिसु जाणे नारि अनंगो ।।
भोगवि सौख्य विवधि परितेहसुं नव नव रंगो ।। ६६ ।।

चडतिगो वनराउनि राणीनी पूगीय आसो ।
उदर तणि दुख वसतोलां पूरा मुझ नव मासो ।। ६७ ।।

पुत्र जन्म

दसमि मासहं जनमीउ उत्सव हुइ अनन्त ।
जिनवर बिंबज पूजीनि दान सु दीधां बहुत ।। ६८ ।।

जे जिणि याचक वांछीउ ते ति सुदीधो लु दान ।
कुटंब लोक सजन तिणि आपीय वस्त्रनि पान ।। ६९ ।।

सातमइ दिवस सजन मिली मिसी दीधुं तव मुझ नाम ।
पुत्र यशोधर एहज करसि तातनुं काम ।। ७० ।।

---

1. मालवा प्रदेश
2. उज्जयिनी नगर
3. राजा का नाम
4. रानी का नाम ।

जिम रहु तिहां वधरू तिम तिम राउ प्रवास ।
आधि सोवन गयवर हयवर केरडा ह्लास ॥ ७१ ॥
पंच वरस इणी परि गयां अलुथंड बालपण जाम ।
राइ जिणेसर पूजीनि भणवा मूकीउ ताम ॥ ७२ ॥

उपाध्याय के पास पढ़ने जाना

जैन उपाध्या भणावतां भणीयमि वियाले सार ।
पनरवरस लगि हुं भणयु पाम्यु भणवानु पार ॥ ७३ ॥
राउ काह्नि मुझ लेई गउ पंडित नीपनु जाणी ।
राइ पंडित मानीउ बोलीउ मधुरीय वाणी ॥ ७४ ॥
राइ तवहूं पूछीउ कहु वरस भणवानी बात ।
कुण कुण ग्रंथ ज जोईया कुण कुण शास्त्रनी भात ॥ ७५ ॥
राउ प्रति तव मइ कह्यु सुणउ नरेसर आज ।
पंडित जे हुं भणावीउ कीधो लुं जे मुझ काज ॥ ७६ ॥

पढ़े हुए विषयों का नाम

वृत्ति काव्य अलंकार तर्क सिद्धांत प्रमाण ॥
भरह नह छंद सुपिगल नाटक ग्रन्थ पुराण ॥ ७७ ॥
आगम जोतिष वैदक हय नर पसूयनु भेह ।
चैत्य चैत्याला गेहनी गढ मढ करवानी तेह ॥ ७८ ॥
माहो माहि विरोधीइ रूठा मनावीइ जेम ।
कागल पत्र समाचरी रमोवनी पाईइ केम ॥ ७९ ॥
इन्द्रजाल रस भेद जे जुयनइ भूभनु कर्म ।
पाप निवारण वादन नर्त्तन नाह्नि जे मर्म ॥ ८० ॥
वली वली काह्न पूछयु जे जे विद्या विसेष ।
जे जे यहुंय भणावीउ नही पंडित पोडनी रेष ॥ ८१ ॥
पंडितनि तूठउ दिइ लाष दीनार ।
वस्त्र ते भीलतणां सबे आपीय सार श्रृंगार ॥ ८२ ॥
किम करी शास्त्र जमुकीय आलीय अंगने वार ।
छत्रीस आयुधजे अछिते परिजाणीय सार ॥ ८३ ॥
इम करी यौवन पामीय वुल्यु बालापण जाम ।
विवाह् करवा कारणि राउ विभासिद्धि ताम ॥ ८४ ॥

राउ जे अथ कैशकि तरिण तीरिण पाठवीउ जे दूत ।
देश विदेश छांडी करी नयरी उजेणी पहूत ।। ८५ ।।

राज सभा माहि आवीय बहूठउ करीय प्रणाम ।
आदर राइ पूछीउ आव्यु तूं कुण ठाम ।। ८६ ।।

कर जोडी ते वीनवि सुणउ नरेसर काम ।।
अथ कैशक नरपति अछि भूपाल तेहनुं नाम ।। ८७ ।।

नारीय रूपि आगली राणी श्रीमती जास ।
अमृत महादेवी अछि किन्या रतन ते तास ।। ८८ ।।

यशोधर कुंवार का विवाह

कुमर यशोधर कारणि देवा किन्या ते सार ।
मोकल्यु राइ तह्म तणु देषवा घरह् आवार ।। ८९ ।।
दूत तणी भूपति सुणी बोलिव राय उछाह ।
यहां आणी कान्या तुम्हे करउतु सहीय वीवाह ।। ९० ।।
दूति फोफल पालवां राइ संतोषवा तेह ।
वस्त्र विभूषण आपीनइ मोकल्यु कैशक एहु ।। ९१ ।।
पहिलु लगन पठावीनइ बहु दल मेल्युं छि राइ ।
सजन लोक सोह्लासणि नाचि गीति ते गाइ ।। ९२ ।।
राउ राणी सजन सहू मेली बहु दल जाम ।
कन्या सहित महोत्सवि आव्या ऊजेणीय नाम ।। ९३ ।।

वस्तु—ताम नयरी ताम नयरी भउ उत्साह
पुरह् लोक तब सवि मिल्यु घरिहि घरिहि प्रक्षाराणीय ।
ल्यावीया राउ जसौधज हरषीउ वनह् मझि सुणीयान आवीय
तलीया तोरण उतीर्या सूडी ते वसरवाल ।
कन्या वरह् वधावीइ भरी करी मोती थाल ।। ९४ ।।

अथ ढाल चउथी

(४)

वधोला घरि घरि हुइए मालंतके उछव सहित अपार ।
सुणि सुंदरे उछव सहित अपार । तेल चडावि कामनीए मा०
गीत गाइ अति सार ।। सु० ।। ९५ ।।

नाहीय धोईय उठीउए । मा० । आणीय सवि सिणगार । सु० ।।
पहिरीय उठीय नीसरयु ए । हूउ तिहां
जय जयकार । सु० ।। ९६ ।।

शांतिक पौष्टक सवि करीए । मा० । चउडीउ गय वर पूठि । सु० ॥
राइ राणी सहू चालीयाए । मा० । दान देउ भरी मूठ ॥ सु० ॥ ६७ ॥

वनह माहे तब आवीया ए । मा० । हुई यद्धि लगन नी वार ॥ सु० ॥
तोरणि पहु तुं ढुं वरू ए । मा० । कोषु मंगल चार ॥ सु० ॥ ६८ ॥

जब कन्या मि पेखीइ ए । मा० । अपतु अतिहि आणंद ॥ सु० ॥
रूपनी ऊपमा किम कहुं ए । मा० । मुख जिसु पूनिम चंद ॥ सु० ॥ ९९ ॥

हाथ वालुभलीउ ए । मा० । चापीउ पाणि सु पाणि ॥ सु० ॥
किन्या मुरकलु देई हसीए । मा० । बोलीय अमृत वाणि ॥ सु० ॥ १०० ॥

हाथे वालु मूकलां ए । मा० । सुसरि आपीय रिद्धि ॥ सु० ॥
पाये लागी आसीस देइए । मा० । बहू वर पामयो वृद्धि ॥ सु० ॥ १०१ ॥

वीवाह उत्सव करतीउ ए । मा० । दीधोलु दान बहूत ॥ सु० ॥
कन्या लेई सजन सु ए । मा० । मंदिर वेगि पहूत ॥ सु० ॥ १०२ ॥

वेवाहीय बुलावीया ए । मा० । जसहर करीय पसाउ ॥ सु० ॥
नुलर्‍या जन सहू परिगर्‍या ए । मा० । पूजीया धरीय बहुभाव ॥ सु० ॥
॥ १०३ ॥

सुख सागर भीलु सदा ए । मा० । जातु न जाणु दीह ॥ सु० ॥
अमृत महादेवी लहीए । मा० । सिहनी पामीउ सहि ॥ सु० ॥ १०४ ॥

इणी परि राज करंतडां ए । मा० । वुलीउ अति घणु काल ॥ सु० ॥
राइ सिणगारज पहिरीउए । मा० । तिलक तै
रचीयो लुंभालि ॥ सु० ॥ १०५ ॥

बइठउ राजा जसोहरु ए । मा० । सघली सभायते पुरि ॥ सु० ॥
सुरतर सरीषु दान गुणिए । मा० । दालिद्र करइ ते दूर ॥ सु० ॥ १०६ ॥

यशोधर द्वारा दीक्षा ग्रहण का विचार

आरीसि मुख जोयतां ए । मा० । कान मथा शिणगार ॥ सु० ॥
पलीउवाल पेषी करीए । मा० । हीयइ बइ उपनु भाउ ॥ सु० ॥ १०७ ॥

जरां इवि गोढ लोक सहू ए । मा० । कीजि आपणु काज ॥ सु० ॥
दीक्षा लेउं हूं जिनतणी ए । मा० । बेटा देईव राज ॥ सु० ॥ १०८ ॥

हुं तब राइ हकारीउ ए । मा० । देवा लागु सीष ॥ सु० ॥

पुत्र को शिक्षा देना

आपणि कुल जे उपजिए । मा० । बडपणि लेइ ते दीष ॥ सु० ॥ १०९ ॥

समकित रयण तुं पालजे ए । मा० । टालीय सयल मिथ्यात ।। सु० ।।
धर्म अहिंसा मनि धरी ए । मा० । बोलिम कूडीय साखि ।। सु० ।। ११० ।।
चोरीय वात तुं मां करे से । मा० । परनारी सही टालि ।। सु० ।।
परिग्गह संख्या नितु करि ए । मा० । गुरुवाणी सदा पालि
।। सु० ।। १११ ।।
न्याय पालं लोकह सहू ए । मा० । रयणीय[1] भोजन वारि ।। सु० ।।
वली वली बेटउ सीषविए । मा० । राउ ते कुलह् अचार
।। सु० ।। ११२ ।।
इणी परि पुत्रह सीखव्युए ।। मा० ।। दीधुं तब मुझ राज ।। सु० ।।
राइ तब दीक्षा लेई ए । मा० । कीधुं आपणुं काज ।। सु० ।। ११३ ।।
राउ राणी सवि बिस कीया ए । मा० । करीयनि गुथ बहूत ।। सु० ।।
देश विदेश जीपी[2] करीए । मा० । आपणि गामि पहूत ।। सु० ।। ११४ ।।
आण.न लोपि मुझ तणीए । मा० । राजनुं एह ज सार ।। सु० ।।
तव मुझ राणी पुत्र जण्यु ए । मा० । उद्धरवा कुल भार ।। सु० ।। ११५ ।।
आगि राणी वल्लही ए । मा० । पुत्र करीय विसेष ।। सु० ।।
रूपरंगिरस रूपडी ए । मा० । कर इछइ नितु नवा वेष ।। सु० ।। ११६ ।।
जाणे सो निसुं घड्यु ए । मा० । राणी केरडु देह ।। सु० ।।
दिन दिन वाधि अति घणु ए । मा० । राणीय सरिसु देह
।। सु० ।। ११७ ।।
पुत्र जसोमति[3] वाधतु ए ।। मा० । आप्यु पदमा हाथि ।। सु० ।।
शास्त्र सवे भणावीया ए ।। मा० ।। आवीउ पंडित साथि
।। सु० ।। ११८ ।।
अति घणुं धनमि आपीउ ए ।। मा० ।। पंडित निमि रीझ
।। सु० ।। ११९ ।।
जु मुझ पुत्र पढावीउ ए ।। मा० ।। काज अम्हारउं सीझ ।। सु० ।।
मोवन करीय विभूषीउ ए ।। मा० ।। मांगीय किन्या म ।। सु० ।। १२० ।।
सुकिन्या परणावीउ ए ।। मा० ।। लगन हुए कि ठाम ।। सु० ।।
यसोमति कुमरज रूपडुए ।। मा० ।। मुझ सुं अतिहि सनेह
।। सु० ।। १२१ ।।
बेटउ किम नवि वल्लहु ए ।। मा० ।। आपणु बीजु देह ।। सु० ।।
इणी परि राज करंतडां ए ।। मा० ।। दिवसह पश्चिम भाग
।। सु० ।। १२२ ।।

1. रात्रि भोजन मत करना
2. विजय
3. रानी का नाम

हुं बिठउ सभा पूरी करीए । मा० । चित्त लागु बरि राग ॥ सु. ॥
तब राणी गुण सांभरयाए । मा० । मोहनु बडउं विनाण ॥ सु. ॥ १२३ ॥
राणी गुणि रस भेदीउ ए । मा० । मूकी सघलु माण ॥ सु. ॥
राणी विण जे जीवीइ ए । मा० । ते विण किसउं मनाण ॥ सु. ॥ १२४ ॥
जे घडी जू जूयां बिसीइ ए । मा० । तिणि खिणि आवि हाणि ॥ सु. ॥
आज विहाणि देइसु ए । मा० । यसोमति नीयराज ॥ सु ॥ १२५ ॥
राणी विण जु खिण रहुं ए । मा० । तु मुझ आवि लाज ॥ सु. ॥
पहुर एक रयणी गई ए । मा० । विठोलां सभाह्न मझार ॥ सु ॥ १२६ ॥
आरती अवसर तव हूउए । मा० । मालंतडे बोलाव्यु पडीहार ॥ सु. ॥
पान देईनि मोकल्याए । मा० । नरपति सहूय अवास ॥ सु. ॥
सभाह विसर्जी उठीयाए । मा० । पुहुतु मंदिर पासि ॥ सु. ॥ १२७ ॥

वस्तु

ताम पुहुतु २ गेह द्वारंति
तिहां उभी वर कामनी, तेह मध्य जय शब्द बोलि ।
परि २ पगथीहुं चड्यु, तेह गेह सुर भवन तोलि ।
सातमी भूमि बुली करो, आठमी भूमि मझारि ।
तिहां थी राणी उत्तरी, करती जय जयकार ॥ ४ ॥ १२८ ॥

अथ ढाल पंचमी

पगि लागी राणीयिणि लीए, नारे सूया राइ साही हाथि ।
राजभवन माहे गयांए, नारे सूया राइ साही हाथि ॥ १२६ ॥
अवरस बीजी साथि, बिठउ राजा सेजतलिए ।
राणीय अंकि विसारि, हसि रमि राजा रसिए ॥ नरे ॥ १३० ॥
व्यापु काम विकार, कामरंग सुख भोगवीए ।
पुहुयु हुं मरनाह, मुज पंजरि राखि करीए ॥ नरे ॥ १३० ॥
मन माहि उपनी तात, च्यार जात नारी तणीए ।
ते माहि पदमनी जाति, चंद्र यकु मुख रूपडुंए ॥ नरे ॥ १३१ ।
नयणे अतिहि विशाल, अाठिय चंद्र सरीखडुंए ।
दीसि सुंदर भाल, जसु सोनुं तापव्युए ॥ नरे ॥ १३२ ॥

जाणे नारि अनंग, राणी गुणे अति मोहीउए।
नींद न आवि जाम, मनह झमालिडं पड्युए ।। नरे ।। १३३ ।।

हूईयविमासण ताम, जु चंपासि हाथ मुझ।
चायूय पूठसि अंगि, जु जागु तु जगसिए ।। नरे ।। १३४ ।।

रूप तणु होसि भंग, इम जाणी मिश सास धरीए।
कूडीयं नीदज कीध, येम रंगस्स आकुलीए ।। नरे ।। १३५ ।।

तब राणी मन दीध, हूं सत्र राणी जाणीउए।
राणी विमासिए मा, मुज मीठी किम नीसरए ।। नरे ।। १३६ ।।

रानी का चुपचाप कोढी के पास जाना

सेज अ छाडु अम काय संकोची कामिनीए।
शिनि शिनि नीशरी हेवि, जिम सापिण छांडि कांचलीए ।। नरे ।।
।। १३७ ।।

नीसरी बार उघाडि, जु स्त्री मारग छांडीउए।
नथी कहिनि पाडि, इम देखीहुंउ पठीउए ।। नरे ।। १३८ ।।

खडगज हाथ धरेवि, अंधार पछेडउ उठीउए।
पूठि नीसरीउ एव, तव ते राणी उतरीए ।। न ।। १३९ ।।
पुहुती बोलि बार, कैवि चकु हुं चालीउए।
आतां न लागी बार, तिहां सूतउ छि पोलीउए ।। न ।। १४० ।।
तेहनी कुष्टी देह, हाथ पाय सवे गलि गयाए।
दुःसह भाषण एह, उंडीय आंखिज रातडीए ।। न ।। १४१ ।।
अंगि कुलक्षण जाम, राणी प्रेमवि आकुलीए।
पग तिल बिठी ताम, गोडि अंगूठउ जगावीउए ।। न ।। १४२ ।।
साहीय झूंटे तेण, जु तुं मुडी आवीयए।
तुं तुं तेडीय केण, सांकलि घाइ ताडीइए ।। न ।। १४३ ।।
जीय जीय जंपि ताम, पापी राउ न छुंटीउए।
किम करि आवुं स्वामि, कोप्यु जु मुझ उपरिए ।। न ।। १४४ ।।
विहिली आवे सनाह, हसउ रमउ करूणा करूए।
मीयतुं वोहिडी साहि, इसुं चरितमि पेखीउंए ।। १४५ ।।

खडगड लाव्यु ताम, खडगज तव ते गडमव्युए ।
हूं ईय विमासए ताम, विरीय बृंद निपालीयाए ।। १४६ ।।
वाह्लीय खडगज एह, कोढीय नारी उपरिए ।
किम करी वाह्रु तेह, जाणी यौवनि आपीउए ।। न ।। १४७ ।।
पुत्र यसोमति नाम, माइ बाप जे मुझ दीइए ।
तेह हणी कुण काम, एम विमासी हूं गउए ।। न ।। १४८ ।।
वेगि पहूतु अवास, खडग मूकीनि पुढीउए ।
रीसि मूकीनी सास, नारी पापज आणडीए ।। न ।। १४९ ।।

नारी निन्दा

नारी विसहर वेल, नर वंचे वाए घडीए ।
नारीय नामज मेलिह, नारी नरक पतोलडीए ।। न ।। १५० ।।
कुटिल पणानी खाणि, नारी नीचह गामिनीए ।
साचु न बोलि वाणि, वाघिण सापिण अगनि शिखा ।। न ।। १५१ ।
घर आलंगीय एह, दोष निधाने पूरीउए ।
नारी केस देह, साहस माया नितु वसिए ।। न ।। १५२ ।।
कामिनी काय मझार, नवधारा शुचि श्रावणीए ।
धिग धिग मामज नारि, इम चितवंता पापणीए ।। न ।। १५३ ।।
मूक्यू सघलु वेश, जिम जिम पहिलु नीसरीए ।
तिम तिम कीयउ गवेस, साहस एसु पेखीउए ।। न ।। १५४ ।।
मन माहि हूईय भ्रतिभ्रंत, नारी साहस पार नहीए ।
नारी छाड्यु माहंत, पेरवी लक्षण तेह तणाए ।। न ।। १५५ ।।
मलीय पुराणी मीत, नारी चंचल जाणीइए ।
पलव ऊतरीय चित, दैव दैव करंतडाए ।। १५६ ।।
तव हूउ परभात, गाइ गीत पंचम सरिए ।
मंगल वंदणि जात, तव सिज्या थकु उठीउए ।। न ।। १५७ ।।
कीधु मात सनान, वस्त्राभरण विभूषीउए ।
बीउ बीउ पूख वान, मुख उतरती आहणीए ।। १५८ ।।

फूल बीटमइ नारि, चेत रहित धरणि पडीए।
मूरछ मसि तिणी वारि, हसीय करी तवमि भणयुं ए ।। न ।। १५६ ।।
जोउ नारि विचार, समुद्र तणां बिंद जोयतांए।
नारीय चरित न पार, साकल घाइ आहणीए ।। न ।। १६० ।।
जीय जीय जीय भणंति, फूल बीध्मि दूहवीए।
मूरछी धरणि पडंति, ततक्षण तव ते उठीयए ।। न ।। १६१ ।।
हुं पण नासीय जाम, सभा मझारज आवीउए।
बिठउ सिंघासणि ताम, नारे सूया राइ साही हाथि ।। १६२ ।।

वस्तु

जाम बिठउ जाम बिठउ सभा पूरेवि
जिहां पुण सकल शास्त्र लेई वली ऊपास आव्यु।
वाचंतु सिद्धांत मझह, मनि ते नैव भाव्यु।
तव माता मुझ पालखी बिसी आवी जाम।
सभा सहित उठी करी, बिठउ करीय प्रणाम ।। १६३ ।।

अथ ढाल छठो

माता से वार्ता करना

संतुठी मुझ देख करि, माता दियई आसीस।
पुत्र परिवार सजन सहू, हीडोलिडारे जीव यो कोडि बरीस ।। १६४ ।।
माता तव हूं पूछीउ, कुशल विहाणी रात।
शिर धूणी निमि भणइही, हो माता म पूछ सुवात ।। १६५ ।।
माता मु मति इम भणि, कहु वरस कहा काज।
तवमि माता सुं कहयुं, हो सोयणडउं लाधो तुं आज ।। १६६ ।।
वनि जाई दीक्षा लेउं, देईय बेटा राज।
घरि रहुं तु उपजि, हीडोलिडारे जीणि अविमुझ लाज ।। १६७ ।।
माता मु मति इम भाणि, संभलि तुं मुझ बात।
पूजिसुं गोत्रिज आपणी, सोयणडउं वारसि तात ।। १६८ ।।

माता का उत्तर

जल थल नाजे जीवड़ा. बलि बाकल नैवेद्य ।
कात्यायनी देवीय थि. ही. सोयशाड़ छेदसि तेह ॥ १६६ ॥

हंसा वचनज संभली, काल्पु हीमहि ताम ।
मु आगलि ए कांइलीउही, हुंसा केरडु नाम ॥ ही. ॥ १७० ॥

शिरधुणी माता मतिमि बयणाज बोल्यु सार ।
कुल शुद्ध राजकुमर हुइ, हीडाविडारे तेनवि बोलि मार ॥ १७१ ॥

पापी इ पापी हुइ, धर्म्मी इ धम्मी होइ ।
राजा पदवी जिन लही, इम बोली सहू कोइ ॥ १७२ ॥

माता मु मति इम भणि, मूरख पणुउ निवार ।
राज बोटजु जाणीइ, पावन लागि लगार ॥ १७३ ॥

वेद स्मृति वाणी इसी, कारण पुण्यज होइ ।
ऊखध माहि विष खाइताही, तीणि मरइ न कोइ ॥ १७४ ॥

माइ तापसु मारीइ, अनि जीवह केरी राम ।
मन माहि नवि आणीइ, पाप न लागइ ताम ॥ १७५ ॥

बिहु करे करणज डांकीयामि बोल्यु तब सार ।
काया वाचा मनि करी, हंसी हो वयण निवार ॥ १७६ ॥

जुतो हंसा वल्लही नीयसिर आपु ताइ ।
जिम जाणि तिम तु करे, जीवन मारउं तोइ ॥ ही. ॥ १७७ ॥

माता तव बिलखी हुई, मुञ्क मुख वयण सुणेवि ।
कणिकनी पाउ कूकडु तीणि तु पूजे देवि ॥ १७८ ॥

पाप मति मि मानीउं, लेईय एकाकार ।
लेईय पीठमि कुकडु, पुहुतों ला देव दुवार ॥ १७९ ॥

देवी के आगे कूकड़े को मारना

देवी आगलि ले हण्यु पीठह कूकड राइ ।
जीव घणा तु मान जो, एसउं बोल्यु माइ ॥ ही. ॥ १८० ॥

देवी मंडपि नृप देइ सघलु राजकुमार ।
राणीय तव ते सांभल्युं, तिहां आवी तिणी वारि ।। १८१ ।।
राजा पागि लागी रही, राणीय बोलि ताम ।

रानी द्वारा घर पर भोजन के लिये निमन्त्रण देना

ए वैरागज एवडु, कहु स्वामी कुण काम ।। १८२ ।।
आजमया करी मु यति, मुझ घरि करउ रसोइ ।
दीक्षा कालि लेईनि, तप करसां जण दोइ ।। १८३ ।।
तीणे वयणेमि मानीउं, भोलपणि ते भूप ।
जिन पूजानिवानीउ, जाणतु राणी सरूप ।। १८४ ।।
मुहि मुहि तिहां गउ, राणी तणइ आवास ।
कर जोडी सान्ही रही, बोलिउं ताहारडी दास ।। १८५ ।।
सोवन थालज मांडीइ, रूपा आसण दीध ।
माइ सहित बिसारीउ, अति घणी भगतिज कीध ।। १८६ ।।
बेदु बहूयरनु तीया नारीय सवलि मझि ।
जीमाडी आदर करी, कहि नवि आवइ मुझ ।। १८७ ।।
साक पाकरयु रसवती मूकीय थालि भरे वि ।
माहि थिरि राणी जीमावही, हीयडोलि कूड धरेवि ।। १८८ ।।
अध जमती राणी कहि, स्वामीय सांभलि बात ।
पीहर थी कांई मूखडी, आव्या हुया दिन सात ।। १८९ ।।
तो विण मे कांई जोइवा मांगि अछि केम ।
अवसरि तु नवि पामीइ, तुहुं जोयउं केम ।। १९० ।।

राजा को विष के लड्डू खिलाना

अध जमती ते उठीय जाईय माहि अवास ।
पेई आणी उघाडीइ, मूकी छिराउनि पास ।। १९१ ।।
विष मोदक दोइ काढिया, एक माय एक राइ ।
रूडा ते बीजा दीया, बंली वली रे लागि छिपाइ ।। १९२ ।।

कुटकुलवमि चाखीउ, आंगगु ब विनाण ।
तिगइ विषि हुंयारीउ, राणी नी लोपी न काण ॥ १६३ ॥
विष भारया घरणी पडयु हुउ एक पोकार ।
मड तिमि तव हुय भण्यु, विष तणा देव हूकार ॥ १६४ ॥
मुझ वाणी जव सांभली, राणी चितीताम ।
बेद्य जीवाडि रावनि, तु मो विणसि काम ॥ १६५ ॥

रानी द्वारा विलाप

इम चीती हाहा करी, छोडिय केश कलाप ।
मूरछ मसि उपरि पड़ी, हीयडलि आणीय पाप ॥ १६६ ॥
तुझ विण राणा राउला, आंगुलडीय देखाडि ।
निरधारी तु कांइ करि, कांइन करइ संभालि ॥ १६७ ॥
मूरछ मसि उपरि पडी, गलइ अंगूठउ देइ ।
चांपवि कंठ सोहामणु, प्राण रहित कीधा देह ॥ १६८ ॥

राजा का दाह संस्कार करना

राय राणा तव सहू मिल्या, मांडीय एक पोकार ।
माइ यसोधर बिहुनि, चंदन देउ संस्कार ॥ १६६ ॥
गाइ भूम सोनु देइ, मिलीया सवि परधान ।
ब्राह्मण सवि तेडी करी, अति घणु दीधो तु दान ॥ २०० ॥

यशोमति द्वारा राजा बनाना

राय राणे संघर्वे मिली, कुमार बिठास्यु पाट ।
राउ यसोमति थापीउ, जय जय बोलि छ भार ॥ २०१ ॥

वस्तु

तेह राजन तेह राजन पाप भरि भावि ।
जे जे दुःख वसीमि सहा, जोका परिभव सहीउ ।
जिम जिम जिहां जिहां उपना, जिसी २ गति दुःख भलीया ।
जिणी जिणी परि परि भव्यउ पीडी कुकड काजि ।
ते ते सविहुं तुझ कहुं, संभलि तु महराज ॥ २०२ ॥

अथ ढाल सप्तमी

गंगा हिमवन अंतरिए, गिरिवर अति उत्तंग तु ।
नाम सुवेलु जेहनु ए, वीसि मतिघणु श्रंग तु ।। २०३ ।।

मोर का जन्म मिलना

कंटाकुल जे दंखडाए, काकर कठिन विशाल तु ।
अतिभीषण सुगामणु ए, जाणो नरक निवास तु ।। २०४ ।।
तिणि गिरि ढेल धणि उरिए, उपनु हु ताम तु ।
मातः मुझनि पांख करेवि विढांकी ताम तु ।। २०५ ।।
तिह परवत पु ढूकडउए, मछद मच्छी गाम तु ।
तिहां थकु एक पारधीए, पुहुतु तिणि ठाम तु ।। २०६ ।।
ततक्षण तीणि बाण हणी, खांध चडावी ढेल तु ।
नाहनु सु मुझ पेख करे, चाल्यु फाटि मेल्हितु ।। २०७ ।।
घरि जाई घर आंगणिए, मूकी खाण मझार तु ।
ढेलवी केर्या ते गउए, मलीउ ताम तलार तु ।। २०८ ।।
ढेकऊ दीली तीणी लीइए, ठालु आव्यु गेह तु ।
कामिनी कृत्या तस तणी एकाढय् कूटी तेह तु ।। २०९ ।।
मुलेई नइ पारधीए, गउ तली एरह पासतु ।
माणु सानु तिणि दीउंए, हु दीधि तिणि तास तु ।। २१० ।।
तिसु तलार धरि ऊछरयु ए, पाम्मु पूरू काय तु ।

उज्जयिनी के राजा के पास ले जाना

उजेणी नयरी लीउए, जिहां जसोमति राउतु ।। २११ ।।
भेटयु ते देखी करीय तब मनि हरष्यु भूप तु ।
जि माता साथि मुईए, सांभलि तेह सरूप तु ।। २१२ ।।
करहाटक देवि हुवए, मोटु स्नान कराल तु ।
मोटी दाढे ऊजलुए, मुख तेहनु विशाल तु ।। २१३ ।।
राई तेह देशह तणिए, सोवन संकलि जू तउ ।
पारधि रस तिणि आणीउए, राउ जसोमति नित तु ।। २१४ ।।

तीणि तिहां ते पाठव्युए, आव्यु सभा मझार तु ।
तेह दर्शन राउ हरखीउए, जोऊ कर्म विचार तु ॥ २१५ ॥
लुंड मसाणी नइ दीउए, स्वानज पालण काज तु ।
हुं पुण गरहीनि दीउए, संतोषि नरराज तु ॥ २१६ ॥
एक दिवस मि पेखीउं ए, राणी रमाडी रंग तु ।
विठी रलीया इन कईए, कूवड तणि उत्संगि तु ॥ २१७ ॥
भाही समरि जाणीउए, तव मनि उपनी रीस तु ।
कोधि गयणिहि उडीउए, नख रेहणीयां सीस तु । २१८ ॥
राणी रीसि मूकीउए, निज मूखणनु घाउ तु ।
घामीय मूरछा ते पड्युए, जिहां बिठउछि राउ तु ॥ २१९ ॥
तव रांड एमु भण्युं ए, लिह लिइ ए मझि जाम तु ।
स्वानि संकल ओडि करे, ग्रहीउ कंठि ताम तु ॥ २२० ॥
तव रांड माथि हव्यु ए, रमतां सो गढ स्वान तु ।
तिणि घाइ ते स्वान तणी, जीव हुती हुई हाणि तु ॥ २२१ ॥
ते पंखियां दोइ पेख करे, रांइ विलापज कीध तु ।
तेडी सजि जन आपणाए, दसी सोरवामणि दीधतु ॥ २२२ ॥
संस्कार अगरि देउए, देउ सोवर्णह दान तु ।
गंगा अस्थिज पाठवुए, मोर तणांनि स्वान तु ॥ २२३ ॥
स्वर्गि जई सुख भोगविए, जिम बईयाई तात तु ।
कंठ गइथि जीवडिए, मितवसुणीयए बात तु ॥ २२४ ॥
तीणे ते गहइ कीउंए, तव दोइ छंडि सरीर तु ।
गिरि हि सु वेलि भीमवनि, गंगा केरि तीर तु ॥ २२५ ॥

मोर एवं स्वान मार कर सर्प एवं सेहलि होना

मोर मरी तिहां उपनुए, कालु मोटु सांप तु ।
स्वान बली सेहलु हुउए, भीमवतु निज पाप तु ॥ २२६ ॥
एक वार जब दोइ मिल्याए, सेहलि साम्हु नाग तु ।
सापि सेहलु फणि हण्युए, आवर नहीं कोइ लाग तु ॥ २२७ ॥

मेहलि पलग मारीउए, सब तरिछि जे जीव तु ।
नीगइं सेहलु सब हण्यु ए, करतु अलिघणु रीवतु ।। २२८ ।।
उज्जेणी तलि जे वहिए, सिभा नदी सुसार तु ।
सेहलु मरी तिहां उपनुए, महामच्छ सिसुमार तु ।। २२९ ।।
सांप मरी तीणी नदी ए, रोहीतणि अवतार तु ।
मच्छ मला गलि उछरयाए, जाति तणि विचार तु ।। २३० ।।
एक बार रोही घरयु ए, जल माहि सिसुमार तु ।
दासी राजा केरडी ए, भीलेवा तिणि वार तु ।। २३१ ।।
भग देई दासी पडीए, मच्छह उपरि जाय तु ।
हुं मूक्यु दासी ग्रही ए, नीगों बुनाव्यु ताम तु ।। २३२ ।।
दासी बीजी नासि गई, तेहे वीनवीउ राउ तु ।
तुझ दासी माच्छि गलीए, कांई करूं उपाय तु ।। २३३ ।।
रांद मच्छ कढावीउए, मोकलि धीवर घाड तु ।
जो सरि करी ग्रीलावीउए, तेतही कहि निपाडतु ।। २३४ ।।
रांह माहं ते भख्यु ए, जोउ करम विचार तु ।
तवहुं नासीनि गउए, बीजाद्रह मझार तु ।। २३५ ।।
एक दिवस तिहां ग्रावीयाए धीमर घाडि विशाल तु ।
तेहे लांख्यु जालि पड्यु ए, रोही मच्छ जाण तु ।। २३६ ।।
बाहिर काढी लांखीउए तेहे मच्छ जाम तु ।
ढेंबाल हणता देख करे, बूढउ बोल्यु ताम तु ।। २३७ ।।
मम को एहनि मारसुए, रोही मच्छ उ नाम तु ।
मि जाण्यु मूका वसिए सरयु, ग्रम्हारूं काम तु ।। २३८ ।।
ग्राज हण्यु युविलांससिए, लेईय चालु गेह तु ।
ते सवि लेई घरि गयाए, लांख्यूं करडी तेह तु ।। २३९ ।।
तिहां रह्यां बहु दुःख सह्याएं, संपतु परभात तु ।
राजभवनि लई गयाए, जिहां राजानि मात तु ।। २४० ।।
राजा माता मति भणिए, रोही मच्छ छव एह तु ।
करउ श्राद्ध ता सहु तणु ए, स्वर्गह कारण तेह तु ।। २४१ ।।

तिणी पापणी बली तिम किउं ए, तेकी बंभणसार तु ।
जाती समरण शुभ हुउंए, राजन तीणी वार तु ॥ २४२ ॥
हवि अंतिज आवि ऊछक ए, नयरी उजेणी पास तु ।
करि[illegible] धर्म रोमह [illegible], जाणी तव्व विचार तु ॥ २४३ ॥

सिसुमार मर कर बकरी होना

सिसुमार माछु मरीय हुई, छाली तिणि ठाम तु ।

रोही मर कर बकरा होना

रोही मरी वली उपनुए, ते छाली उरि ताम तु ॥ २४४ ॥
मोटु बोकड तेहूउए, तिसु पय पान करत तु ।
जूथा नाथि विलोकिउए, मनि धरि क्रोध अपार तु ॥ २४५ ॥
कूखि सींगि सु हण्यु ए, सुक सहित तीणि वार तु ।

बकरा मर कर फिर बकरा होना

तीसरी जीव तिहां हूउए, छाली उयरि मझार तु ॥ २४६ ॥
आपि आपनी पाईउए, जोउ संसार विचार तु ।
तेह गर्भ मोटु हुउए, जणवा तणि यसंमि तु ॥ २४७ ॥
तेह छाली सु जूथ धणी, करिवा लागु संगि तु ।
राउ जसोमति आवीउए, पारधि प्युतिणिसेवितु ॥ २४८ ॥
कोधि बाणज मूकीउंए, तिणि हणीयां ते बेवितु ।
राजा धाई आवीउए, उदर फडाव्यु तास तु ॥ २४९ ॥
बालक बाहिर काढीउंए, साजु पूरे मास तु ।
अजापाल मति राउ भणिए, जोनि रहित ए आज तु ॥ २५० ॥
बावर माइ पय पान करै, इणि ऊछेरि काज तु ।
राजभवनि राजा गउए, लागु राज व्यापार तु ॥ २५१ ॥
पाप रिधि वणुं मोहीउए, पारधि करि अपार तु ।
पारधि जातां गाउ वली, मान्याभिसा बीस तु ॥ २५२ ॥

जु मो पारधि सफलहुसि तुमि देवा ईस तु ।
दैवयोगि तै सफहूई मारमाभिसा राई तु ।। २५३ ।।
कैता विहिचो श्रापीमा ए देवी केरि ठाइ तु ।
सूश्रारि राजा शीनव्यु ए सांभलितुं भूपाल तु ।। २५४ ।।
भिसा सवेवि टालीया ए स्वान श्रनि सीयाल तु ।
श्रुतयोगई बंभरा भणिए योन रहित जे छाग तु ।। २५५ ।।
श्राद्धयोग भिसा हुई ए लागि ते हूनि पाग तु ।
राउ विमासी श्राणीउ ए चंद्रमृत्य जे नाम तु ।। २५६ ।।
तव तलवर तै श्राणीउ ए राजा भोजन ठामि करतु ।
भाड राजा जिमइ आजीजन सहू नाम तु ।। २५७ ।।
भक्षो न कांई पामीउ ए तरस भूख दुःख ताम तु ।
बंभण जीमीनि गया ए राजा सपरिवार तु ।। २५८ ।।
वहठे जिमवा उपनुं ए जानि समर तिणि वार तु ।
घर पुर नारी पुत्र सहू ए, माहारुं श्रचिह्न एह तु ।। २५९ ।।
एकन देखुं प्राण प्रिया ए श्रमृत महादेवी सेह तु ।
तिणि श्रवसिर दासी भणि ए सुणि सखी वचन विचार तु
।। २६० ।।
एह गंधभिसा तणु ए तुही श्रचिह्न श्रगार तु ।
बीजी सखी तिहां इम कही नहीं ए भिसागंध तु ।। २६१ ।।
मीनासनि कोढिण थई ए राणी श्रति दुरगंध तु ।
शिरधुणी बीजी भणिए नही मीनासन एह तु ।। २६२ ।।
विश देई नाह मारीउ ए पाप तणुं फल एह तु ।
खरखरति गलि बोलीउ ए राणी तामसूयार तु ।। २६३ ।।
साथल कापी श्रापि मुझ छाला सेकि श्रंगार तु ।
तिणि पापी तव तिम कीउं ए बेटा संरसी मात तु ।। २६४ ।।
पाषा लागा श्राद्ध करी मुनि बोलि इसी बात तु ।
तिणि श्रवसरि वली उपनु ए माता तणउ विचार तु ।। २६५ ।।

छाली मरी तव ऊपनी ए कलिगह देस मभार तु ।
भिसु भाराषह हुउए वहिलु होहि भार तु ॥ २६६ ॥

बकरी मरकर भैंसा होना

वणजारा बरबल तणा ए वस्त्र गुणति गीवार तु ।
लेइ उजेणी आवीयाए छाली गुणज ठामि तु ॥ २६७ ॥
ताप कर चाल्यु ते मवइ जिम नदीयज नाम तु ।
भीलति तिणि आवीउ ए राजासन लोधार तु ॥ २६८ ॥

फूलि सिगि सु हृष्यु ए जाणि तणि आचार तु ।
अमृतपालिइ राइ दीनव्यु ए जाण्यु अश्व विचार तु ॥ २६९ ॥
कोपि राइ पाठव्याए भिसा सेमण तलार तु ।
तिणि आणी हत बांधीउ ए राजा भोजन ठाम तु ॥ २७० ॥

हींग लूण पाणी भरीय परीम कडाही ताम तु ।
रंधिपडइ लोहि घणुए मूकि अति पूलकार तु ॥ २७१ ॥

तब रांइ बोलावीउ ए आगलि रह्यु सूयार तु ।
पाकु पाकु छेद करे मागिनला इमवार तु ॥ २७२ ॥

तिणि पापी वली तिम कीउ ए जांकुडि छांडी जीव तु ।
ते छालु तिहां सेकीउ ए करतु अतिघणु रीव तु ॥ २७३ ॥

अतिकष्टि ते बे मूयां ए सुणि राजन आचार तु ।
एक जीव वध पामीउ दुःख घणा संसार तु ॥ २७४ ॥

वस्तु

ब्रह्म बोलइ ब्रह्म बोलइ सुणि न भूपाल ।
जेणीथु कूकडु जेह अच्छिक्ष अतिबालु ।
पांचक लोक करि पूरीउ पाप कर्म वली नरय पासु ।
कूकडी तिहां जेन्मीयां पाप विशेषि बेहु ।
जगाला मात विलालेईतु पापतणां फल एहु ॥ २७५ ॥

अथ ढाल आठमी

राग राज वल्लभ

सखी कूकड युगलुं तेह चुगत चुगतां वृद्धि गउं रे ।
वली तरुणीयां बेह तेह सर्व कलापे पूरीयां रे ।। २७६ ।।

एक दिवस तलार वन जाई पाछउ वल्यु रे ।
सखी दीठां तिणि ते बेह अंगि लक्षणवली मविभरयां रे ।। २७७ ।।

लेईय ताम तलार राउ जसोमति भेटीउ रे ।
सखी वली तेहवां देखि राजा हरषि व्यापीउ रे ।। २७८ ।।

भाख्यां तेहनि ताम तुं ऊछेर माहरां रे ।
होसि रभवा काजि हावली एहनां पीलका रे ।। २७९ ।।

सखी बोल्यु महा पसाउ तिणि दोइ पंजरि घातीयां रे ।
सखी लेई वेगि तलार निज मन्दिर वली आवियां रे ।। २८० ।।

सखी कण चणतां जल पान एक दिवस सुखिनी गम्यु रे ।
सखी आव्यु ताम वसंत वन वन वृक्ष जमुरीया रे ।। २८१ ।।

कोइल करइ टहूक भमरा रण झुण ध्वनि करि रे ।
सखी फूल्या केसू फूल सहकारे माजिर घणी रे ।। २८२ ।।

नाम जसोमति राउ राणी सुंवली वनि गउ रे ।
सखी सांभलि तेह तलार ततक्षण मन भणी सांचरयां रे ।। २८३ ।।
महानि लेईय साथि पंजिर धांवला वनि गउ रे ।
सखी आव्यु ते वन माहि जिहां राजानां घर अच्छि रे ।। २८४ ।।
सात खणा रे आवास राणी सुं नरपति रह्या रे ।
सखी तेह आगलि पटसाल वस्त्र तणउ गुडउ कीउ रे ।। २८५ ।।
सखी पंजर तिणि चल गाडि वन जोवा मणी सामह्यु रे ।
सखी दीठउ तिणि असोक हूकडलु सुरतर समुरे ।। २८६ ।।
तेह तलि मुनिवर राउ ध्यान धरी आसण कीउं रे ।
सखी पंच महाव्रत धार, पंच सुमतिहिं विभूषीउ रे ।। २८७ ।।

देषी तेह तलार मनमाहि कोपि परजल्यु रे ।
सखी ते काढवा उपाय प्रतिघणु चितह चीतविरे ॥ २८८ ॥
ए नागु निरलज राउ राणी रमतां वनिरे ।
देखी ग्रति घणु कोप करसि मुझ ऊपरि बलीरे ॥ २८९ ॥
सीघु तेणि उपाय मुनिवर वन थी काढिवारे ।
सखी कुडी पूछउं बात कहिसि ते नवि मानिवु रे ॥२९०॥
ईम चीतवी तलार कूडि मुनिवर पगि पड्युरे ।
सखी बिठउ ग्रागिल जाइ मुनिवर ध्यानज मूकीउरे ॥२९१॥
पूछि ताम तलार कहु स्वामी सु' कीतव्यु' रे ।
सखी बोलि मुनिवर राउ दुष्टपणाउं सिमु जाणतुरे ॥ २९२ ॥
काया जीव विचार जू जू भाविजे ग्रच्छिरे ।
सखी चीत्यु ते सखी वेद जिम जिम करी जू जूयां ग्रच्छि रे ॥ २९३ ॥
काया भितर स्वभावि जीव स्वभाविहि जूडरे ।
सखी करमि बंध्यु जीव किम बाभि किम छूटीइरे ॥२९४॥
बलतु कहि न लार सुणि मुनिवर कुलि भोलव्यु रे ।
सखी कायानि जीव एक मम जाणे तु' जूजूयां रे ॥ २९५ ॥
चोर एक मिलेवि नादिमाहि मइ घालीउरे ।
सखी ते बीडी वली लाख जीव नीसाह जोईउ रे ॥ २९६ ॥
मु'उ माहि चोर जीवन दीठउ नीसर्युरे ।
सखी इम जाणो भेह एक ते काया ते जीवड वरे ॥ २९७ ॥
बोलि मुनिवर ताम सांभलि तलवरइ मनहीं रे ।
पुरुष एक संख हाथि नादि माहि वली घालिउरे ॥ २९८ ॥
सखी बीडी ते वली लाखि संखनाद माहि कीउ रे ।
सखी सांभल्यु' बाहिर लोक जोउ ते कांइ न पेखीउरे ॥ २९९ ॥
तिम जाणो ए भेद काय जीव वेजूजूयां रे ।
सखी बोल्यु वली तलार सुणि मुनिवर तु' बीसर्युरे ॥ ३०० ॥
सखी चोर एक मिलेवि घटि घाती नइ तोलीउरे ।
तेय हणी करी ताम सखी तोणि घटित इम कीउरे ॥ ३०१ ॥

जे तू जीव समेत जीव रहित ते तुलहुउरे।
सखी तिणि कारणि तुं जाणि काया जीवन जूजूयां रे ।। ३०२ ।।

बोलि मुनिवर राउ सुणि न तलारजेहु कहुं रे।
सखी प्राणी एक निषंग ते पुण पवनि पूरीयिया तो ।। ३०३ ।।

स्युघट धरी तेह ऊनारीनि जोईउं रे।
सखी जे ती पूरी वाउ, वाउरहित ते ती हुई रे ।। ३०४ ।।

तिणि कारणि तुं जाणि कायानि जीव जूजूयां रे।
सखी बोलि ताम तलार सुणि मुनिवर डाहुनही रे।। ३०५ ।।

चोर एक वन माहि लेईनि तिल तिल खंडीउरे।
सखी जोउं तह शरीर जीवक हीनवि पेषीउरे ।। ३०६ ।।

इणि भेदि तुं जाणि जीव काया न वि जूजूयां रे।
सखी मुनिवर पभणि ताम सांभलि भद्र जेहूं कहूं रे ।। ३०७ ।।

लेई अरणी काठ तिलपांड नाही खंडीउरे।
सखी जोई आगनि मझार लोक सवहू वसतु कहिरे ।। ३०८ ।।

नवि दीसि जोवंत तिम काया माहि जीवडउरे।
सखी नवि दीसि जोवंत तिम जसो वहू जूजूयां रे ।। ३०९ ।।

बोलि ताम तलार सुणि स्वामी निरू तरहूउरे।
सखी देउ आदेश ज नाथ विउं करईं तुझ तणुं रे ।। ३१० ।।

बोलि मुनिवर राउ सुणिन वत्स तुझनि कहुंरे।
सखी करिन करिन जिनधर्मी हिंसा रहीत सोहामणुं रे ।। ३११ ।।

जंपि तलवर स्वामि धर्माधर्म मझ फल कहु रे।
सखी जिम हुं जाणुं वेह जे रूडउं ते आचरु रे ।। ३१२ ।।

बोलि योग निरिंद प्रति रूडउंसि पूछिउंरे।
सखी नारी बहु गुणवंतकुल लक्षण रूपि भलीरे ।। ३१३ ।।

सात भूमि जे गेह राज रिधि मोटिम घणी रे।
सखी पुत्र पौत्र संताव विनय विवेकादिक सहूरे ।। ३१४ ।।

हाथी घोड़ा जेह रतन जाल बली जे भ्रत्थि रे।
सखी जिनधर्म तणु फल ए जाणि न जे कहुं भ्रत्थि रे ।। ३१५ ।।
पाप तणि परमाणि बहू बोली बली वउ कणी रे।
सखी काली भनि कुहाडि नीचे लख्यण कामनी रे।। ३१६ ।।
कुपिता जुच्छित गात्र निरखर माइ बांधव वली रे।
सखी निरधन काणा खंज रोग रास करी भ्राकुलारे ।। ३१७ ।।
जे जे दुखद जाणि ते ते फल पापहु तणु रे।
केतु कहुं विचार कहितां पार न पामीइ रे ।। ३१८ ।।
पंचाणुव्रत जाणि च्यार जे सख्यावत कह्यां रे।
सखी तीन भ्रत्थि गुणव्रत ए बारि व्रत उचरे रे।। ३१६ ।।
समकित साधु पालि दयाधर्म बली जे भ्रत्थि रे।
सखी सुणी सहू बोलि तलार हिंसा रहित ए पालिवुरे ।। ३२० ।।
हिंसाकुल व्रत जाणि किम करी ते छांडीइ रे।
सखी बोलि मुनिवर राउ सुणिन वरस जे हुं कहुं रे ।। ३२१ ।।
हिंसा तणि प्रभावि कुल धम्मइ बली घणु रतां रे।
सखी कूकड युगलु जाणि जाणि परि दुःख बहु सह्यांरे ।। ३२२ ।।
पणि पंडित पूछित तार कहु स्वामी ते किम हूयांरे।
सखी कीणी परिभम्यां संसार कहि मुनिवर सहू सांभलि रे
।। ३२३ ।।
जेह जसोधर राउ ऊजेणी नयरी हुउरे।
चन्द्रमती तिसु मात पीठमि जीव प्रणावीउ रे ।। ३२४ ।।
यसोमति केरि पाटि देवी मंडपि ते लाउरे।
सखी हणीउ साणइ राउ माइ भ्रादेशि सवि कावरे ।। ३२५ ।।
मार्‍यां राणी बेह घरि तेणी मोदिक दीयारे।
सखी विषहु तणि रे विनाश मरीअनि तिहां उपनां रे ।। ३२६ ।।
पहिलि भवि ते स्वान मोर बेहू ते उपनां रे।
सखी बीजि भवि ते बेह सेहलु निविसह रहूयारे ।। ३२७ ।।

सखी आँज भव ते बेहु सिसुमार ठीहि हुआ रे ।
सखी चुथि भवि वली तेह छालु छाली दोइ हुया रे ॥ ३२८ ॥

भिसु छालु बेह जिणी परि दुःखज अति सह्यांरे ।
सखी तु पुण जाणि तेह परिसघली वली जिम मूयां रे ॥ ३२९ ॥

तिहां थका ए बेव कूकड युगलु ऊपनां रे ।
सखी पंजरि घाती बेह लिए वन माहि आणीयां रे ॥ ३३० ॥

बोलि ताम तलार कंपतु मुनिवर प्रति रे ।
सखी ए सहू आपणि डाल कींधु निकरा बीउ रे ॥ ३३१ ॥

राति भोजन नीम तिम्न वार जल गालिसु रे ।
सखी समकित सहित विशेष तिणि तलवर पगि पडिलीउं रे
॥ ३३२ ॥

नीय भव समरी ताम कूकड युगलि पुण लीउं रे ।
सखी तीणी दिसी नमी मुनिराउ समकित स्युंजे व्रत कह्यां रे
॥ ३३३ ॥

पामीय धर्म विचार हरषि युगलु वासीउंरे ।
सखी सींजी राजा ताम सबद वेध करी दोइ हण्यां रे ॥ ३३४ ॥

कुसमावलि उरि बेहु मरी तिहां थी उपनां रे ।
सखी राजा यशोमतितात धर्म पसाइ पामीउ रे ॥ ३३५ ॥

उयरि वसंतां ताम माता निर्डोहलुहुउ रे ।
अभय दाननी आणि देश नयर राजा दीइ रे ॥ ३३६ ॥

वस्तु

ताम नर वयर नयर उजेणि पूरे मासे ।
जनमीयां माइ बाप वली नाम दीधां ।
अभयरुच अभयमती कला कुशल बासंत कीधां ।
कन्या पंच विवाहीउ बाध्यु मुभ राउ देषि ।
कन्या कथ कंशक दिहउ जगत रह्यावी रेष ॥ ३३७ ॥

अथ ढाल नवमी

विणजारा रे एक दिवस वनमाहि राजा पारधि सांचरयु वणजारा रे।
। वि।

वागुरीयां सई पांच पाइक साथि ते लिया ।। वि० । ३३८ ।।

वृक्ष असोक ज हेठ मुनिवर दीठउ ध्यान रह्या । वि० ।
देखी मुनिवर राउ राजा कोपि परजल्यु विण ।। वि० । ३३९ ।।

पारिधनि फली आज मुनिदर्शन थां होइ सइ । वि० ।
मुंक्या रांइ स्वान पांचसइ मूठि मूकीया ।। वि० ।। ३४० ।।

ते सबला वली स्वान मुनिवर पाखलि परिवरया । वि० ।
मस्तक भूमिय छाडि जाणे व्रत लेबा रह्या ।। वि० ।। ३४१ ।।

कल्याण मित्र ज नाम विणजारु देशाउरी । वि० ।
राजतणु जे मित्र वालद लेई आवीउ ।। वि० वि० ।। ३४२ ।।

मुनिवर जाण्यु तेण वन माहि ध्यानि रह्या । वि० ।
वंदेवा मुनिराउ बालिद छांडी नीसरयु ।। वि० ।। ३४३ ।।

दीठउ तेण नरिंद भेट भणी लेई आवीउ । वि० ।
भेटिउ तेणि नरिंद राउ साहांमा पगलां भरि ।। वि० ।। ३४४ ।।

पूछी खेम समाधि पान मान नरपति दीइए । वि० ।
राइ प्रति ते मित्र वचन मनोहर उचरिए ।। वि० ।। ३४५ ।।

आवु यसोमति राउ मुनिवर वंदण कारणि । वि० ।
रूठउ बोलि राउ सांभिल मित्र जेहूं कहुं ।। वि० ।। ३४६ ।।

स्नान रहित अपवित्र नग्न अमंगल जाण जे । वि० ।
निग्रह करवा जोग्य हुं भूमिपाले वंदीउं ।। वि० ।। ३४७ ।।

ते मुझ एह प्रणामतु वांछिय करावित्रा । वि० ।
जु इम बीजउ कोइ कहि तुम्हि मारिबु ।। वि० ।। ३४८ ।।

ए सुं राउ वचनसांभली तेमनि कम कम्पु । वि० ।
विमास्युं मनि साच राजामि प्रतिबोधिबु ।। वि० ।। ३४९ ।।

बोलि किल्याण मित्र सांभली राजा हुं कहुं । वि० ।
स्नानि पवित्र न होइ जे आचारि बाहिरा ।। वि० ।। ३५० ।।
मंत्र जाप बलि होम दिनकर वायु काल घणोइं । वि० ।
माटी निबली वार पवित्र पत्रणा घणा भेद छि ।। वि० ।। ३५१ ।।
बंभण एक सुजाण वेद स्मृत सहूइ भण्यु । वि० ।
वाटिते जल हीण असु च पणा लगि ते मूउ ।। वि० ।। ३५२ ।।

कहु न तम्हे भूपाल कवण गति ते दिज गउ । वि० ।
जु गउ नरकं ज तेह वेद भण्यु तेनि फलथउ ।। वि० ।। ३५३ ।।
जु गउ तेह ज स्वर्गि जातह निफल जल सौचियउ । वि० ।
मुनिवर सदा पवित्र मंगल परम ए जाण जे ।। वि० ।। ३५४ ।।
नग्न अछि महादेव परमहंस नागु अतिथ । वि० ।
बोल्यु सघले धर्म नग्न पणु दोहिलु अतिथ ।। वि० ।। ३५५ ।।
स्त्रीय परीसह जेह तेह भागा भूला भमि । वि० ।
सील रहित नरनारि ते पहिर्‌या नागां सही ।। वि० ।। ३५६ ।।
सील सहित नरनारि ते नागां पहिर्‌यां सही । वि० ।
मंगलमि जे जेह शकन ते मुनिवर जाण जे ।। वि० ।। ३५७ ।।

श्रवण तुरंगम राउ मोर कुंजर वृषभि सही । वि० ।
जातां वलतां एह परम सकुन तुं जाणजे ।। वि० ।। ३५८ ।।

तिजे बोल्यु बोल निग्रह मो करिवा तणु । वि० ।
बालक ना जिसु बोल मुनिवर कुण हणी सणकि ।। वि० ।। ३५९ ।।
पाणिउ चामि मेर सायर बांहि जे तरिवि । वि० ।
मुनिवर कांई केण कर यावली वालि नही ।। वि० ।। ३६० ।।
ओलि कहिउं भूपहुं भूमिपाले प्रणमीउं । वि० ।
देश कलिंगह राउ नाम सुदत्त वखाणीइ ।। वि० ।। ३६१ ।।

योवन पाम्यु चोर तलवरि राउ आगिल धर्‌यु । वि० ।
राइ पूछ्यां विप्र अपराध एह मर तु कहु ।। वि० ।। ३६२ ।।
तेहे बोल्युं ताम चाचरिचु घंड कीजीइ । वि० ।
तेह सुणी नि भूप बैरागि राज बेटा देइवि ।। वि० ।। ३६३ ।।

लीधी दीक्षा जेह ते ए वन माहि आवीउ । वि० ।
काहि जसोमति राउ चालु न ते जोई इ ।। वि० ।। ३६४ ।।
किल्याण मित्र नि राउ साथि मुनिवर प्रणमीह । वि० ।
ततक्षण पूरियोगइ धर्मवृद्धि विहुं जण दीइ ।। वि० ।। ३६५ ।।
मुनिवर सरषुं चित्त सत्तु मित्र राइ पेषीउं । वि० ।
राउ थउ वैराग धर्म गेह ए मुनि अछिथ ।। वि० ।। ३६६ ।।
एह तणाय शरीर जेमि विनाश विमासीउं । वि० ।
तेह छेदे वा पाप शिर मंडी पूजा करूं ।। वि० ।। ३६७ ।।
तुहुं छूटउं आज अवर उपाय न को अछिथ । वि० ।
मूक्या ते सवि स्वान राउ दयारसि परिवर्यु ।। वि० ।। ३६८ ।।
मुनिवर राउ नुं चित्त ज्ञान अवधि जाणीउ । वि० ।
मुनिवर बोलि ताम राउ विमासण मन करूं ।। वि० ।। ३६९ ।।
आतम हित्या पाप शिरछेदंतां लागसि । वि० ।
राउ सुणी मुनि वाणि मनि आचार्यि पूरीउ ।। वि० ।। ३७० ।।
मित्र तणुं मुष जोइ शिर धूणी बोलि वली । वि० ।
किम जाणी मुझ वात जे मइ मन माहि चींतवी ।। वि० ।। ३७१ ।।
मित्र ज बोलि ताम ए मुनिवर ज्ञानी अछिथ । वि० ।
माइ ताइ तुझ वात पूछि भवंतर प्रणमीनि ।। वि० ।। ३७२ ।।
हरख्यु मनि भूपाल कर जोडी मुनि वीनगि । वि० ।
माजु आजीता तमाइ सहित ते किहां गयां ।। वि० ।। ३७३ ।।
आजु जसोधर राउ पलित केश शिर पेषीउ । वि० ।
मनि उपनु वैराग राज ताम तीनि दीउं ।। वि० ।। ३७४ ।।
लेई दीक्षा तेण अणसण पांचि निर्गिण कीया । वि० ।
पहुतउ माहेंद्र स्वर्गि देवी सुं लीला करि ।। वि० ।। ३७५ ।।
जे वली तोरी मात विश देई तिणी मीय हण्यु । वि० ।
पामीय तीणीय कुष्ट मरीय नरकि वली ते गई ।। वि० ।। ३७६ ।।
जे आजी अनि तात चंद्रमती यशोधरा वहु । वि० ।
देवीय आगइल तेह पीठी कूकड मारीउ ।। वि० ।। ३७७ ।।

विश देई तुझ माइ विषह प्रभावि मारीयां । वि० ।
मरीय करीतें बेहू स्वान मोर होई आवीया ।। वि० ।। ३७८ ।।
सेहलउ निवली साप सिसुमार रोही हूया । वि० ।
छालु छाली बेहू छालु भिसु बली हूया ।। वि० ।। ३७९ ।।
कूकड युगलु अेह शब्द वेध करीति हणु रे । वि० ।
कुशमावली उरि तेह बेटउ बेटी तुझ हूयां ।। वि० ।। ३८० ।।
हवडा ते तुझ गेह राजरिद्धि सुख भोगवि । वि० ।
राजा दूह विण चित्त अति आणि लोटि रडि ।। वि० ।। ३८१ ।।
एकह जीवह पाप एवडां दूख एहे सह्यां । वि० ।
इणि रांइय अनेक मारया जीवकेथु हसिह ।। वि० ।। ३८२ ।।
बोलि किल्याण मित्र रोइ राजन पामीइ । वि० ।
करि नउं जिनवर सार हिंसा पाप छांडी करी ।। वि० ।। ३८३ ।।
राउ ज बोलि मित्र मुनिवरनि तुह्म वीनवु । वि० ।
जिम दिइ दीक्षा वेगि काजन संसारि अस्थि ।। वि० वि० ।। ३८४ ।।
वैराग विशिश्यु राउ मुनिवर पगि लागी रह्यु । वि० ।
कुंइ राजा घरि वात दीक्षा राउ लेवा तणी ।। वि० ।। ३८५ ।।
मूकी अथ सिणगार राजलोक वनि आवीउं । वि० ।
बहिन भाई अह्म बेहू पालिखविसी वनि गयां ।। वि० ।। ३८६ ।।
दीठउ ताम नरिंद वैराग्य मनि साहमउ रह्यु । वि ।
पूछि सघली नारि वैराग्य कारण प्रभ कहु ।। वि० ।। ३८७ ।।
राउ भणि सुणु नारि जे जे आपुण पेषीउं । वि० ।
बेटा बेटी जन्म अजी तात नासाभल्या ।। वि० ।। ३८८ ।।
अह्मे भव सांभल्या जाम ताम बेहू मूरछी पडया । वि० ।।
माइ करिय विलाप हाहाकार सहू करिनि ।। वि० ।। ३८९ ।।
सीतल करि उपचार सजन लोके अह्मे आगव्यां । वि० ।
पूछि ताम विचार कुणि कारणि तह्मे मूरछ्यां ।। वि० ।। ३९० ।।
जे जे भोगव्यां दुख ते ते सघलां वीनव्यां । वि० ।
राउ कहि सुणि मित्र दीक्षा ले उतावली ।। वि० ।। ३९१ ।।

पुत्र देउ तह्मे राज भाज असुरज का करू । वि० ।
राज सुणी ब्रह्म मात तात ज वेगइ कीजइ ।। वि० ।। ३९२ ।।
सुणीय अह्मारा जन्म वैराग्य तह्मनि उपनु । वि० ।
ते आह्म किम ल्यु राज काज करे सु आपणु ।। वि० ।। ३९३ ।।
मित्र ज बोलि ताम मारग ए एसु अछि । वि० ।
देई बेटा राज बाप दीक्षा पहिली लिइ ।। वि० ।। ३९४ ।।
चित्र तह्मे एह राज बाप दीक्षा लेवा देउ । वि० ।
अह्मे विमास्यु चित्त पिता पहिलु दीक्षा लेउ ।। वि. ।। ३९५ ।।
कालि आह्म वली तेह दीक्षा लेस्यु आर्हती । वि. ।
अह्म नइ देई राज तात माइ दीक्षा लेई ।। वि. ।। ३९६ ।।
कल्याण मित्र धरी आदि राज पांचसिअस लीउं । वि. ।
नारी सहस्त्र एक कुशमावलि सु दीक्षीयां ।। वि. ।। ३९७ ।।
घणा महोत्सव साथि नयर माहि अह्मे गयां । वि. ।
पांच दिवस रहि राज अवर माइ सुत तेडीउ ।। वि. ।। ३९८ ।।
तेहनि देई राज गुरु पासि तव हुइ गयां । वि. ।
मागी दीक्षा सार गुरु राजा वलतु भणिवि ।। वि. ।। ३९९ ।।
वच्छ अच्छ तम्हे बाल जिन दीक्षा अति दोहिली । वि. ।
सम्यक व्रत ल्यु आज महाव्रत पाछि लेउ ।। वि. ।। ४०० ।।
अह्मे विमास्यु ताम गुरु वाणी किम लोपीइ । वि. ।
लहुडी दीक्षा वेगि गुरु आदेसि अह्मे लेई ।। वि. ।। ४०१ ।।
तेहज मुनिवर राउ विहरंतु महीयल फिरि । वि. ।
आज जवडिलि दीह ते गुरु तुझ वनि आवीउ ।। वि. ।। ४०२ ।।
आठिम दिवस ज आज उपवासी सघलो यती । वि. ।
अह्मे जाई गुरु पास उपवास बिहुं जणे मागीउ ।। वि. ।। ४०३ ।।
गुरु जी बोलि ताम उपवास तह्मनि नवि घटि । वि. ।
गुरु आदेस ज पामि आहार लेवा पुण भमि ।। वि. ।। ४०४ ।।
चाल्यां मारगि जाम ताम तलारे भेटीयां । वि. ।
अह्मनि लई तेह तुझ कन्हिए आणीया ।। वि. ।। ४०५ ।।

हिंसा तणउ विचार जेहि तेमि तुझ कह्यु वि । वि. ।
जे तुझ भावि विचार ते तु अह्यानि नृप करेवि ॥ वि. ॥ ४०४ ॥
सांभली वचन भणि देवी मन मुनि रीझवि । वि. ।
छांडीय भीषण रूप अस्थाणु लेई आवीइ वि ॥ वि. ॥ ४०५ ॥
देई प्रदक्षरण ताम पगि लागी तिसु धीनवि । वि. ।
अह्म सुणु तह्मो वात भति घणी हिंसामि करी वि ॥ वि. ४०६ ॥
ते छूटे का पाप जिनवर दीक्षा मुझ देउ वि । वि. ।
क्षुल्लक बोलि ताम देवीय दीक्षा नवि हुइ वि ॥ वि. ॥ ४०७ ।

वस्तु

कहिय षलिक कटिय षलिक सुणि न तु देवि
जिहां जिहां जीवां नरक गइ जेह
जेह वली तरी वासु जे जे दिवस सुख भोगवि
देवि विमान देवी सु आसइ तेह तेह दीक्षा नवि हुई
संभलि देवि विचार व्रत सु समकित पाल जे जिम तिरीइ संसार ॥ ४०८ ॥

अथ ढाल- दशमी

जे धरइ ए च्यार कषाइ रौद्र ध्यानि वली वींटीयाए ।
जे दहिए वनहनि गाम हिंसा कर्मि आगला ए ॥ ४०९ ॥
जे वली ए गुरु हनि स्वाम वंचक पापइ पूरीया ए ।
लेस्याए कृष्णाज तांह जे परनारी लंपट्ये ॥ ४१० ॥
ते बहूए पाप पसाइ नरया वासइ उपजि ए ।
छेदनइ ए भेदन तेह ताडन हंसन बहु सहिए ॥ ४११ ॥
लोहमिए ताती नारि तेस्यु आलिंगन करिए ।
तातु ए करीयक थीर तरस्यां श्याते पाईइए ॥ ४१२ ॥
छेदीइए तास सरीर मूर्च्छा सोइथ बाडीइए ।
इणि परिए दुःख अनंत नरयावासि भोगविए ॥ ४१३ ॥

ते नरां ए जिनवर दीष दुख घणां थी नवि हुइए।
आरतु ए ध्यान करंति नील लेस्याए चींटीया ए ॥ ४१४ ॥
रस तणा ए भेद करंति कुडि मापि बहुर कए।
कुडीए साखि देयंति थापणि मोसु जे करिए ॥ ४१५ ॥
धामसिए पजेहू ग्रह निषि घतिपणु जे पुलइ।
जेहनिए नवकार न मंत्र देवपूजा वनी नवि रचिउ ॥ ४१६ ॥
अति घणा ए पाप पसाउ तिर्यंच गति ते नर लहिए।
छेदनए अंकन दोइ ताडन पाडन जे सहिए ॥ ४१७ ॥
भुषिए तसइ तेह ताढिज ताप न भोगवि ए।
अति घणउं ए भारा रोपमाहे बहिन जाणि नहीए ॥ ४१८ ॥
ते नरां ए दीक्षा देवि तिर्यंच किम दीजीइए।
लेस्या ए पदम ज जेह धर्म ध्यानि जे वासीया ए ॥ ४१९ ॥
पूजा ए जिनवर जेह पात्र दान ते अति दिइए।
जपिए मंत्र नवकार पर उपकारज जे करिए ॥ ४२० ॥
साचीए बोलि वाणि कुडीय शीष ते नवि भणिए।
ते नर ए जाइ स्वर्गि देवी वृंदे शेवीइ ए ॥ ४२१ ॥
बिठाए फरइ विमान मानस सुख अति भोगविए।
यौवन ए निश्चल तांह जरा न आवि ढूकडी ए ॥ ४२२ ॥
अति सुषए केरडी षाणि सुखसागर झीलि घणउं ए।
ते नरां ए होइ न दीप भोगासक्त परो थकी ए ॥ ४२३ ॥
मानसी ए जाति लहेवि अंगोपांगि पूरीया ए।
ब्राह्मण ए क्षत्रय जाति जे वली वैश्यह कुल तिलाए ॥ ४२४ ॥
तेह नरां ए होइ नमाइ दीक्षा जैनेश्वर तणी ए।
हविलुं ए समकित पाल टालि मिथ्यात जे पाछलउं ए ॥ ४२५ ॥
अरिहंत ए माने देवि गुरु निग्रंथ वखाणीइ ए।
जे जिन ए बोल्युं धर्म दश लक्षण ते जाणीइ ए ॥ ४२६ ॥
जे व्रत ए बारह देवि ते ते पाले निर्मलां ए।
पालजे ए साचि चित्त मूलगुंण वली आठ छिए ॥ ४२७ ॥

रातिए भोजन वारि जीव तणी अयणा करे ए।
सांभली ए देवि विचार पाय पडी ते सहूलीउं ए ॥ ४२८ ॥
सोवन ए जल भृंगार पगिलागीनि वीनविए।
अतवतीए विद्यसार लेउ तह्मो गुरु दक्षण भणीए ॥ ४२९ ॥
बोलिए क्षुल्लिक तामहुं विद्याइगुं करूं ए।
देवी ए लोधालेग जाणुं तं तलि सहु करयु ए ॥ ४३० ॥
बोली ए देवी ताम लोभ रहित तब देयीउं ए।
सांभलु ए राउ सहित लोक सहू योगी महित ए ॥ ४३१ ॥
पालुए धर्म अहिंस हिंस नाम म लेयस्युं ए।
ये कोए हिंसा नाम देखि ता हरि बली लेयसिए ॥ ४३२ ॥
घोषलीं ए मरकी मांद देश सघलि वलीं थाइसिए।
मूंकिवाए सघला जीव अभयदान वरतावीउं ए ॥ ४३३ ॥
प्रणामीय ए क्षुलक पाउ देवी वेगि अदृष्ट थई ए।
ते तलिए मारदत्त राउ प्रणामीय पाय क्षुलक तणी ए ॥ ४३४ ॥
मागिए दीक्षा वेगि अंगि वैरागिहिं वासीउए।
देउ प्रभु ए दीक्षा आज संसार सागर जिम तरिए ॥ ४३५ ॥
बोलिए षिलक ताम सुणि भूपति येहूं कहूंए।
अह्मो नहीए देवा जोग्य दीक्षा श्री जिनवर तणीए ॥ ४३६ ॥
जे मरिग ए अह्मा गुरु राउ ते तुझ दीक्षा देइसिए।
सांभलीए ताम नरिंद चीतवि मन माहिं आपणाए ॥ ४३७ ॥
हुं नृप ए नृपतणु राउ लागउ देवीनय कमले।
देवी ए क्षुलक पाउ पणामि भगति करी घणीए ॥ ४३८ ॥
ते हूए देग विवेग गुरु कन्हि लेई जाउवी ए।
श्री जिन ए धर्म विशेष हूं उन होसिएह समु ए ॥ ४३९ ॥
ते तलिए मुनिवर राउ षलिक चरित ज जाणीउं ए।
आवीउ ए संघ समेत देवी मनि उतावलउए ॥ ४४० ॥

घुलिक ए सहित ते राउ श्री गुरु केरा पगि पड्यु ए ।
घुलिक ए कहि गुरु स्वामि दीक्षा देउ ताह्म राउनिए ।। ४४१ ।।
भूपतीए आठ सभंत मारदत्त दीक्षा लेइए ।
राणीए सई तिहां आठ लीधी दीक्षा जैननीए ।। ४४२ ।।
क्षलक ए घुडीय समेत प्रणमीय पायज गुरु तणा ए ।
मांगीए दीक्षा सार गुरु तूठउ तियां दीइ ए ।। ४४३ ।।
श्री गुरु ए विहार करंति पुहुतां भवीयां बोधिवा ए ।
ते बहूए तीणि ठामि लेई दीक्षा तव रह्या ए ।। ४४४ ।।
अभयरुचीए मुनिवर राइ अभयमती आशा हुई ए ।
ते बेहूए अणसए लेवि पाप दीहाडा पालीउं ए ।। ४४५ ।।
सातमइए स्वर्ग पहूत इंद्र प्रतींद्र ज ते हुया ए ।
देवीए वृंदज मांहि सार सौख्य अति भोगविए ।। ४४६ ।।
सुदत्त ए मुनिवर राउ सोलमइ स्वर्ग ज ते गउ ए ।
किल्याण ए मित्र ज आदि घरीय करी जे मुनि सोहू ए ।। ४४७ ।।
पुहुता ए तेहज स्वर्गि पुण्यमानि आ पार्पाणए ।
थोभीए सघले साम मिथ्यात हिंसा छांडी करीए ।। ४४८ ।।
पुहुता ए तेह सु ठाम कर्म मानि बली आगणिए ।
दयानिधिए एहज रास पढइ गुणि जे सांभलिए ।। ४४९ ।।
नवनिधिए मंदिर तास कामधेन तस आंगणिए ।
पापहए तणउ विनाश धर्मतरुवर वाधि सदाए ।। ४५० ।।
कुबुधए केरड नास बुधि रुडी सदा उपजइए ।
जांद्रए सूरज मेघ महीधरुए ।। ४५१ ।।
तां रहुए एहज रास राउ यसोधर केरडु ए ।

तां रहुए एहज रास राउ यसोधर केरहु ए ॥ ४५२ ॥
गुणीयरा ए जे नरनारि जेह कवेसर रूयडा ए ।
सोधीए एह ज रास करीय साधु वली थापिचु ए ॥ ४५३ ॥
कातीए उजलि पाषि पाडिवा बुधवारि कीउए ।
सीतलूए नाथ प्रासादि गुडली नयर सोहामणुए ॥ ४५४ ॥
रिभिवृद्धि ए श्री पास प्रासाद हो जो निति श्रीसंघह घरिए ।
श्री गुरु ए चरण पसाउ श्री सोमकीरति भण्यु ए ॥ ४५५ ॥

॥ इति श्री यशोधर रास समाप्त ॥

॥ संवत् १५८५ वर्षे ज्येष्ठ सुदि १२ रवौ ॥

गुरुनामावली

मंगलाचरण —

नमस्कृत्य जिनाधीशान् सुरासुरनमस्कृतान् ।
वृषभादिवीरपर्यंतान् वक्ष्ये श्रीगुरुपद्धतिम् ॥ १ ॥

नमामि शारदां देवीं विबुधानन्ददायिनीं ।
जिनेन्द्रवदनांभोज हंसिनीं परमेश्वरीम् ॥ २ ॥

चारित्रार्णवगंभीरान् नत्वा श्रीमुनिपुंगवान् ।
गुरुनामावली वक्ष्ये समासेन स्वशक्तितः ॥ ३ ॥

दूहा बंध

जिण चुवीसह पाय नमी, समरवि शारद माइ ।
काष्ठसंघगुणवर्णवुं, पणमवि गणहर पाइ ॥ ४ ॥

एक जीह[1] किम बोलीइ, काष्ठसंघ गुण सार ।
सुर गुर बुधि जे समु, ते नवि लाभि पार ॥ ५ ॥

चुरासी[2] गणहर हूया, आदि जिणंदह जोइ ।
तिणि अनुक्रमि वंदतां, वीर एगारह होइ ॥ ६ ॥

चुवीसह जिणवर तणे, गणहर पाय मुनिंदिम ।
सिर वालि ते जोयतां, चौदिसि तेवम ॥ ७ ॥

वीर जिणंदह पट्टिपुण, बिठा गौतम स्वामि ।
नवनिधान घरि संपजि, पाप पणासि नामि ॥ ८ ॥

सौधम्मह मुनिवर हूउ, जंबू स्वामि वषाण ।
एअहुं सरसुं सुंपीऊं, रूपहुं केवल नाण ॥ ९ ॥

---

1. जीभ, जिह्वा

2. भगवान आदिनाथ के ८४ गणधर थे

चौदह पूरब जे धरि, दश पूरब ना जाण ।
बहु विहि रिधि भूसीया, को लहि तेह प्रमाण ॥ १० ॥

अथ बोली

अहो श्रावको पुण्य प्रभाव को। निरमल चित्त करी, जिनवाणी मनिधरी सावचेत थाई, जिन भवनि जाई। श्रीकाष्ठासंघना जे, मुनिवर तेहनु अनुक्रम तेहनां गुण सांभलतां थकां, संसार समुद्र तारण परम महासुखना कारण इस जे गुरु सांभलु ।

अथ छंद पाधडी

श्री वीर नाह अनुक्रमि जाण। मुनिवरनि तेजिजिमहु भाण ॥
सहु व्रत माहि जिम ब्रह्मचार। गिरवरह माहि जिम मेर सार ॥ ११ ॥
चिंतामणि रयणह मज्झि जाण। सब नाण माहि केवलह नाण ॥
चिंतामणि रयणह मझि एक। आचार सवहुं सोहि विवेक ॥ १२ ॥
ग्रह गणह मझि जिम चंद[1] सूर[2]। जल रासि माहि सायरह[3] पूर ॥
जिम देव सबह माहि ज इंद। महीयल माहि सोहि नरेंद ॥ १३ ॥
पदवी सबहुं तिथयर जेम। तस उपम दीजि कहु केम ॥
भरहेसर जिम सवि चक्कयार। इसि काहु पुछसि वार-बार ॥ १४ ॥
कप्पतरु[4] तरवरह चंग। तिम संघ सरोमणि कट्ठ संघ ॥ १५ ॥

अथ दूहा बंध

संघ सरोमणि संघ ए, जोउ तेह विचार ।
नरह नरेंदे वंदीया, गच्छा गच्छ चीयार ॥ १६ ॥

श्लोक—श्रीनंदीतटगच्छाख्यो, माथुरो बागडाभिधः
लाडबागड इत्येते गच्छाश्च विबुधैंस्तुताः ॥१ ॥

---

1. चन्द्रमा
2. सूर्य
3. समुद्र
4. कल्पवृक्ष

तेषु गच्छेषु विख्यातः श्री नंदीतटसंज्ञकः ।
शीलसौभाग्यसंयुक्तो विद्यां गुणगुणां निधिः ।। १७ ।।

दूहा बंध

गणहर मुनिजनवर्णता, पभणह एह विचार ।
अर्हद वल्लभसरिनु हणि गच्छ हूव उवयार ।। १८ ।।

छंद पाधडी

तेह पट्टधर मछि एह । नामि पंचगुरु कहुं तेह ।।
श्री गंगसेन नामि पहाण । तेह नरनरिंद बहु दिइ माण ।। १९ ।।
श्री नागसेन नामि प्रसिद्ध । देवाहवि जेहनी भगति किद्ध ।।
पंचमि पट्टि सिद्धांत सेव । अरणेंद्रि भावी किद्ध सेव ।। २० ।।
श्री गोपसेन मुनिराउ जाण । बोलंतां वयण अमोघ वाणि ।।
सत्तमि पट्टि श्री नोपसेन । नीय भुजबलि जीतु मयण जेण ।।
दक्षणह देश देशह मझारि । श्री नंदी तट पट्टणह सार ।। २१ ।।

दूहा

दक्षिण देश मझारि जु, नंदी तट पुर जाण ।
नोपसेन मुनिवर रहिनीय तेथि जिम भाण ।। २२ ।।
तेह मुनिवरनि रयडा, पंचसइ वर सष्य ।
नीय बुधि प्रतिबोधीया, तेहनि दीधी दक्ष ।। २३ ।।
से सष्य माहि रयडा, मुनिवर च्यार प्रसिद्ध ।
रामसेन आदि धरी, वाद केरि निजबुद्धि ।। २४ ।।
वाद करंता दिठु जु तु गुरु दीधु बोल ।
माहो माहिसुं सवु, तह्मो सूरपनिटोल ।। २५ ।।
वादी तु तह्मो आणीउ, विद्या बल घणुं चंग ।
देश च्यार प्रतिबूझवी, रवि तल राहातु रंग ।। २६ ।।
नरसिहुर पुर आणी, देश मझि मेवाडि ।
ते मिथ्याति वाहीउं, नथी कहि निपाडि ।। २७ ।।

मागध देश जु जाणीइ, नयरी मथुरा सार।
लाड देश नामि अछि, तिहां मिथ्यात अपार ॥ २८ ॥

अंद्ध त्रोटक

वाह्या सविहीहि लोक घले। पडिला सवि दीसि भवह जले।
प्रतिबोध जु नीय बुधि बले। जस राषु तु रवि चवक तले ॥ २९ ॥

दूहा

श्री गुरु वाणी संभली, विमासि नीय चित्त।
करसु आपुण एह जु, नही अछि इहां भांति ॥ ३० ॥
गुरुह चरण वंदी करी, चाल्या सध्य चीयार[1]।
सु सु चेलाथि जु, लीधा एह विचार ॥ ३१ ॥

अथ छंद

पणमविनीय गुरु चरणं सरणं, चित्तेव जिणवरं चित्ते।
श्री रामसेन मुणि वंदो, आयो नयरम्मि धरवि आणंदो ॥ ३२ ॥
आणंदह धरवि ताम संपत्ता, वर नयरे नरसिंहपुरे।
सरवर वर खीर नीर भलोवई, तिहां बिठा मुनि घ्यान धरे ॥ ३३ ॥
मासो उपवास तेण उचरीयो, धम्म धनुह वर गहन करे।
श्रीरामसेन मुनिवर सुमरतां, नासि पाउ ते विवह परे ॥ १ ॥ ३४ ॥
तस नयर पुरम्मि मझे, साहइ नामेण नवसए सिट्ठी[3]।
सत्तह[3] पुत्त संयुत्तो, पुत्तह पुत्त न लभये कहवि ॥ २ ॥ ३५ ॥
पुत्तह चापुत्त कहवि, नवि लभि तव सेठी उदेग भयं।
बहुयर उवेस तथ संपत्तो, जत्थ गुवंदि मुणिद मयं ॥ ३६ ॥
चींतीय नीय काज लाज गति, आणी अभलि बिठउ लगग पयं।
श्रीरामसेन तव ज्ञान महाबलि मनि आठबीया नाम लीयं ॥ ॥ ३७ ॥
तह वयण सुणवि सेट्ठी, पुच्छि कज्जं च कहवि मुणिराउ।

---

१. चार २. श्रेष्टि
३. सात

दुतुय दुख पुत्त बालपडीयं, बीय कूप नयि संदोहो ।। ३ ।। ३८ ।।
संदेह विणासण जब ते दिठुउ, तब लोकह आचंभ भयं ।
बे कर जोडवि अति बहु भक्ति, मुनि आदेसज सरसिलयं ।। ३६ ।।

बोलि तह सेठ्ठी कहि तो कज्जं, श्री मंदिर छि दिव्य घणां ।
श्री रामसेन मुनिवर सुपयंपि, करु धर्म श्री जिनह तणां ।। ४ ।। ४० ।।
मिथ्यात दूर दयडीय थापीय जिन धम्म नयर मझम्मि ।
चुसठसि कुल रोपवि पतट्ठीउ देव बहुरुउ ।। ५ ।। ४१ ।।
बहुरुव पतट्ठीय जिनवर भवने तब मुनिवर चलंति अणं ।।
पूछि तब सेठ्ठी सीस पय नामी कवण कज्ज चलंति तणं ।। ४२ ।।
हुविरेण धृष्ट कारण अति संभलि पइसि तुय नयरे पवरे ।
श्रीरामसेन मुनिवर इम बोलि जाउ उत्तर थाडंपुरे ।। ४ ।। ४३ ।।
नरसिहपुर नयर तजीय ते तिथ पहुता ।
गामह नामि नाम न्याति वाति रचितलि सुपवित्ता ।। ४४ ।।
सत्ताबीसह गोत्र तेण थिरु करि थप्पीय ।
नरसिंहुराय गुण ताम जिण धम्मह अप्पीय ।। ४५ ।।
श्रीशांति नाथ सुपसाउ करि श्रीरामसेन उवएस धरि ।
द्रमंडलिदणीयर तपि । तां रिधि वृद्धि श्रावयह घरे ।। ५ ।। ४६ ।।

हवि बोली

हवि तेह श्रीरामसेन देव तणा गुण समुद्र नि पार थाम ना कुण समरथ जिणि श्री रामसेनि जिन आपणा ग्याननि बलि करी चित्त संदेह भांजो प्रत्यक्ष दृष्टांत देखाली । चुसठि सि कुलि नरसिंहपुर पाटण । तेह तणा संपूर्ण मिथ्यात्व कुलि थका प्रतिबोधी श्रावक नु धर्म तेवाडयु अनि श्रीरामसेनि भली ज्ञाननिबलि मूल धृष्ट हती जाणी । उत्तरवादि समस्त श्रावक अनगारी । नरसिंह पुरा सत्तावीस गोत्र संयुक्त न्यात थापी । तेह गुरुना अनंत गुण बोलतां पार न पामीइ ।।

हवि दूहा

रामसेन मुनि तिहां थका चित्रकोट संपत्त ।
देश विदेशे जाणीइ श्री गुरु केरी वत्त ॥ १ ॥ ४७ ॥

श्री रामसेन मुनिवर तणि नेमिसेन मुनि तास ।
एक भणंता पडिकमामि सपता छमास ॥ २ ॥ ४८ ॥

गुरु बोलि सस्यह प्रति, संभलि तुं मुझ वात ।
तप करी काया पेट वे मूकी भण्य वात ॥ ३ ॥ ४९ ॥

तव गुरु वाणी संभली, मनि हुउ उच्चाट ।
गुरु वांदीनि नीसर्यु, मूकी भणवा वात ॥ ४ ॥ ५० ॥

जावर नाम प्रसिध जे, तेहना निपमा खोह ।
तिहा आवी मुनिवर रह्या, मूंकी सघला मोह ॥ ५ ॥ ५१ ॥

अन्न उदक सवि परिहरी, बिठु निश्चरी ध्यान ।
जु विद्या दिइ सारदा, तुह्नं मूकुं मान ॥ ६ ॥ ५२ ॥

सात दिवस इणी परिगया, तप करतां मुनिराउ ।
काया लागी सूकवा, तुहि न मूकि भाउ ॥ ७ ॥ ५३ ॥

एक दिवस पद्मावती, मुनि उपरि आवंति ।
तव सरसति साहामी मली, कैलासह आवंति ॥ ८ ॥ ५४ ॥

पद्मावती सरसति, प्रति वयणज बोलि ताम ।
ए मुनि काया पेटविरचयह सुंदरि कुण काम ॥ ९ ॥ ५५ ॥

पद्मावती अनि सरसती ते बिहु तिहां संपत्त ।
उभी रही बोलावीउ मुनिवर माहाजमरति ॥ १० ॥ ५६ ॥

तव मुनिवर सरसुं भणिा कांइ करि तुं कष्ट ।
पद्मावती भनि सरसती महीं मे तुझनि तुट्ठ ॥ ११ ॥ ५७ ॥

सरसति तूठी आपीउ, कारण तणु भंडार ।
विद्या गयणह गामनी, पद्मावती सु विचार ॥ १२ ॥ ५८ ॥

तु मुनि अणसण मूकीउं संपतु पर भात ।
विद्या बिहुं विसूसीउ, संभलि तेहनी वात ॥ १३ ॥ ५९ ॥

अथ बोली

तदनंतर तिणि मुनिस्वरि तदाकाल जिसमि इसी प्रतिज्ञानु उच्चार कीधु, पंचतीर्थ विन प्रति नमस्कार करवा । श्रीशेत्रुंजय । श्री रैवतकाचल । श्री तुंगेस्वर । श्री पावागिरि । अनि श्री तारंगाचल । ए पंच तीर्थनी यात्रा कीधा विना दिन प्रति आहार नु नयम । पंच तीर्थनी यात्रा करी श्री गुरुना चरण वांदवातणि कारणि चिरा कोटि पुहुता । तदाकाल श्री गुरु अनुवंदना देई सन्मुख बोलवा लागा ।

अथ पाधडी

देस मज्झि मेवाड देश, भट्टपुर पट्टण विशेस ।
तिहां वसि लोकमिथ्यात पूर, धम्मह धानासिज दूर ।। ६० ।।
तु जाणुं तो विद्या विशेष, परसमउ तुझ नार सेष ।
तब नेमसेन बोलि विचार, मि करवुं स्वामी वयण सार ।। ६१ ।।
तिहां सहि गुरु चाल्यु करी प्रणाम, चित्तह माठवीया एह काम ।।
पट्ट पुर पट्टण मझारि, गया नेमसेन त लगि वार ।। ६२ ।।

अथ छंद

नेमसेन मुनि नाहो पुहुतु भट्ट उर नयर मझमि ।
नय दीठउ अवलोक विलोकइ घरि बहुल मिथ्यात ।। १ ।। ६३ ।।
जरे बहुल मिथ्यात देषी मुणिंदो, महापाप तम नासवा एह चंदो ।
नीय न्याति पबोहीया तेण सवे, श्री नेमसेनस्य बहु सक्ति तवे ।। ६४ ।।
जरे नामभट्टउरा न्यात थापी, महापाप मिथ्यातनी वेल कापी ।
पतिट्ठीया तीर्थ चुवीस प्रासाद माला, श्रीनेमसेनस्य कीर्ति विशाला ।।६५।।
जरे जिणह चुवीस पयकमल भत्ता, तह कज्ज चउवीस गुत्तं संयुत्ता ।
भट्टे उरे विब चउवीस तित्थइ, पतिट्ठीया नेमसेनस्य हत्थइ ।६६।
सजो गच्छ नंदीय नामि मह्लावि, श्री नेमसेनस्य गुरु पासि आवि ।
आवीसहि गुरुपासि भक्ति परणाम सुकिट्ठी ।। ६७ ।।

पडिबोहीय ए जात अमर जस इणी परिलिड्डी ।
भट्ट उर नामेण ताम भट्ट उर किधा । पछुंडावी मिथ्यात नेम श्रावकना दिधा ।। ६८ ।।

जयवंता परीयण पत्तसुं । श्री आदिनाथ सुपसाउ करि ।
श्री नेमसेन उपदेस तु थिर लछी श्री संघ घरि ।। ६९ ।।

श्लोक

तस्य श्रीनेमसेनस्य पट्टे ये मुनिपुंगवाः ।
तेषां व्यावर्णनां कुर्वे भव्या श्रृण्वंति सादरा. ॥१॥७०॥

अथ पाथडी बंध छंद

श्री रामसेन पट्टि सुजाण । श्री नेमसेन गरूउ पमाण ॥
श्री नरेन्द्रसेन नामि पवित्त । वासवसेन मुनिमयणजित्त ॥७१॥
नाहेंद्रसेन मुनिवर सुजाण । आदित्यसेन निज तेज भाण ॥
श्री सहस्रकीर्त्ति नामि प्रसिद्ध । श्रुतकीर्त्ति मतिघणु कीर्त्तिलिद्ध ॥७२॥
श्री देवकीर्त्ति सोलमि पाटि । जिहां मारसेन थाप्या मघाट ।
श्री विजयकीर्त्ति किरतिहि विशाल । चारित्त लीउ पंचमिकालि ॥७३॥
केशवसेन लहुउ सुयंग । सहस्रसेन मुनिवर प्रसंग ।
श्री देवसेन निर्मल सुगंग । कनकसेन राघु सुरंग ॥७४॥
श्री विजयसेन सुपवित्त चित्त । हरसेन नामि महीयल वदित्त ॥
चारित्तसेन चारित्ताचार । वीरसेन जितौ वेगमार ।
कुलभूषण भूषणहसेन । तिममेर वदित्तो मेरसेन ॥७५॥

अथ दूहाबंध

शुभकरता मुनिवर हूच, सेन सुमंकर नाम ।
नयकीर्त्ति सुं वर्णवु, चन्द्रसेन गुणधाम ॥१॥७६॥
श्री सोमकीर्ति गुरु पाए नमुं, सहस्रकीर्त्ति सुविजाण ।
महकीर्त्ति गुरुवर्णवु मयण मनाव्यु आण ॥२॥७७॥
यसकीर्ति यस ऊजलु, जिम गयणंगणि चन्द ॥
गुणकीर्त्ति गुण बोलीइ, धरी मणी परमाणंद ॥३॥७८॥
पद्मकीर्ति गुण बोलता, किमिहि न आविछेह ।
त्रिभुवनकीर्ति मुनिश्वर तणउ, तपकरी निरमल देह ॥४॥७९॥

श्री विमलकीर्ति नाम हुअ, मदनकीर्ति मुनिराउ।
मेरुकीर्ति सहि गुरु तणे, सुरनर नमीया पाय ।।१५।।८०।।

अथ बोली

हवि शितालिसिमि पाटि श्री गुणसेन इसि नामि माहा मुनिस्वर हूया । तुकिसा ते मुनीस्वर । ध्यान नइ बलि रात्रि समि सर्वाधिराज प्रत्यक्ष थाई वाचा दीधी । तु किसी वाचा स्वामी संभलि । जतु इवडु साहसीक मल्ल तु जिहां ताहरु वचन । ताहरु भवन । ताहरी पोथी जिहां करिसे को ताहरी प्राज्ञा धरि । तेहनि सर्पनु विषकूकडु न थाइ । ए सहि जाणे । ते मुनिस्वरना ध्यानना विद्याना तपना इत्येवमादि अनेक गुण बोलतां सुर गुरु बृहस्पति आदि पार न पामइ ।।

श्लोक

रत्नकीर्ति ततो जातो मुनिर्जयसेनकः ।
कनककीर्त्तिश्चतत्पट्टे भानुकीर्तिर्गुणोज्ज्वलः ।।१।।८१।।
ततः संयमसेनाख्यो राजकीर्तिर्लघुस्मृतः ।।
विश्वनंदिमुनीन्द्रोऽभूत् चारुकीर्तिस्य कीर्तिभाक् ।।२।।८२।।

दूहा

एकावनमि पाटि जु विश्वसेन सुगरिट्ठ ।।
देवभूषभूषण समु ललतकीर्ति संतुट्ठ ।।१।।८३।।
श्रुतशीलि जे पूरीउ, श्रुतकीर्ति मुनिराउ ।।
जश्वविमयण हरावीउ,उदयसेन भविवाउ ।।२।।८४।।
गुणगाहा रसि पूरीउ, श्री गुणदेव विसेष ।।
विशाल कीर्ति वादिकरी, जगति रहावीरेष ।।३।।८५।।

अथ बोली

श्री अनंतकीर्ति तुऊ गुणसिट्ठमिपाटि । अनंत महिमा ।

अनंतगुण अनंतशील । अनंत तेज आदि गुण करणैकमल्ल । जीतउ मयण सल्ल । एवं विधि ते मुनिस्वर हुया । तेहनि पाटि श्री महसेन आचार्य बिठा । तीणि महसेनाचार्यि वादिविटंबन । वादी गजांकुश । महावादी मस्तकाशूल । मिथ्यात्व कुंदकुंदाल । इसां बिरद कहाव्यां । अनेक ग्रंथनासमूह बांधी । आपणु नाम रहाव्यु तेहना गुणावली अनेरा अनंत प्रवर्त्तिइ । भनि तेह गुरुनु नाम प्रभाति काल स्मरण मात्रि अनेक सुषनुदाता प्रवर्त्ति ।

अर्द्ध त्रोटक

श्री विजयकीर्त्ति निजकीर्त्ति रसे । जिनसेनइ माण्यु मयण वसे ।
रविकीर्ति कीर्तितेजिय घणु । जिणिनाद उतारयु मोह तणु ।।१।।

श्लोक

पद्मसेनगुणांभोधि- श्रीकीर्त्ति चारुसेनकः ।।
शुभवःशुभकीर्तिश्च भवकीर्त्ति भवांतकृत् ।।१।।८७।।
श्रीभावांतिकसेनाख्यो लोककीर्त्ति जगन्नुतः ।
श्रीमत्त्रिलोककीर्तिश्च मुनीन्द्रोऽमरकीर्त्तिकः ।।२।।८८।।

अथ दूहा

श्री सुरसेन मुनिंद जउ, जयकीर्ति गुणरासि ।
रामकीर्ति गुरुप्रणमतां, जांइ ते पातिक नासि ।।१।।८९।।
श्री उदयकीर्ति उदय भलि, राजकीर्त्ति गुरु जोइ ।
कुमारसेन गुण बोलतां, पार न पामि कोइ ।।२।।९०।।
पूरव लिपि बलउ वरण, पद्मकीर्त्ति सुपसिद्ध ।
पद्मसेन पट्टि हूउ, पद्मावतीवर दिद्ध ।।३।।९१।।

अथबोली

तेह श्री पद्मसेन पट्टोधरण संसारसमुद्र तारण तरण । सम्यग्दर्शनचरण । पंचेन्द्रिय विशिकरण । एकादशीमइपाटि

श्री भुवनकीर्ति राउल उपना । पुणजिणि श्री भवनकीर्तिइ । ढीलीनयर मध्य सुलतान श्री बडा महिमुंदसाह सभांतरि ... जालमी मलावी । सुलताण महिमुंदसाह संहपइ मान दीधुं । तेहनयर मध्य पत्रालंजन बांधी पंचमिथ्यात्व वादी बुंद राजसभाइ समस्त लोक विद्यमान जीता । जिन धर्म प्रगट कीधुं अमरजस इणी परिलीधु । अनिलेह श्री गुरुतणि पाटि श्री भावसेन मुनि श्री वासवसेन हूया । जे श्री वासवसेन मलमलिन गात्र चारित्र पात्र नित्य पक्षोपवास । मनि अंतराइ निसंयोग मासोपवास इसा तपस्वी इणि कालि हूया न कोहलि । मनि तेहनि नामि तथा पीछीनि स्पर्शि समस्त कुष्टादिक व्याधि जातो । तेह गुरुना गुण केतला एक बोलीइ । इवि भावसेन देव तणि पाटि श्री रत्नकीर्ति उपन्ना ।

अथ छंद त्रिवलय

श्री नंदीतट गच्छे, पट्टे श्री भावसेनस्य ।
नयसाचा श्रृंगारी, उपपन्नो रयणकीर्त्तीयो ।।१।।६२।।
उपन् रयणकीर्त्ति, सोहि निम्मलचित्त ।
हूउ विख्यात क्षिति । मति पवरो जीतु ।।
जीतुरे मदनबलि संक्यु न वाही छलि ।
जिनवर धम्मवली धुराधरो ।।६३।।
आणि जाणि रे गोयम स्वामी । तम नासिजेहनामि ।।
रह्या उत्तम ठामि मंडीयरण । छाड्यु र रे दुर्जय कोध ।
अभिनधु ए हू योध । पंचे इंद्रीकीधु रोष एक क्षणं ।।२।।६४।।
तसुरण तेह पाट । नरयनी भांबी वाट । मांडीला नवा प्रबाट विबह् पार । आणि जाणि रे जैनमाण । सर्व विद्या तणु जाण ।

आणि आखि रे जैनमाण । सर्व विद्या तणु जाण ।
नरवर वहि आण । रंगभरे । दीसिदीसिरे अति झूझार ।
हेला माहि जीतुमार । धकीय न लागीबार । वरह गुरो ।
इणीपरिअतिसोहि । भवीयण मनमोहि । ध्यान कुध आरोहि ।
श्रीलक्ष्मसेन भाणांव करो । ॥३॥६५॥

कहि कहि रे संसार सार । मजाणु सहु असार ।
अछि अति असार। भेद करी । पूजु पूजु रे अरिहंत देव ।
सुरनर करि सेव । हविमलाउ येव भावधरी ।
पालु पालु रे अहंसा धम्म । मणयनु लाधु जम्म ।
म करु कुस्सित कम्म । भवहवणे ।
तरु तरु रे उत्तम जन । अवरम आणु मनि ।
ध्याउ सर्वज्ञ धन । लक्ष्मसेन गुरु एम भणे ॥४॥६६॥

दीठि दीठि रे अति आणंद । मिथ्यातना टालि कंद ।
गयण विहूणउचंद । कुलहि तिलु ।
जोइ जोइ रे रयणी दीसि । तत्त्व पद लही कीधि ।
धरि आदेश शीसि । तेह भलु । तरि तरि रे संसार
करसिउ गुरु मूकिइ ह मोकलु कर दान भणी ।
छंडि छंडि रे रुडीबाल । लेइ बुद्धि विशाल ।
जाणीय अतिरसाल । लक्ष्मसेन मुनिराइ तणी ॥५॥६७॥

श्री रयणकीर्ति गुरु पट्टि तरणि साउज्जल तपै ।
छंडावी पाषंड धम्मि मारगि आरोपै ।
पाप ताप संताप मयण मच्छर मय टालै ।
क्षमायुक्त गुणराशि सोभ लीला करि गासै ।
बोलिम वाणि अम्मी अग्गली सावय जण बन चित्त हूर ।

श्री लखमसेन मुनिवर सुगुरुयल संघ कल्याण कर ॥६॥९८॥

सगुण अगुण भंडार गुणहकरि जण मण रंजे ।
उवसम हयधर चडवि मयण मकवाड भंजे ॥
रयणायर गंभीर धीर मन्दिर जिम सोहै ।
लखमसेन गुरु पाटि गुरु भविजण मन मोहै ।
दीपंति तेज दणीयर जिसु मयमत्ती मण माण हर ।
जयवंता चउवय संघसु श्री धम्मसेन मुनिवर पवर ॥१॥९९॥

पहिरवि सील सनाह तवह धरण कडिकसीय ।
क्षमा षडग करि धरवि गहीय भुजबलि जय लछी ।
काम कोह मद मोह लोह आवंतु टालि ।
कट्ठ संघ मुनिराउ षच्छ इणी परि अजूयालि ।
श्री लख्मसेन पट्टोधरण पाव पंक छिप्पि नही ।
जे नरह नरिंदे वंदीइ श्री भीमसेन मुनिवर सही ॥१००॥

सुरगिरि गिरि को चडइ पाउ करि अति बलवंतो ।
कवि रणायर तीर पुहुतउय तरंतो ॥
कोइ आयास पमाण हत्थ करि गहि कमंतो ।
कट्ठसंघ संघ गुण परिलहि दुविह कोइ लहंतो ।
श्री भीमसेन पट्टह धरण गच्छ सरोमणि कुल तिलो ।
जाणंति सुजाणह जाण नर श्री सोमकीर्त्तिमुभलो ॥१०२॥

पनरहसि अठार मास आषाढह जाणु ।
शुक्रवार पंचमी बहुल पष्यहं बषाणु ।
पुव्वाभद्द नक्षत्र श्री सोमकीर्ति गुरुवरि ।
सत्यासी वर पाट तणु प्रबंध जिणि परि ॥
जिनवर सुपास भवनि कीउ श्री सोमकीर्त्ति बहुभाव धरि ।
जयवंतउ रवि तलि विस्तरू । श्री शांतिनाथ सुपसाउ करि ॥१०३॥

इति श्री गुरुनामावली

रिखभनाथ की धूलि

प्रणमवि जिणवर पाउ तु, राउ तिहु भवननुए ।
समरवि सरसित देवतु, सेवा सुर नर करिए ।
गाइ सु आदि जिणंद, आणंद अति उपजिए ।
कोशल देश मभार तु, सुसार गुण आगलु ए ।। १ ।।

नगर अजोध्याहां वास तु, मास जगि पूरविए ।
नाभि नरिंद सुरिंद जिसु, सुरपुर वरीए ।
मुरा देवी तास अरधंगि सुर गिर भाजिसीए ।
राउ राणी सुखसेजि, सुहे जोइ नितु रमिए ।। २ ।।

माता की सेवा करना

इंद्र आदेश सुवेस आवीय सुर किन्यका ए ।
केवि सिर छत्र धरंति, करंति केवि धूपणाए ।
केविउ गट देइ अंगि, सुचंगी पूजा घणी ए ।
केविउ मर बहु अंगि, आभगीय आण वहिए ।। ३ ।।

केवि सयन अनि आसन, भोजन विधि करिए ।
केवि खड्ग धरी हाथि, सो साथइ नितु फिरिए ।
मुरा देवी भगति चि काजि, सु लाजन मनि धरिए ।
जू जूया करि सवि वेषतु, मा मन परिहरिए ।। ४ ।।

गरभ सोध करि भाव तु, गाइ गुण जिन तणाए ।
वरसि अहूठए कोडि करि, जोडि सोवण तणीए ।
दिन दिन नाभिनिवार, सो नारि ना दुःख घणीए ।
एक दिवस मुरा देवी, सो सेवीइ जक्षणीए ।
पुढीय सेजि समाधि, सु अधि कोइ आसणीए ।। ५ ।।

अथ ढाल बीजी

मुरा देवी सोयणडां पेषि, त्रिभुवन जण जिम देषि ।

रयणीय पाछलि याम, देवीय जागिली ताम ।। १ ।।
करीय शृंगार सु सार, भावीय सभाह मझार ।
नाभि नरिंद पाए लागि, कर जोडी फल मागि ।। २ ।।

सोलह स्वप्नो का फल

स्वामीय सुपराडां दीठा, दुःख सविहो तूर्या अबीठो ।
उज्जल वर्ण सोभाऊ, पहिलि गयवर राऊ।। ३ ।।
बीजि वृषभ ते गाजि, दीठि दालिद्र भाजि ।
बाऊं सिंघ ते त्रीजि, सवल ऊपम गुण दीजि ।। ४ ।।
चुथि लक्ष्मीय दीठी रयण, सिंघासण नैठी ।
पंचमि पुष्प नी माला, ऊ गुंथीय विवध विशाला ।। ५ ।।
छठि चंद संपूरह, तिमर करि घण दूरह ।
सातमि सूर ते दीठु, उदयाचल सिरे बीठु ।। ६ ।।
मच्छ युगल वैसंतु आठमि, जल सिरिए झलकंतु ।
नुमि पूरण कुंभोउ, मंगलयुक्त आरंभो ।। ७ ।।
सरवर जल भर्यु सोहि, दशमि जनम मन मोहि ।
सायर लहर अपार, दीठा सपन ईग्यार ।। ८ ।।
विष्टर भवन मझार, रयणमि सपन ते बार ।
तेरमि अमर विमान, रिपु सवे हीया विमान ।। ९ ।।
चौदमि नागचावास, रंगि करिय विलास ।
पनरमि रयण चापुंज, जाणी मेर नाकुं ।। १० ।।
सोलमि अग्नि अंगीठी, धूम रहित मिय दीठी ।
सोलि सपन विचार बोलि राउ ते सार ।। ११ ।।
तुं उरि पुत्र ते होसि ज्ञानि त्रिभुवन पोसि ।
राणी मंदिरे पुहुती दसह कुमारी संयुती ।
गर्भ महोत्सव कीधु सुर मली दान बहु दीधु ।। १२ ।।

अथ ढाल त्रीजो

जनम महोत्सव

अठ हो पुत्र होमा दश मास । नाभि नरिंदनी पूगीय आस ।
जनम महोत्सवि सुरपति आया । चउ विध काय सुरासुर राया
॥ १ ॥

इन्द्र ऐरावण विसि पहूत । जय जय शब्द ते करइ बहूत ।
सूत महिय इंद्राणीय जाई । मायामि बालक नवु'यनीयाई ॥ २ ॥

आणीय बालक इन्द्रनि दीधु' । प्रणमीय सुरपति निज करि
लीधु' ।
गजपति बइसीनि सुरगिर जांइ । देव देवी जिनवर गुण गांइ ॥ ३ ॥

पांडुक वन कंबल सिला नाम । बिसार्‌या जिन करीय प्रणाम ।
क्षीर समुद्र जल कुंभ भराव्या । सहस अठोतर सुर वर लाव्या
॥ ४ ॥

इंद्र इंद्राणीय करि अभिषेक । आप आपणि संगि रचिया
विवेक ।
स्नान कराविय सील विभूषण । मूक्या ते जिनवर सहि जु
सुलक्षण ॥ ५ ॥

इन्द्रि अंगूठि अमृत देइ । ज्ञानीय चर्म वदन नवि लेई ।
उत्सव अति घणि आव्या ते ग्राम । सुर नर सज्जन हरषीया
ताम ॥ ६ ॥

आणी इन्द्राणीइ माइनि आप्यु । वृषभ कु'वर वर नाम जु
थाप्यु ।
नाचीय सुरपति पूजीया तात । ग्यर निज मंदिर करता
ते वात ॥ ७ ॥

बाधए कुमर ते नव नव रंगि । धनपति भगति करि बहु संगि ।
यौवन लक्षण गुण करी मंड्यु । बाल पणु' जिन सहि जियां
छांड्यु ॥ ८ ॥

इन्द्रि करयुग वीवाह अनोपम । नंदा सुनंदा दोइ नारी
निरोपम ।

ज्ञान विज्ञान ते सघलांयां दाषि । प्रजाय लोक सवेत्तय थका
राषि ।। ६ ।।

इणी परिभोगवि सौक्ष्य असंख । पूरव बीत त्रियासीय लक्ष ।

वैराग्य भावना

अपच्छर देषि वैरागिय वास्यु । भोग सौक्ष्यनीया मूकीय आस ।। १० ।।

स्थिति संसार असार ते जाणी । चारित्र लेवानि निज मति
आणी ।। ३ ।।

अथ ढाल चुथी

लौकांतिक सुर आवीयाए । तिहां जय जय शब्द वधावीयाए ।

आणीय पालषि सुर चढीए । तिहां रयण हीरेय सोवण
जडीए ।। १ ।।

श्रिसीय जिनवर संचर्‌याए ।
तिहां आणे संयमश्री वर्‌याए ।

तपस्या

बहू प्रिया मतलि जाई रह्या ए ।
तव लोयतणा दुख मति सह्या ए ।। २ ।।

दिगम्बर व्रत उच्चरयु ए ।
तिहां वीस सहस्र राए परिवरयु रे ।

बरस दिवस उपवास भव ए ।
तिहां हथणाउर पुरवर गउए ।। ४ ।।

राउ श्री यास वधावीउ ए ।
तिहां आंजलि रसह घटावीउए ।

करम बिरी संघारीयाए ।
तिहां दोष अढारह वारीयाए ।। ५ ।।

संबोधि सुर नर बहुमे ।
समकित रयणइ थिर कयए ।

कैवल्य होना

सहस्र वरस ध्यान उपनुए ।
समवसरण तिहां नीपुनुए ।। ६ ।।
जिणवर जस अति महिमद्यु ए ।
तिहां जिण सासण अति गह्गिह्यु ए ।
संबोधि सुर नर वरथे ।
समकित रयणह थिर करू ए ।। ७ ।।
गिरि कैलासह स्थिति करीए ।
तिहां मुगति रमणि जिनवर वरीए ।
राज रागिम सवि सुख सहूए ।
श्री सोमकीरति कहि दिढ बहू ए ।। ८ ।।
धूल श्री ऋषभनु गाइसिए ।
तहां चितत फल सहू पाइसिए ।। ९ ।।

इति श्री रिषभनाथ धूल समाप्त:

लघु चिन्तामणि पार्श्वनाथ जयमाल

तिहुवण चूडामणि जय चिंतामणि, भुवण कमल सरणेसर ।
नागद्दहमंडणु दुरियविहंडणु, जय जय पास जिणेसर ।।
जय पास जिणेसर वीयराय, जय जय सयंभु सुर णमिय पाय ।
जय केवल किरण फुरंत देह, जय हिय मइ तुह वाणी अमोह ।
वाणारसि णयरिहि लद्ध जम्मु, पामावइ पणइणि नाथ पोम ।
धरणिंदु सुसेविय सामि साल, तुव चलण नमइ पणमंत काल ।
नंदन अश्वसेणु नरेसु राय, वम्मादे माइ पूरवइ आस ।
मन वंछित पूरण सज्झु सुखु, तुह पाय णमंतह जाइ दुक्खु ।
घरि पुरि गिरि मंदिरि अइदुसभि, रणिरावलि देवलि अइ दुसभि ।
जलि थलि महियलि जे तुह संरति, तह निश्चय दुरिय दुख बहुजंति ।
जे स्वामि थुणंतह गुण असेस, तसु पाय पणासइ खास सासु ।
जो दाहविउ चिय कोढु हुंति, जे तुह गंधोवहि खयहु जंति ।
जे चलण स्वामि तुहु पय जुवंति, जे कर जे तुहु पूजा रचंति ।
जे नयण धन्नु तुहु मुहु जुवंति, सा जीहजि तुहु पय गुण थुणंति ।
जे श्रवणजि तुहु वाणी अमोघ, जम्मणु तुहु हियडइ धरेहु ।
जिहि दीठा पहासइ भयह पापु, जिहि ध्याया सीझइ मंतु जाप ।
जिहि थुणियहि फिटइ भयइ रोग, यहु पूरइ सग्गु पवग्गु भोउ ।
हउ पास जिणेसर तणउ भिच्चु, इम भणइ सोम सेवग सच्च ।
फल पदमु तासु मंदिरि घरेण, चिंतामणि चिंतयउ अथु देइ ।
जो कामधेनु तहि घरि दुहेइ, जे पासणाहु हियडइ धरेहु ।।

घत्ता

तू भुवण दिवायरु गुणरयणायरु, मद मोह दुह खंडणु ।
तू तिहुवण मंडणु, भवदुहखंडणु जय जय पास जिणेसरु ।[1]

---

1. गुटका संख्या ८—शास्त्र भण्डार श्री दिगम्बर जैन मंदिर सोनियों का (पार्श्वनाथ मन्दिर) जयपुर । पृष्ठ 2-3

कविवर सांगु

राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों में कविवर सांगु की एक मात्र काव्य कृति "सुकोसलराय चुपई" नैणवा के शास्त्र भण्डार के एक गुटके में संग्रहीत है। इसी गुटके में आचार्य सोमकीर्ति एवं ब्रह्म यशोधर की रचनाएं लिपिबद्ध हैं। गुटका प्राचीन है जिसका लिपिकाल संवत् १५८५ ज्येष्ठ सुदी १२ रविवार है। इस गुटके ने गुजरात एवं राजस्थान के कितने ही शास्त्र भण्डारों की यात्रा की थी। संवत् १६४४ द्वितीय वैशाख सुदी १५ के दिन राजस्थान के प्रसिद्ध दुर्ग रणथम्भौर में इस गुटके पर टीका (सूची) लिखी गयी थी। इसके पश्चात् उसने कहां-कहां की यात्रा की थी इसका उल्लेख नहीं मिलता लेकिन वह रणथम्भौर से नैणवा के शास्त्र भण्डार में पहुंचा और फिर जयपुर पहुंचा।

सांगु का दूसरा नाम सांसु भी मिलता है। कवि कहां के थे किस भट्टारक के शिष्य थे। माता पिता स्त्री सन्तान आदि के बारे में भी कवि की कृति मौन ही है। लेकिन जिस गुटके में इनकी कृति संग्रहीत है उसकी अन्य कृतियों के आधार पर यह अवश्य कहा जा सकता है कि कवि राजस्थान के ही निवासी थे और आचार्य सोमकीर्ति एवं ब्रह्म यशोधर से इनका निकट का सम्बन्ध था। यद्यपि चुपई में कवि ने अपने नाम के उल्लेख के अतिरिक्त किसी दूसरे विद्वान् का नाम नहीं दिया है। लेकिन उन कवियों के साथ इनकी रचना का संग्रह होना ही इनके पारस्परिक सम्बन्ध को प्रकट करने वाला है।

रचना काल

यद्यपि इस दृष्टि से भी "सुकोसलरायचुपई" में कोई उल्लेख नहीं मिलता लेकिन लिपिकाल के आधार पर इस कृति को हम संवत् १५४० के आसपास की रचना मान कर चलते हैं। इस कृति की एक पाण्डुलिपि देहली के एक शास्त्र भण्डार में संग्रहीत है जिसका उल्लेख श्री कुन्दनलालजी ने किया है।[1]

काव्य परम्परा

सुकोसल का जीवन जैन जगत में पर्याप्त रूप से लोकप्रिय रहा है इस कथा का मूल स्रोत हरिषेण कृत "बृहत् कथाकोश[2] के १३७ वें एवं १५२ वें

---

1. देखिये
2. बृहत्कथाकोष (सिंघी जैन सीरिज बम्बई संस्करण १९४३)
3. वही पृष्ठ ३०५–३१४,

आख्यान में मिलता है लेकिन अपभ्रंश के महाकवि रइधू ने सर्वप्रथम संवत् १४६६ में सुकौसल के जीवन को "सुक्कोसल चरिउ" के नाम से खण्ड काव्य के रूप में प्रस्तुत करके उसकी लोकप्रियता में चार चांद लगाये। इस खण्ड काव्य में चार संधियां हैं जिनमें ७४ कडवक हैं। रइधू ने महाराजा नाभिराम से कथानक का सम्बन्ध जोड़कर अपने चरित नायक को भी इक्ष्वाकु वंशीय आदि तीर्थङ्कर ऋषभदेव का वंशधर सिद्ध किया है। इसलिये खण्ड काव्य की प्रथम दो संधियों में ऋषभदेव का ही जीवन वृत्त दिया गया है। काव्य की शेष दो संधियों में सुकोसल का जीवन काव्यात्मक शैली में प्रस्तुत किया गया है।[1] रइधू के समकालीन ब्रह्म जिनदास हुये जिन्होंने अनेक रास काव्यों की रचना करने का यश प्राप्त किया। ब्रह्म जिनदास के इस काव्य के एक पाण्डुलिपि डूंगरपुर के शास्त्र भण्डार में मुझे देखने का अवसर मिल चुका है।

ब्रह्म जिनदास के पश्चात् सांगु कवि ने सुकोसल जीवन कथा को आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया। उसे काव्य रूप प्रदान किया तथा सुकोसल को युद्ध भूमि में भेज कर तथा सभी देशों के राजाओं पर विजयश्री दिलवा कर उसने जीवन को एक नया मोड़ दिया। उसने रइधू के समान अपने काव्य को महाराजा नाभिराय से आरम्भ कर दिया किन्तु मंगलाचरण के पश्चात् ही अयोध्या का वर्णन आरम्भ कर दिया तथा उसके राजा कीर्तिधर एवं रानी महिदेवी को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करके कथा को लम्बी नहीं की तथा साथ ही पाठकों को आरम्भ से ही सुकोसल के जीवन कथा को सुनने की रुचि पैदा करने में सफलता प्राप्त की। यही नहीं काव्य के अन्त तक पाठकों की रुचि बनाये रखने में भी वह किसी अन्य कवि से पीछे नहीं रहना चाहता। सुकोसल का जन्म, शिक्षा-दीक्षा, युद्ध एवं विजय का विस्तृत वर्णन, विभिन्न विजित देशों के नामों का उल्लेख, विजय प्राप्ति के पश्चात् नगर प्रवेश, प्रजाजनों द्वारा स्वागत, राज्य सुख, अकस्मात् वैराग्य होना, घोर तपश्चर्या, व्याघ्रिनी द्वारा शरीर भक्षण, कैवल्य एवं निर्वाण आदि घटनायें एक के बाद दूसरी जिस क्रम में आती है उससे पूरा काव्य ही रुचिकर बन गया है।

काव्य का अध्ययन

कवि ने अपने इस चुपई काव्य में सभी वर्णनों को सजीव बनाने का प्रयास किया है। सर्वप्रथम वह 'अयोध्या नगरी' की महिमा एवं उसके निवासियों की समृद्धि का वर्णन करता है। वहां ऊंचे-ऊंचे महल हैं जो ऊंचाई में विन्ध्याचल के कान

---

1 विस्तृत परिचय के लिये डा. राजाराम जैन का "रइधू साहित्य का आलोचनात्मक परिशीलन" देखिये।

के समान लगते हैं। नगर के घरों पर गुडियां उछलती रहती है। वहां की कामिनियां अपने आपका शृंगार करने में ही व्यस्त रहती है। घरों में मोतियों के ढेर लगे रहते हैं जैसे मानों वे उसी नगर में पैदा होते हों। नगर के निवासी स्वर्ण दान बहुत करते हैं। वहां के प्रत्येक घर में वैभव बरसता है उनमें लक्ष्मी निवास करती है। यही वर्णन कवि के शब्दों में निम्न प्रकार है —

> घिरि घिरि बन्ध्यामरि के काए, घिरि घिरि राउत गुडि निसाए।
> घिरि घिरि नारी करि सिणगार, घिरि घिरि बंदी जय जयकार ॥ ६ ॥
>
> घिरि घिरि सोवण दीजि घणां, घिरि घिरि नही मोती नीमणा।
> घिरि घिरि रयण अमूलइक जेह, घिरि घिरि नहीं लक्ष्मी नु थेह ॥ ७ ॥

सुकोमल का युग सात्विक युग था। विषय वासना, भोग विलास एवं खान-पान में रुचि आयु ढलने के साथ-साथ स्वतः कम हो जाया करती थी और राजा महाराजा भी अपना अन्तिम समय राज पाट त्याग कर साधु जीवन के रूप में व्यतीत करना चाहते थे। इसलिये राजा कीर्तिधर ने भी अपनी यही इच्छा व्यक्त की

> घन योवननि जाषिम घणु, सहिजी शरीर नही आपणु।
> अह्म दीक्षा लेसु वनि जाई, पंच महाव्रत पानु सही।
> भुगति तणा सुख जो ना काजि, तिणि कारणि हूं मेहुण राज ॥ १४ ॥

लेकिन तब तक कीर्तिधर पुत्र विहीन थे। इसलिये मंत्रियों एवं महाजनों ने पुत्र होने तक राज्य काज करते रहने की प्रार्थना की। राजा के मन में बात बैठ गयी और उन्होंने वैराग्य लेने के विचार को कुछ समय के लिये स्थगित कर दिया। रानी के गर्भवती होने के पश्चात् पुत्र जन्म का भेद खुल ही गया। फिर क्या था चारों ओर उत्सव आयोजित किये गये। मंगलगीत गाये गये। ब्राह्मणों को एवं याचकों को खूब दान दिया गया। इसी की एक झलक कवि के शब्दों में देखिये —

> नयर माहि गुडी उछली, रायतणी मनि पुगी रली।
> बन्ध्यामणि ब्राह्मणनि दीध, जन्म लगि अयाचक कीध।

एक ओर पुत्र जन्म के उत्सव आयोजित हो रहे थे तो दूसरी ओर राजा ने नवजात शिशु को राज्य भार सौंप कर मुनि दीक्षा धारण कर ली। चारों ओर

प्रसन्नता के स्थान पर हाहाकार मच गया। सबसे अधिक वेदना एवं दुःख रानी को हुआ। वह रोने पीटने लगी और अपने मन के भाव निम्न प्रकार प्रकट करने लगी—

सहिदेवी झूरि घणुं, हीयडा आगिल बाल।
रे रे कुंयर सलखणा, किम नीगमसुं काल ॥ २६ ॥
अंतेउरह धंधलु, जभी मेल्ही आवि।
एकह पीउडा कारणि, हवि हुआ निर नाथ ॥ २७ ॥

रानी को अपने पुत्र के लिये पति विरह के दुःख को भुलाना पड़ा। वह पुत्र पालन एवं उसकी शिक्षा दीक्षा में लग गयी और आठ वर्ष की आयु में ही उसे सब कलाओं में दक्ष बना दिया। उसका रूप निखर गया तथा उनके मनोज्ञ व्यक्तित्व को देख कर सभी ने उसे अपना राजा स्वीकार कर लिया।

वरस आठनु थउ जे जलि, सर्व कला सीख्यु ते तलि।
सोवनवानी परि झलकि देह, सेवक सजन सहू नव नेह ॥ ३२ ॥

सुकोसल बालक राजा थे इसलिये राज्य में दुश्मनों ने तोड़-फोड़ प्रारम्भ कर दी। प्रजा में खलबली मचने लगी। कौन अपनी जान जोखिम में डाल कर शत्रुओं का मुकाबला करे। लेकिन जब सुकोशल को उपद्रव की बात मालूम हुई तो उसने शत्रुओं को अच्छा सबक सिखाने का निश्चय किया। माता ने उसे बालक जान कर रोकना चाहा लेकिन सुकोसल ने माता से निम्न शब्दों में अपना दृढ़ निश्चय व्यक्त किया—

कुंयर कहि सुं सभलि मात, पिसुण तणी छि थोड़ी बात।
भाजि नयर देश लूटीइ, शूरणी पिठा किम छूटीइ ॥ ३६ ॥

सुकोसल ने युद्ध की पूरी तैयारी की। सेना को सब शास्त्रों में सज्जित किया गया। हाथी, घोड़ा, पदाति, रथ आदि की सेना तैयार की। इसके पूर्व सब राजाओं को सन्देश भेजे गये जिनमें उन्हें सुकोसल की अधीनता स्वीकार करने के लिये कहा गया। लड़ाई के बाजे बजने लगे। सुकोसल स्वयं रथ में बैठे तथा पैदल सेना को सबसे आगे रखा गया। समुद्र के समान उसकी सेना दिखाई देने लगी। इतनी धूल उड़ी की सूर्य का दिखना बन्द हो गया।

मह्यां कटक जिम सायर पूर, खेहा रवि नवि सूझि सूर।

सुकौसल यद्यपि आयु में बहुत छोटा था लेकिन उसकी वीरता, साहस एवं पराक्रम देखते ही बनता था। उसकी सेना अत्यधिक दक्ष एवं संगठित थी तथा शत्रु सेना को परास्त करने में सक्षम थी इसलिये अधिकांश राजा महाराजा बिना युद्ध के ही अपनी पराजय मान कर सुकौशल की शरण में चले गये और यथोचित दण्ड देकर उसकी पराधीनता स्वीकार करली। वह अपनी सेना के साथ गुजरात, सौराष्ट्र, कोंकण, महाराष्ट्र, कर्नाटक आदि सभी प्रदेशों को रौंदता हुआ उन पर विजय पताका फहरायी।

गुजर सोरठ आणि लीध, नयीयाडा बंदर बिसकीध।
भांजि तरुवर पाडि वार, साध्युं कुंकणानि करणाट ।। ५८ ।।

लाड देश मरहठ मलहार, साध्यां कन्नड तिणि वार।
कुंडलपुर नु कंहीइ बीस, आपी साबण नामी शीस ।। ५९ ।।

सुकौसल राजस्थान के मेवाड़ एवं मारवाड़ भी गये तथा हस्तिनापुर एवं मुलतान भी गये। वे गौड देश एवं खुरासाण भी गये और वहां के सभी राजाओं को सहज ही वश में कर लिया। जिसने भी उसका मार्ग रोकना चाहा उसीको बन्दी बना लिया गया।

मेदपाट मुरकु मुलताण, खांडा बले साध्यु खुरसाण।
मरुस्थली बहुली बहु जाण, गौड चौडगा जणु बखाण।।
हथणा उर शुं साध्या देश, पोयणपुर कीधु परवेश ।। ६३ ।।

इस प्रकार सुकौसल ने चारों दिशाओं को जीत लिये। सब जगह उसकी आज्ञा मानी जाने लगी। उसे अनगिनत लक्ष्मी, सम्पदा एवं सम्पत्ति प्राप्त हुई। हाथी, घोड़ा आदि की तो संख्या ही नहीं थी। कितनी ही राजकुमारियों से भी उसने विवाह कर लिया।

राह देश सब साधिया उत्तर दक्षिण जाणि।
पूरब पश्चिम साधिया, चिहुं दिशि वरती आणि ।। ६९ ।।

लक्ष्मी आणी लक्ष गणी, धन कण कंचणसार।
परणी अतीघल पदमणी, हय गय रयण भंडार ।। ७० ।।

सुकौसल अयोध्या आकर सानन्द राज्य करने लगा। चारों ओर सुख-

शान्ति थी। प्रजाजनों को अपार सुख था। नगर में कहीं कोई दुःखी एवं निर्धन नहीं दिखता था।[1]

सुकौसल की रानियां भी क्या थी सौन्दर्य एवं लावण्य की मानों प्रतिमूर्ति ही थी। वे विभिन्न प्रकार के शृंगार करती और अपने प्रियतम का मन प्रसन्न करने का उपक्रम करती। कभी वे काले वस्त्र पहिनती, कभी पीले कभी केसरियां रंग के और कभी दूसरे रंग के। वस्त्रों का पूरा मैचिंग रहता। वैसे ही आभूषण, एवं वैसा ही रंग सभी मिल कर इतनी अधिक सुन्दर लगती कि उनका सौन्दर्य देखते ही बनता था।

पीला सोवण सोहती ए, पीली चूडी बांहि तु।
पीली झालि झलामलीए पीलां केर त्यांह तु॥
उजल झांझार झलकती ए, उजल रयण अपार तु।
उजल दरपण नरपती ए, उजल मोतीय हार तु।

इस प्रकार अपार सुख सम्पत्ति को भोगते हुए पर्याप्त समय निकल गया। समय को जाते हुये देर नहीं लगती। पुण्य की महिमा को कौन नहीं जानता। पुण्य से ही यश, कीर्ति, धन सम्पत्ति तो मिलती है।

पुन्यि कीरति उजली, पुण्यि जस भंडार।
पुणिइ पिसुण पीडि नाहीं, पुण्य पृथ्वी माहि सार॥

सुकौसल के लिये १६ वें वर्ष में राज्य सम्पदा त्याग कर वैराग्य लेने की भविष्यवाणी थी। इसलिये राजमाता ने नगर में साधु मात्र के लिये प्रवेश बन्द कर दिया था। कुछ समय पश्चात् मुनि कीर्तिध्वज आये लेकिन वे भी नगर प्रवेश नहीं पा सके। राजमाता सहदेवी का हृदय मात्सर्य से भर गया। लेकिन जब सुकौसल को यह बात मालूम हुई तो शीघ्र ही नगर के बाहर गये और मुनि महाराज को विनय सहित नगर में लाने का निश्चय किया। सुकौसल ने वहां जाकर निम्न प्रकार निवेदन किया—

अई सुकौसल नामि मोस, तम्हे कहि उपरि आणु रसि।
काया कष्ट करवां घणुं, राज रिधि सहूइ तम्ह तणु।
माहारि नहीं संसारि काज, तिणि कारणि मि छोड्युं राज।

---

1. प्रजा सहू सुख भोगवि सा० दुखीय न दीसइ कोइ।

सुकौसल ने भी वैराग्य लेने का निश्चय कर लिया। उसके वैराग्य लेने की सूचना तत्काल चारों ओर फैल गयी। नगर में हाहाकार मच गया। जिसने सुना वही रोने बिलखने लगा। रानियों के विलाप का हृदयविदारक दृश्य था। कवि ने इन सबका अच्छा एवं प्रभावोत्पादक वर्णन किया है—

एक झूरि एक करि विलाप, एक कहि हम लांगु पाप।

हा हा करीनि कूटि हीउ, आज अंतेउर सुनुं थऊं।

एक अबला नांखि सिणगार, एक तोडी नवसर हार।

चीर दोर एक भाजि चाली एके धरणि पडी टल वाली।

सुकौसल के वैराग्य लेने के पश्चात् सारा घर ही चौपट हो गया। राजमाता महिदेवी बुरी तरह विलाप करने लगी और महल से गिरकर आत्मघात कर लिया। वह आर्त्तध्यान से मरने के कारण अगले जन्म में व्याघ्रिणी बनी।

इस प्रकार पूरा काव्य विभिन्न वर्णनों से ओतप्रोत है। सभी वर्णन स्वाभाविक है। नगर वर्णन, सुकौसल जन्म, शिक्षा-दीक्षा, शत्रु देशों पर आक्रमण एवं उनमें विजय, सौन्दर्य वर्णन, विषय सुख वर्णन, विरह वर्णन, तपस्या वर्णन, परिषह वर्णन, आदि सभी वर्णन एक से एक निखरे हुये हैं। कवि ने उनमें जीवन डाला है इसलिये व सभी सजीव बन गये हैं।

सुकौसल यद्यपि राजकुमार थे। दुःख को कभी जाना ही नहीं था। लेकिन जब तपस्या करने लगे तो गर्मी, सर्दी एवं वर्षा की भीषणता की जरा भी परवाह नहीं की। भाद्रपद मास में डांस एवं मच्छर भयंकर रूप में सताते लेकिन वे तो आत्मध्यान में रहते। सर्दियों में जब ठण्ड से सारा शरीर कांपता था तब भी वे एकाग्रचित्त होकर नदी किनारे ध्यान करते रहते। गर्मियों में दोपहर की वेला, तपती हुई शिलाएं और तेज धूप सभी तो एक से एक बढ़ कर ध्यान में बाधक थे। कवि ने इन सभी का अपने लघु काव्य में अच्छा वर्णन किया है—

ताती वेलू तपती सिला, ते उपरि तप साधि भला।

माथा उपरि सूरज तपि, निभर कर्म घणेरा खपि॥

एक ओर वह व्याघ्रिणी सुकौसल के शरीर को खाने लगी। दूसरी ओर सुकौसल मुनि आत्म ध्यान में इतने लीन हो गये कि शारीरिक कष्ट का उन्हें भान ही नहीं हुआ। और वे कर्मों की निर्जरा करने लगे। अठारह दोषों से रहित होकर पांच महाव्रतों का पालन करने लगे।

कर्म टालि टालि प्रतिहि सुजाण
अटवी मांहि एकलु मन माहि आतम ध्यान आणि ।
परमानन्द सेवि सदा जाणि धर्म विचार ।
बिहि मुनिवर प्रति सूयडा हुवि लेंसू भव पार

व्याघ्रिणी द्वारा भयंकर आक्रमण का एक वर्णन देखिये—

वाघिणी धर हरि लिणि अंबर थरहरि
पीडा न जाणिए ना तरतणीए ।
एह पापिणी पीड न जाणि मडलां एहनां करणी
पुंछड लाली उंची उडि थर थर धूजी धरणी ।

छन्द—प्रस्तुत काव्य में चौपई एवं दोहा छन्द की प्रमुखता है लेकिन अन्य छन्दों में ढाल हीडोलानी, वस्तुबन्ध छन्द का भी प्रयोग हुआ है । पूरा काव्य गेय काव्य है जो गाया जाकर जन मानस में सुकौसल के प्रति श्रद्धा के भाव उंडेलता है ।

भाषा--भाषा की दृष्टि से काव्य राजस्थानी भाषा का काव्य है । मांगु, लांगु, थिरि थिरि सिरणगार, आपणुं, जनम्युं सुंतु जैसे क्रिया-पदों एवं अन्य शब्दों का प्रयोग बहुतायत से हुआ है । सांगु कवि का यद्यपि गुजरात से सम्बन्ध था लेकिन गुजराती भाषा का प्रयोग नहीं के बराबर हुआ है । फिर भी कहीं कहीं क्लिष्ट शब्द भी प्रयोग हुआ है उससे यह काव्य सामान्य पाठकों के पल्ले नहीं पड़ता ।

नगरों का वर्णन

अयोध्या के विशेष वर्णन के साथ २ अपने इस काव्य में कितने ही प्रदेशों एवं नगरों का उल्लेख किया है । इससे काव्य के प्रति आकर्षण सहज ही बढ़ गया है । गोपाचल (ग्वालियर) उज्जयिनी, गुर्जर देश, सोरठ (सौराष्ट्र) कोंकण, लाड, मरहठ (महाराष्ट्र), कन्नड (कर्नाटक) मेदपाट (मेवाड़) मुलतान, खुरासाण, मरुस्थली (मारवाड), हथणाउर (हस्तिनापुर) पोयणपुर (पोदनपुर), चम्पापुर, पावापुर, अंगदेश, बंगदेश, मगध, चीण (चीन) पंचाल, राजगृही, आदि के नाम उल्लेखनीय है ।

समाज वर्णन—सुकौसल चुपई में सामाजिकता वर्णन के प्रसंग बहुत कम आये हैं । पुत्र जन्म, आदि के अतिरिक्त कोई विशेष वर्णन नहीं मिलते । लेकिन

राजा भी राजपाट छोड़ कर साधु जीवन ग्रहण कर लेते थे तथा कभी-कभी छोटी अवस्था में भी वे मुनि जीवन अपना लेते थे। साधुओं का समाज पर विशेष प्रभाव था।

इस प्रकार 'सुकोसल चुपई' हिन्दी के आदिकाल की एक उत्तम कृति है। जिसके प्रचार प्रसार की आवश्यकता है। काव्य की पूरी कथा का सार निम्न प्रकार है।

कथा

इस पृथ्वीतल पर असंख्यात द्वीप हैं। उनमें जम्बूद्वीप सबके मध्य में स्थित है। उसी जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र है जिसकी विशेष महिमा है। उसमें अयोध्या नगर है जहाँ दान पुण्य होता रहता है। धनिक लोगों की जहाँ घनी बस्ती है। गरीब तो कहीं दिखता ही नहीं। नगर में चौरासी चौपड़ हैं तथा दुकानों की तो संख्या करना भी कठिन है। नगर की पूरी लम्बाई–चौड़ाई १२ योजन प्रमाण है। वहाँ ऊँचे-ऊँचे मकान थे जिन पर ध्वजाएं फहराती रहती थी। महलों में बैठी रमणियां श्रृंगार करती रहती थी तथा जिनमें अतुल्य धन राशि संग्रहीत थी। नगर उद्यान, सरोवरों से युक्त था तथा जिसमें अनेक महल थे।

इसी अयोध्या नगरी में 'कीर्तिधवल' राजा सपरिवार राज्य करता था। उसकी रानी सहिदेवी थी जो सुन्दरता की खान थी। एक दिन कीर्तिधवल के मन में जगत से वैराग्य हो गया तथा उसने मुनि दीक्षा लेने का भाव प्रकट किया। उसने अपने मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को बुलाया और दीक्षा लेने के विचार उनके सामने रखे। वे उस समय तक पुत्रहीन थे इसलिये प्रधानमन्त्री ने उनसे पुत्रोत्पत्ति तक वैराग्य नहीं लेने के लिये निवेदन किया। क्योंकि पुत्र के अभाव में सारा राज्य ही समाप्त हो जावेगा। कुछ समय के पश्चात् रानी गर्भवती हो गयी। रानी ने पुत्र जन्म दिया तथा उसका नाम सुकोसल रखा गया। बालक को छिपाकर रखा गया जिससे राजा को पता नहीं चल सके। एक बार सरोवर पर बालक के वस्त्र धोने गयी थी तभी बात ही बात में एक ब्राह्मण से दासी ने कह दिया कि रानी सुकोसल को पाल रही है। ब्राह्मण के मन में बात कब रुकने वाली थी। उसने तत्काल राजा से पुत्र होने की बात जाकर कह दी।

सारे नगर में पुत्रोत्सव मनाया गया। गुड़ी उछाली गयी। राजा ने ब्राह्मणों को खूब दान दिया। याचकों को वस्त्राभूषण से तृप्त कर दिये। रानी सहिदेवी राजमहल में गयी। राजा ने बालक को गोद में लिया। उसे खिलाया, पालना झुलाया तथा प्रजा की पालना करना ऐसा कहा और उसका राजतिलक करके राजभवन से चल दिया। राजा के इस आचरण से नगर में हाहाकार मच गया।

रानी सहदेवी के दुःख का ठिकाना ही नहीं रहा। वह विलाप करने लगी कि किस प्रकार राजा के बिना उसका जीवन कैसे व्यतीत होगा। वह पति होते हुये भी अनाथ हो गयी।

जैसे तैसे करके रानी ने अपना मन लगाया। पुत्र का पालन होने लगा। आठ वर्ष का होने पर उसने सभी कलाओं को सीख लिया। कुछ दुष्ट राजाओं ने जब उसके राज्य में लूटमार प्रारम्भ की तो सुकौशल बालक होने पर भी लड़ने को तैयार हो गया। माता ने उसे बहुत मना किया। लेकिन सुकौशल ने एक नहीं मानी। उसने सभी मित्र राजाओं को पत्र लिखा। और सेना एकत्रित करके युद्ध के लिये प्रस्थान कर दिया। चतुरंगिनी सेना तैयार हो गयी घुड़सवार, रथ सवार, आदि योद्धा तैयार होकर चलने लगे। ढोल ढमाके बजने लगे। संख फूंक दिया गया। एक रथ में स्वयं राजा बैठे। उसके साथ ही अन्य वाद्य यन्त्रों के साथ शहनाई बजने लगी।

राजा सुकौसल अपनी सेना के साथ सर्व प्रथम मथुरा नगरी पहुँचा। वहाँ हाहाकार मच गया। यमुनापुरी को नष्ट कर दिया गया। उसके पश्चात् अयोध्या नगरी आये। वहाँ से गंगा किनारे पर आकर पड़ाव डाला। गोपाचल के राजा से दंड लेकर छोड़ दिया गया। इसी तरह उज्जैन नगरी के मामले में भी दण्ड स्वरूप उसे अपने में मिला लिया। चारों ओर सुकौशल की जय जयकार होने लगी। कोई अपनी कन्या देकर, कोई हाथ पैर जोड़कर अपनी जान बचाने लगे। इसके पश्चात् गुजरात, सौराष्ट्र, कर्णाटक, लाडदेश, महाराष्ट्र, काशी देशों पर विजय प्राप्त की। विधाधरों के साथ उसने लंका पर विजय प्राप्त की।

सुकौसल का मेदपाट (मेवाड़ मुलतान, हस्तिनापुर, पोदनपुर, पाटलीपुत्र, आदि नगरों में जोरदार स्वागत हुआ। अष्टा पद (कैलाश) के चैत्यालयों की उसने वन्दना की इसके अतिरिक्त अंगदेश, बंगाल, मगध, पंचाल, राजगृही नगरी के राजाओं से दण्ड लेकर उन्हें छोड़ा गया। इस प्रकार चारों दिशाओं में अपूर्व विजय प्राप्त करके पद्मनी रानी से विवाह करके, हाथी, घोड़े, रत्नभण्डार एवं विशाल सेना के साथ सुकौसल ने नगर में प्रवेश किया। राजा के स्वागत के लिये स्थान-स्थान पर तोरण द्वार लगाये गये, मंगल गीत गाये गये। सहदेवी माता ने दौड़ करके पुत्र को गले लगाया।

राजा सुकौसल आनन्दपूर्वक राज्य करने लगे। तथा उसकी रानियां राजा को अपने विभिन्न हाव भाव शृंगार आदि से प्रसन्न रखने लगीं। एक-एक बरस व्यतीत होने लगा। सोलहवें वर्ष के आते ही माता ने अपने रक्षकों से

कहा कि यदि कोई साधु नगर में आता हुआ दिखलाई पड़े तो उसे नगर में प्रवेश नहीं मिलना चाहिए।

कुछ समय पश्चात् कीर्तिधवल मुनि उधर आये। नगर के बाहर ठहर गये। मुनि के शरीर पर घाव का चिह्न देखकर सहदेवी ने उसे पहिचान लिया। वह रोने लगी। सुकौसल राजा ने इस बात को सुन लिया। अपने पिता मुनि को आहार न मिलने की बात से उसे और भी दुःख हुआ। और वह भी दुखित मन से वहीं चला गया जहाँ मुनि बैठे हुए थे। सुकौसल ने वन्दना की तथा मुनि से उपदेश सुना। और स्वयं ने वैराग्य लेने की घोषणा कर दी। अपने प्रिय पुत्र के वैराग्य लेने के समाचार से उसकी माता को अत्यधिक पीड़ा एवं संताप हुआ और परिणामों की संक्लेशता के कारण वह मर कर व्याघ्रि योनि में उत्पन्न हुई।

सुकौसल मुनि तपस्या करने लगे। ग्रीष्म ऋतु में पहाड़ की शिला पर, वर्षा-ऋतु में गिरिकन्दरा में, शीत ऋतु में बर्फ पर उन्हें आत्मध्यान करने में बड़ी प्रसन्नता होती। बारह भावनाओं का वे निरन्तर मनन करते, आर्तध्यान एवं रौद्रध्यान का उन्होंने सर्वथा परित्याग कर दिया, अठारह दोषों से वे रहित होने लगे। चारों कषायों को छोड़ दिया, आठ प्रकार के मदों का त्याग कर दिया, बाईस प्रकार की परिषहों एवं पन्द्रह प्रकार के प्रमादों से वे मुक्त हो गये। इस प्रकार की अवस्था को प्राप्त होने पर जब वे एक दिन तपस्या में लीन थे वह व्याघ्री घूमती हुई उधर आ निकली वह भूखी थी इसलिये उसने तपस्या में लीन मुनि के एक-एक अंग को खा लिया। लेकिन मुनि का ध्यान भी सर्वोच्च था। वे जरा भी विचलित नहीं हुए और तेरहवें गुणस्थान में पहुँच गये। उन्हें कैवल्य हो गया और तत्काल मुक्ति पद को प्राप्त किया तथा जन्म मरण, सुख दुःख से सदा के लिये मुक्त हो गये।

व्याघ्रिनी ने शरीर को खाने के पश्चात् जब उसने अंगों के निशान देखे पांव के नीचे का कमल चिह्न देखा तो उसको पूर्व भव का भान हो आया। वह स्नेह विह्वल होकर रोने लगी। एक मुनि के उपदेश से उसने जीव हिंसा न करने का निश्चय ले लिया और अनशन करके देह त्याग दिया और स्वर्ग प्राप्त किया।

———

सुकोसल राय चुपई

जिन मुख्य वाणी २ मनि धरेस ।
पाय लागी पूंजा रच्युं सदा सिद्धि समत्ति मागुं ।
अनुकंपा करु अह्म तणी देवाध्यदेव तह्म चलणि लागुं ।
कर जोडी सांगु कहि सद्गुरु सेव करयोस ।
कुंयर सकोसल चुपही हुं संक्येप भण्योस ।। १ ।।

दूहा

मात [illegible] मनसुं [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।
सांगु कहि मनमा हरि जिम सरिस सवि काम ।। १ ।।
भूत भाव्य सयनि वर्त्तमान सिद्ध साधु जेह नाम ।
अरिहंत अर्था आरीया तेहनि करूं प्रणाम ।। २ ।।

चुपई

अवनी दीप असंख्या जाण, ते मध्य जंबूदीप प्रमाण ।
भरत क्षेत्र जे नामि सुणु, तेह तणु महिमा अति घणु ।। ३ ।।
तेह मध्य नयर अयोध्या एक, दान पुण्यनु लहि ववेक ।
धनवंत लोक दीसि अति घणा, अभय नही जिहां कोही तणा ।। ४ ।।
चउरासी चहूटां अतिसार, सेरी हाट तणु नही पार ।
जोयण बार ते फिरतुं वसि, तिणि दीठि नर हीयडु हसि ।। ५ ।।
घिरि घिरि बंध्यावरिके काण, घिरि घिरि राउत गुडि नीसाण ।
घिरि घिरि नारी करि सिणगार, घिरि घिरि बंदी जय जयकार ।।६।।
घिरि घिरि सोवण दीजि घणां, घिरि घिरि नही मोती नीमणा ।
घिरि घिरि रयण अमूलइक जेह, घिरि घिरि नही लक्ष्मी नु छेह ।।७।।
वावि सरोवर लागु वाद, ठामि ठामि दीसि प्रसाद ।
झालिर ढोल कंसालां गुडि, नित परमेसर पूजा चडि ।। ८ ।।
कविता कहि मुखि जिह्वा एक, नयर तणु किम कहुं विवेक ।
ए ऊपम किम जाइ कही, जोतां जमलपुरी कां नही ।। ९ ।।

दूहा

अजोध्या नयरी अति भली, उत्तम कहीइ ठाम ।
राज करि परिवार सु', कीर्ति धवल तस नाम ॥ १० ॥
तस घरि राणी रूयडी, रूपवंत सुवसेष ।
सहिदेवी नामि सुणु, भक्ति भरतार विवेक ॥ ११ ॥
एक दिवस मनि चींतवि, मन माहि आण्यं ध्यान ।
विषय तणां सुष परिहरी, साधि मुगति निधान ॥ १२ ॥

चुपई

राइ प्रधान ते डाव्या सही । राज तणी सोंपामणि कही ॥
घन योवननि जोषिम घणु' । सहिजि शरीर नही आपणु' ॥ १३ ॥
म्हो दीक्षा लेस्यु' वनि जाई । पंच महाव्रत पालु' सही ॥
मुगति तणां सुख जोवा काजि । तिणि कारणि हु मेल्हु राज ॥ १४ ॥
कहि प्रधान सुणु वीनती । पुत्र बिना किम थासु यती ॥
राज भार सुतनि संभालि । पछि महाव्रत निश्चल पालि ॥ १५ ॥
परधानि राजा प्रीछव्यु । नयर मांहि उछव नव नवु' ॥
सहिदेवी प्रभ धरिउ जिसि । राय मंदिर थी टाली तिसि ॥ १६ ॥
राइ कहि राणी किहां गई । व्याध विशेषि विह्वल थई ॥
इणि भोलावि राख्यु भूप । जु सुत जन्म्यु असंभम रूप ॥ १७ ॥
सहिदेवी सुत जन्म्यु जेह । दीधु' नाम सकोशल तेह ॥
आपणि मंदिरि छानां बिहि । उग्यु सूर न ढांक्यु रहि ॥ १८ ॥
कु'यण तणां अंबर जे वली । धनि लेई महिलीनी कली ॥
ऊजडि रान सरोवर जेह । तिहां जाई वस्त्र पषालि तेह ॥ १९ ॥
ते सरपालि ब्राह्मण अछि । तिणि वटंतर पूछ्यु पछि ॥
ऊजडि रानि आवि सा भणी । तेविमासण छि मुझ घणी ॥ २० ॥
दासि कहि सुणि ब्राह्मण बात । कु'यर सकोशल पालि मात ॥
जु सुत जन्म्यु' जाणि राउ तु तप लेईनि वनमाहि जाइ ॥ २१ ॥
तिणि अवसरि ब्राह्मण वलकल्यु । लेई भेट राजानि मल्यु ॥
वीहारि सुत जन्म्यु' संसारि । घणि महोछवि दान दे वारि ॥ २२ ॥

नयर माहि गूडी उछली । रायतणी मनि पूगी रली ।।
बधा मणी ब्राह्मणनि दीध । जन्म लगि अयाच कीध ।। २३ ।।
सहिदेवी राइ मंदिर गउ । आई कुंयर उचेलि लीउ ।
खोलि लेई हूलरावि बाल । तुं करजे परजा प्रतिपाल ।। २४ ।।
तिलक करी राजा संचर्यु । हाहाकार नयर माहि थऊ ।।
राजभार लेई सुंप्यु बाल । लीधी दीख्या परजा पालि ।। २५ ।।
आस्या वेल होती ब्रह्म तणी । ते छेदी वनि चाल्यु घणी ।।
सहिदेवी दुख आणि घणु । पूरव पुण्य नही ब्रह्म तणु ।। २६ ।।

दूहा

सहिदेवी झूरि घणुं, हीयडा आणिल साल ।
रे रे कुंयर सलक्षणा, किम नीगमसु काल ।। २७ ।।
अंतेउरह संभलुं, ऊभी मेल्ही साथि ।
एकह श्रीयडा कारणि, हवि हूयां निरनाथ ।। २८ ।।
संयम लेइ संवरुया, छांड्यु सरस सिरि राज ।
मह्ल्यु मोह मही तणु, मुगति तणां फल काजि ।। २९ ।।
पवक मेई गलि वंचीउं, कुंयर विसार्यु पारि ।
आणिए कुल उजलुं, सुधा सुमारग वाटि ।। ३० ।।

चुपई

सुकोसल की शिक्षा दीक्षा

पुत्र प्रशंसा माता करि । नह्लाल कडा हरषि उचरि ।
आपणि आणंदि वेलि बाल । ते देवी वीसर्यु भूपाल ।। ३१ ।।
वरस आठनु थउ जेतलि । सर्व कला सीख्यु ते तलि ।
सोवणनी परिझलकि देह । सेवक सजन सहू नव नेह ।। ३२ ।।
राय तणी छिल धुवीवेश । दुर्जन मिली विणासि देश ।
राय आणिल को न कहि इसि । असन भणी हीउं छांडसि ।। ३३ ।।
सस्त्र तणुए न लहि मर्म । भूक्ष तणु छि दारुण कर्म ।
सेवक वात करि सवि मली । तितलि नृपकाने सांभली ।। ३४ ।।

राइ सकोशल बोलि इसु । पिसुण मसी मुझ करसि किसु ।
मछरचढ्यु बोलि तीणी वार । पिसुण सवे मनाडु हार ॥ ३५ ॥
इसु बाली राजा संचर्यु । तव सहिदेवी वांहि धर्यु ।
तुं लघुवेसी नाहुं बाल । कटक सभा किम मलसु ताल ॥ ३६ ॥
कुंयर कहिदु संभलि मात । पिसुण तणी छि थोडी वात ।
भाजि नयर देश लूटीई । पूणी पिठी किम छूटीइ ॥ ३७ ॥

दूहा

राइ प्रधान तेडाबीया, राय राणा सहू तेड ।
दुर्जन आव्या ढूकडा, हवि न कीजि जेड ॥ ३८ ॥
चीठी चाली चिहुं दिशि, कहि सकोशल वीर ।
आसा आणि अम्ह तणी, ते रहीमपीसु नीर ॥ ३९ ॥
वाजिजी बहूतेडीया, टेवाडी रण भेर ।
सबल हीउं राजा तणुं, जाणे अचल गिरि मेर ॥ ४० ॥
प्रस्थानुं परगट कर्युं, निपूठि दीधुं गाम ।
राइ सकोशल इम कहि, फेडुं दुर्जन ठाम ॥ ४१ ॥

चुपइ

सुकोसल द्वारा विभिन्न देशों पर विजय

राजा सीधम साहाणी कही । सार तुरंगम छोडु सही ।
कर श्रावया हाथा नील किसोर् गंगा जल बहू हरीया छोड ॥ ४२ ॥
पवन वेगी पीलाछिलुरी । पाणी पंथा महूंडा हूरी ।
कलया कबर कज्जल देह । हीसारव जिम गाजि मेह ॥ ४३ ॥
तुरी पलाणीय्या असवार । तेह तणु नवि लाभि पार ॥
मेगल माता ढलकि ढाल । दुर्जन तणां सला विशाल ॥ ४४ ॥
ते उपरि नेजा लह लहि । अंबरि लागी वासहू कहि ।
रथ जोध्या जेहवा गिरि माल । ते उपरि बिठा महिपाल ॥ ४५ ॥
ढोल ध्रसूके कंपि मही । मुसमिस संख बजावि सही ।
रौद्रसाद बोरि नीसाण । कंपि कायर पडि पराण ॥ ४६ ॥
बरंगा भेर भालिर भणभणि । सिंगि प्रछंदि परवत पडि ।
सरणाई बाजि वर सार । अवर वाजित्रनु न लहुं पार ॥ ४७ ॥

रथ बिसी राजा संचरयु । पायक परिगह आगलि करयु ।
हीसारव नवि सुणी इसाद । जाणे सायर मेल्ही मरयाद ।। ४८ ।।

चड्यां कटक जिम सायर पूर । बेहा रवि नवि सूझि रूर ।
विरीतणा ऊतारि [illegible] । पुढीपुर गई [illegible] ।। ४९ ।।

मथुरां नगरी पडीउ त्रास । जमणपुरी नै कीधु नास ।
सामा डांमनि संका घणी । आव्यु नयर अजोध्या धणी ।। ५० ।।

साधि भोम सकोसल वीर । कटक पड्यु गंगानि तीर ।
ते आगलि किहां नाठा टलि । दंड देई राजा नि मलि ।। ५१ ।।

राय तणि मनि पुहुती रली । कटक पहूतु जमणावली ।
गोपाचल नु राजा जेह । देई दंड नि मलीउ तेह ।। ५२ ।।

चालि कटक दोयंगम वाट । परवत माहि कीधा वाट ।
जे राजा उजेणी तणु । दंड लेई कीधु आपणु ।। ५३ ।।

दूहा

लक्ष पंचास सुभट तणु, केकी बाहि पराण ।
कोटी भट कहीइ सदा, कवण सहि तेह बाण ।। ५४ ।।

एक कन्या देइ रूयडी, एके नामि सीस ।
एक रिधि आपि घणी, एक वसता राखि देश ।। ५५ ।।

साह्या सूर समुभडि, अवर न घालि घाउ ।
रख्या करि प्रजा तणी, सही सकोसल राउ ।। ५६ ।।

पुन्यि लक्ष्मी पामीइ, पुन्यि निरमल देह ।
पुण्यइ रिधि आवि, पुण्य तणा फल एह ।। ५७ ।।

चुपई

गुजर सोरठ आणि सीम । नमीयाडा बेदर विस कीध ।
भांजि तरुयर पाडि वाट । साध्यु कुंकणनि करणाट ।। ५८ ।।

लाड देश मरहट मलबार । साध्यां कन्नड तिणि वार ।
कुंडलपुर नु कहीइ तीस । आपी सारण नामि सीस ।। ५९ ।।

राय विद्याधर मलीयां बहू । चडी विमान लंकागयू सहू ।
मेघवाहन सुत लंका राइ । मेल्ही मारुनि लागु पाइ ॥ ६० ॥
सार सिंगारी आणि भेट । समुद्र तणां साध्या सहू बेट ।
सूरा सम नहि जिवाचीउ । हेल मात्र सायर साधीउ ॥ ६१ ॥
राइ कटक नु कीधु बंध । सहूठ नाथ सवि साध्या सिंध ।
मेवपाट मुगु मुलताण । पांडा वलि साध्युं खरसाण ॥ ६२ ॥
मरुस्थली वहुली बहु वाए । गौड चौडगा जगु वषाए ।
हथणाउर सु साध्या देश । पोयणपुर कीधु परवेश ॥ ६३ ॥
विजयारधनुं करूं बखाण ॥ वाहीलमु नगरी तह जाण ।
नयर नयर पर लिजे कोडि ॥ इतलां गाम कहां कर जोडि ॥ ६४ ॥
तिरिए परवलि विद्याधर चंग । राय तणा दलि वीठु रंग ।
ते प्रसंसा करि अति घणी । धन जननी सकोसल तणी ॥ ६५ ॥
विजयारध यु पाछु वलि । नासि देश दुनी खलभली ।
अष्टापद जई नाम्यु सीस । चैत्यालय वंधा जगदीस ॥ ६६ ॥
चम्पापुर नुं मल्यु नरेस । सहिजि साध्यु डाहल देस ।
चक्रवत्तिनी परिचालि पगुं । पावापुर कीधु माहणुं ॥ ६७ ॥
अंग बंग साध्यं बंगाल । मगध चीण सरिसु पंचाल ।
राजगृही नगरी नुप मल्यु । ते दंड लेई रा पाछु मल्यु ॥ ६८ ॥

दूहा

राइ देश सव साधिया, उत्तर दिक्षण जाणि ।
पूरब पश्चिम साधिया । चिहुं दिशि वरती आणि ॥ ६९ ॥
लक्ष्मी आणी लक्ष गणी, धन कण कंचण सार ।
परणी अलीयल पदमणी, हय गय रयण भंडार ॥ ७० ॥

विजय के पश्चात् नगर में प्रवेश

नगरि पधारया आपणि, सूरयवशी राव ।
तालीयां तोरण बंधाइ, घरि घरि मंगलचार ॥ ७१ ॥
मंदिर आव्या मा तणि, अधिक सकोसल सूत ।
सहिदेवी साईए मलि, उंछलि लीधु पुत्र ॥ ७२ ॥

अथ ढाल हीडोलानी

मंदिर आव्या आवहि साहेलडी रे, घरि घरि मंगलाचार ।
सजन व लोक व घरमणु सा० । रयण अमूलिक सार ।। ७३ ।।
प्रसंसा जलणी करि सा० । धन धन साहस धीर ।
देश अविनि साधिया सा० । जीतु सकोसल वीर ।। ७४ ।।
मेघाडंबर कमडु सा० । उपरि छत्र धराइ ।
सिंहासण सोहि भलु सा० । पात्र नचावि नु राइ ।। ७५ ।।
प्रजा सहू सुख भोगवि सा० । दुखीय न दीसइ कोइ ।
देवाले पूजा चढि सा० । भगति करि सहू कोइ ।। ७६ ।।
वाड़ी निरूपी रूयडी सा० । तरुवर मुहिर गंभीर ।
तिहां नि सोहि अशोकली सा० । भरीयां खिति जल नीर ।। ७७ ।।
करि सकोसल क्रीलणु सा० । तरूणीय तणां रे घलूर ।
पूरवं पुणिइ पामीउ सा० । सहीय सकोसल सूर ।। ७८ ।।

वस्तु

वसंत आयु वसंत आयु अतिहि आणंद,
वनसपति वनि गहि गहि ससरसाद कोयल दीसि ।
रामागती राइसु नवरग यौवन तरुणि वेसि ।
सामा सवि सोहामणी अंग विभूषा नारि ।
राय सकोसल खेलवा सुंदरि कीया श्रृंगार ।।   ।। ७९ ।।

अथ ढाल

राती पगनी बाणही ए दीसि सुकूलोल ।
सुराता दंत दाड़िम कली ए राता मुखह तंबोल । तु ।। १ ।। ८० ।।
काला काचूं पहिरती ए, काली वेणी देवि तु ।
काली कस्तूरी महि महि ए, काली काजल रेख ।। २ ।। ८१ ।।
लीला चरणा पहिरती ए, दीसि नव नव रंग तु
नीला मणिनी मुंदडीए, नीला पान सुरंगसु ।। ३ ।। ८२ ।।
पीला सोवण सोहती ए, पीली चूडी बांहि तु ।
पीली भाखि झलामलीए, पीला केर त्यांह तु ।। ४ ।। ८३ ।।

ऊजल झंब्बर झबकती ये ऊजल रयण अपार तु ।
ऊजल दरपण नरखती ए, ऊजल मोतीय हार तु ॥ ५ ॥ ८४ ॥
खीणि कटियंत्र कामिनी ए झीणी सुललित वाणि तु ।
झीणीय वेण बजावती ये झीरणा वस्त्र प्रमाण ॥ ६ ॥ ८५ ॥
चंपु मरूउ मालती ए सोहि सेवंत्री फूल तु ।
चालुवेल सोहामणी ए टोडर अति बहुमूल तु ॥ ७ ॥ ८६ ॥
कैसर तरीय कंचोलडी ए मलयागर बहुकंत तु ।
छांटणडां प्रीयसु करि ए रामसु रातीय रंगि तु ॥ ८ ॥ ८७ ॥
पुष्प लेई लेई ताडती ए आपणा स्वामीय अंगितु ।
सोलकला सिसि सोहती ए जेहवु पूनिम चंद तु ॥ ९ ॥ ८८ ॥
अंतेउर महिल नीउ ए इन्द्राणी महि इन्द्र तु ।
क्रीडा करी घरि आवीया ए आविल नाचि रंभ तु ॥ १० ॥
चोया चंदन महि महि ए मृग मद महिहि सुरंभतु ॥ ११ ॥८९ ॥

दूहा

नित नित इणी परि रमि सुमव सभा महीपाल ।
सुख सागर माहि झीलतां जातु न जाणि काल ॥ १२ ॥ ९० ॥
पुन्यि कीरति ऊजली, पुन्यि जस भंडार ।
पुणिइ पिसुण पीडि नही, पुण्य प्रभवी सारहि सार ॥ १३ ॥ ९१ ॥
सहिदेवी इम उच्चरि, सांभिल तुं प्रतीहार ।
यती आए तुं आवतु, परिहरि नयर दुयार ॥ १४ ॥ ९२ ॥
धर्म कथा जु संभलि तु, मनि वसि विराग ।
सोले वरसे सकोसलु तु, करसि सवि त्याग ॥ १५ ॥ ९३ ॥

चुपई

आव्या मुनिवर आदर नही । राज भवनि रखवाला रहि ।
यती वारे वा कीधु कर्म्म । राइ न जाणि तेह नु मर्म ॥ १६ ॥ ९४ ॥
छठा मास तणि पारणि । आव्यु पोल तणि बारणि ।
सहिदेवी तब मांडी मीट । कीरत धर तब नमणे दीठ ॥ १७ ॥ ९५ ॥
सहिदेवी मनि मच्छर थउ । योवन भरि मुझ मेल्ही गउ ।
सेवकनि सीखामणि देइ । तु मुनिवर ज्या पोलि लेइ ॥ १८ ॥ ९६ ॥

चल्या मुनीस्वर वनहि गया । काउसग लेईनि वन माहि रह्या ।
देषी धाव ते वलषी थई । नयणे नीर भरि रयां रही ॥ १९ ॥ ९७ ॥
तेह रोयंती राजा सुणी । मलिउ भूप रोइ सा भणी ।
भाव कहि उधारु मालः । आहारन पाम्यु नाहारु तात ॥ २० ॥ ९८ ॥
ते राणी ते सेवक एह । भगति भली परिकतरां जेह ।
सहू सवारथ आपा पणि । स्वामि न राख्यु घरि पारणि ॥ २१ ॥ ९९ ॥
हूं राजकछ्र वन सेवि आप । एतां कमि कमि लागि पाप ।
महारलाड मनावी तेह । विण्ह नवनदि नाति करेस ॥ २२ ॥ १०० ॥
इसु सुणी सांचरीउ राय । पवलां जो तु पालु जाइ ।
रुदन करि मनि विह्वल थउ । जिहां मुनिवर तिहां राजा गउ ॥ २३ ॥ १०१ ॥
जई सकोसल नामि सीस । तह्मे कहि उपरि आणु रीस ।
काया कष्ट करूकां धणुं । राजरिषि सहूइ तह्म तणु ॥ २४ ॥ १०२ ॥
माहारि नही संसारि काज । तिणि कारणि मि छोड्यु राज ।
राज तणां छि कारण जेह । सांभलि वच्छ सकोसल तेह ॥ २५ ॥ १०३ ॥
वडे-वडे राजे नृप हूत । ते परलोके गया बहूत ।
राज रिद्धि सहूई धरि रही । ते उभी मेल्हीभ्या सही ॥ २६ ॥ १०४ ॥
पुत्र कलित्र कहिनु परिवार । कहिना लक्ष्मी कहिनी नारि ।
अभ्र पटल जिम दीसि मेह । तिसु कहीइ संसार सनेह ॥ २७ ॥ १०५ ॥

दूहा

विषय तणां सुष रूयडां, सांभलि राय सुजाण ।
सुख हुइ सरस बस, दुःख ते शेर प्रमाण ॥ २८ ॥ १०६ ॥
विषया केरी वेलडी, जेह न छेदी जाणि ।
धारि फूली फल गगेमी, त्यारि दुख देसि निरवाण ॥ २९ ॥ १०७ ॥
जे नर नारी माहीया, सुणि न सकोसल भूप ।
ते नर कहीइ बापडो, पड्या संसारह कूप ॥ ३० ॥ १०८ ॥
विषय तणां सुष परिहरी, छंडेवा भवपार ।
चलणे लागु गुरु तणे, मागि संयम भार ॥ ३१ ॥ १०९ ॥

चुपई

सुकोसल के वैराग्य के कारण चिंता

तिहां मली सहू आव्यु' जिसि । पाला पुर प्रते उर तिसि ।
राय राणी सहू मागि मान । पायलागी वीनवि प्रधान ।। ३२ ।। ११० ।।
असन थकुरा न लहि हेत, बालपणि तप करु केत ।
हवडां रहु अजोध्या मांहि, वृद्धि पाणि तप लेयो राय ।। ३३ ।। १११ ।।
राई कहिमि छोडी आ साथ, पदक आल्यु' परधानह हाथ ।
गर्भधान प्रसव जेहसि, ते राजा पृथ्वी पालसि ।। ३४ ।। ११२ ।।
मेह्ला सोवण जडित अवास, मेहली घरि घोडानी ह्लास ।
मेह्ली छि अबला सवि सती, आपणा स्वामीनि
नरमती ।। ३५ ।। ११३ ।।
मेह्ला सजन सहू परिवार, मेह्ला मोती रयण भंडार ।
कर्मतणां बहु बंधन टलु', तिणि संयम लीधु उजलु' ।। ३६ ।। ११४ ।।
जे होता राणा राजीया, श्राव आगणे वरि सहू गया ।
केतला रह्या तप लेइ अबला सहू मलावी देइ ।। ३७ ।। ११५ ।।
एक भुरि एक करि विलाप, एक कहि हम लागु' पाप ।
हा हा करीनि कूटि हीउ, आज मलेउर सुनु' थउ' ।। ३८ ।। ११६ ।।
एक अबला लाखि सिणगार, एके तोडी नव सर हार ।
चीर चोर एक भाति वली, एके घरणि पडी
टलि वलि ।। ३९ ।। ११७ ।।
प्रजा सहू बुंबा रव करि, वली वली राजा संभरि ।
भूष तिरस सवि निद्रा गई, मूनु' नयर ते दीसि सही ।। ४० ।। ११८ ।।
गुख चडी सहिदेवी जोइ, पुत्र मनावी लावि कोइ ।
नयर तणा जब आव्या लोक, माता मनि धराउ
सोक ।। ४१ ।। ११९ ।।

माता की दशा

पुत्र तणी जब तूटी आस, पडी प्रथ्वी गति न लहि सांस ।
पडी विचार अचेतन हुइ, नाषि वाय तब बिठी थई ।। ४२ ।। १२० ।।
मछर चडी मनि आणि रीस, लेई पाथरनि कूटि सीस ।
धरणी लोटि पाडि रीव, हीउं फाटी सनि आइ जीव ।। ४३ ।। १२१ ।।

दूहा

सूनां ते मन्दिर मालीयां, सूनु दीसि पाट ।
ए दुख किहि आगलि, कहुं सुत सति उठी वाट ।। ४४ ।। १२२ ।।
योवन भरि स्त्री परिहरी, मनि पुत्रि आप्यु छेह ।
रे रे पामर प्राणीया, अजीय न छोडि देह ।। ४५ ।। १२३ ।।
बुंदा रव बहुली कहि, ओढि ते वेणी दंड ।
मुख चडी झंपावीउं, सरीर करयु सत खंड ।। ४६ ।। १२४ ।।
आरति पामी अति घणी, आतम घात पसाउ ।
मोह करयु मनि पुत्रनु, वाघणि थई वन माहि ।। ४७ ।। १२५ ।।

वस्तु

सूर सकोसल रमनि धरि भाव भगति विवेक ।
भली करि सेवि सगुरुरु पाय मन माहि जाणी ।
धर्म दया गुण आगमु तण गुप्ति मन माहि आणी ।
च्यार कषाय मनि मेल्ह सुं इंद्री दमन करयोस ।
गर्भावास दुख दोहिलो तु मुगति तणां
फल ल्योस ।। ४८ ।। १२६ ।।

चुपई

सुकोसल की तपस्या

वर सालि वृक्ष हेठलि रहि, मेह तणी धारा सहि ।
तरुयर पान पड़ि नीतरि, तिमतिम कर्म सवे निरजरि ।। ४९ ।। १२७ ।।
भाद्रवडा गिरि किंदर रहि, डांस मछर ना चटका सहि ।
झड मांझी वरसि विकराल, वाघ सिंघ डह डहि
ढ्हाल ।। ५० ।। १२८ ।।

कासग धरी महाव्रत पाल, वेला चडि वलि मेवा काल
तरुयर जाणी अहि रूवडि, पग तले डाभसी जडि ।। ५१ ।। १२९ ।।
तप साध्यु नयलनि तीर, त्रिरव त्रिहुणा दीसि धीर ।
सीयालि थिर हीमजठरि, तिमतिम तप घणा आचरि ।। ५२ ।। १३० ।।
महा मास घणु जामिहीम, नीभण रहि न लोपि नीम ।
पडिटाव तिहि अचल्लज पलि, मेर तणी परिचिंतन
चलि ।। ५३ ।। १३१ ।।

सुकोसल राय चुपई

उन्हालि भल वाजि वाय, तडका ताप सहि मुनिराउ ।
डुंगर बलि दय दाभि जेह, तरूयर छांह न सेवि तेह ।। ५४ ।। १३२ ।।
ताती वेलू तपनी सिला, ते उपरि तप साधि भला ।
माथा उपरि सूरज तपि, तिमर कर्म घणेरां षपि ।। ५५ ।। १३३ ।।
कासग लेई उभा निरधार, जाणे थंभ रोप्या तिणी चार ।
देमि देह जिसां पांजरां, आठ कर्म कीधां जाजरां ।। ५६ ।। १३४ ।।
द्वादश अनुप्रेक्षा अणसरि, बार भेद तप सूधु करि ।
आरत रौद्र तज्यु तिणी वार, आतम हुस लीउ
आधार ।। ५७ ।। १३५ ।।

पांचि इन्द्री ते परिहरि, सेष तावीस विषि निरजरि ।
दोष अढारह अलगा जेह, पंच महाव्रत पालि तेह ।। ५८ ।। १३६ ।।
सहस अढारि पालि सील, सुगति तणां फल लेवा लील ।
च्यार कषायनां छेद्यां मूल, तप करतां तृष्णा गई तूल ।। ५९ ।। १३७ ।।
[illegible] मदनु भांजि मोह, जिणि निरदलीउ काम कठोर ।
बावीसह परीसा सवि सहि- पनर प्रमाद न उभा रहि ।। ६० ।। १३८ ।।

वस्तु

व्याघ्री द्वारा सुकोसल का भक्षण

कर्म टालि कर्म टालि अतिहि सुजाण ।
अटवी माहि एकलु मन माहि आतम ध्यान आणि ।
परमानंद सेवि सदा जाणि धर्म विचार ।
मुनिवर अतिसूयडा हवि जेसु भवपार ।। ६१ ।। १३९ ।।

दूहा

जे जननी मुनिवर तणी, सहिदेवी गी साल ।
ते भूषी वन माहि भमि, वाघिण थइ विकराल ।। ६२ ।। १४० ।।
भूष तिरस बहु सेवती, सोधंती वन माहि ।
दीठा मुनिवर रूयडा, मछर धरयु मन माहि ।। ६३ ।। १४१ ।।

राग विराडी

सहि गुर बोलि रे मन रषे डोलि रे
लीहिए आवि सूर सलक्षणा ए

तुझ तणी सामनी मुझ तणी कामनी आतम घातिए
बाघिण हुई ए ।। चढ़ाय ।।
आतम घाति बाघिण थई रे आपण सरसी चालि ।
मछर चडीमलपंती आदि पूरव दुःखमनि सालि ।
एह तणा परिसि सहिस पराणा ताहारि कुण कहुं तौलि ।
सीहिण आवि सूर सकोसल मुनिवर दृणी परि
बोलि रे ।। १ ।। १४२ ।।
बल तुनि इम भणि कांई मधुरी वाणी गुरु सुणि ।
आपुण काया हुं कीजिइए च्यारं गति माहि अवतरयु ।
चुरासी लष रडवडयु छेहलानि भवनुए जो खोलीउ रे ।। च. ।।
छेहला भवनुं एह बोलीउ हवि आतम सत साधु ।
सद्गुरु केरी सेव करी निरूपाहीन आराधुं ।
सुध चिद्रूप जोया गति जाणुं हरष घणु मनि भ्रम तणि ।
कासग करीनि असासण लीधुं तु गुरु परति इम भणि ।। २ ।। १४३ ।।
साह्यानि द्रिष्टि रे सीहिण चाहिरे दीठा नि मुनिवर
बिहि रूडआए ।
बाघिणी घरहरि तिणि अंबर थरहरि पीडा न जाणिए
तो परतणीए ।। च. ।।
एह पापणी पीडन जाणि महला एह नां कारणी ।
पुंछड लालीउंची उडि धग थर धूजि धरणी ।
इहि रती डाढा गरि लीधु मछर घणु मन माहि ।
ध्यान धरी गुरु आगलि ऊभा साहमी दृष्टि चाहि ।। ३ ।। १४४ ।।
कांई बल भरीबुं किरे नयरतणा धामुं किरे ।
ध्यान न चूकि मुनिवरनि न तणुं तु ।
मछर चडी मोडिरे धसी रथं धंधोलि रे पगतणी पडथाए
जो पीडा करिए ।। च. ।।
पुग तणी पडिधाह करीनि मुनिवरनुं सिर चूरि ।
विकराली तिहां बलगिबिरणि बिसमेनहुर बलूरि ।

ए परीसह सहिवा कुरा समरथ झडपि तरुवर मूकि।
सींह नादंत करी सिर खंडि वाघिण बल भरी बुकि रे ॥ ४ ॥ १४५ ॥

वस्तु

डसणि चंडि डसणि चंडि अति अणि
रोस तस्वरि व डारि देह दहि उपघात करि अति बल प्रमाणि।
अंग छेदन शरीर भेदन भछर चडी तनु तागिण।
रुहिर पीइ रणि रातडी सोखि सर्व सरीर।
परीसह सहि वाघिण लणु ध्यान न चूकि वीर ॥ ५ ॥ १४६ ॥

दूहा

चुथि पाइ पड वहिनि, साधि सुकल सध्यान।
गुणस्थानिक गयु तेरमि, उपनु केवल न्यान ॥ १ ॥ १४७ ॥
स चराचर व्यापी रह्यु, न्यान करी नहु जेह।
आपि आप जऊ लख्यु, भागु सर्व सवेह ॥ २ ॥ १४८ ॥
केवल न्यानि नरखतां, व्यापि लोक अलोक।
हाथ तणीं परि लीहडी, तिम देखि त्रिलोक ॥ ३ ॥ १४९ ॥
बंधन काटयां करमनां, जन्म जरानां जान।
पुण दुःख छुटु संसारनां, पामु मुगति निधान ॥ ४ ॥ १५० ॥

चुपई

जिहां आकार न दीसि सोई। कर्म तणा नवि बंधण होइ।
जामण मरण तणां दुख नहीं, ते ठाम सकोसल
पाम्यु सही ॥ ५ ॥ १५१ ॥
भूख तिरस नही निद्रा नाम, वर्ण न गंध सदा सुख ठाम।
रूप न राग निरंजन जेह, पाम्यु ठाम सकोसल तेह ॥ ६ ॥ १५२ ॥
मुनिवर सरीर पड्यु तिहां सही, वाघिण भख्य करि
तिहां रही।
तेह कलेवर करि आहार, अंगि चिह्न दीठां तिणि बार ॥ ७ ॥ १५३ ॥
पग तलि दीठु पंकज सार, करतलि दीठउ छत्र प्रकार।
नयण सुरंगा ते नरखती, राती रेख दशनि झलकती ॥ ८ ॥ १५४ ॥

मंगि चिह्न दीठु ते तरिण, चित चमकी मनि आपणी ।
खोलि लेई देती पय पान, तिणि अवसरि
ते आवी सानि ॥ ६ ॥ १५२ ॥

ढाल कराजारामो

मुनि द्वारा व्याघ्रिणी को उपदेश

सहि गुरु बोल्या ते बार एवडु अखत्र कांइ आदर्यु
चेतहूईडलारेत कसमल भरयु रे मंडार ।
॥ १५६ ॥
आज सकोसल बघ करयु रे । चेतह ।
पूरव प्रीति संभारए ताहरी कूखि जो अवतर्यु ।
॥ १५७ ॥
अवतर्यु कूखि, रुहिर सींखि पिंड पोखितु तणु ।
संसारि सगपण कांई न जाणि दुख ए परिभव तणु ।
॥ १५८ ॥
रीस गाढी प्राण काढी वधु धर्यु वाघिण तणु ।
सिहि गुरु बोल्या तिवारि ए बडु अखत्र कांइ आदरयु ॥
वाघिण करि रे विलाप पूरव भव मनि चीतवि ॥ चे. ॥ १५६ ॥
मोह धरयु मन माहि ढोर तणी परि ढाईहि ॥ चे. ॥
ढाढहि ढोरज तणी पिरि दुख संभारि अति घणुं ।
॥ १६० ॥
सीस कूटि जीभ त्रुटि उदर फाडि आपणुं ।
परजल्यु पंजर रोस पूरीहोइ दुख सालि सवि ।
वाघहि करि रे विलाप पूरव भव मनि
चीतवि ॥ चेत. ॥ २ ॥ १६१ ॥

सहि गुरुदेइ प्रतिबोध आप हत्या जीव मां करे ॥
कीधां छि करम कठोर, वलीरे नवां कांइ आदरि ॥ १६२ ॥
लागी छि सहि गुरु पाय, मुनिवर वाणी मनि धरि ॥

व्याघ्रिणी द्वारा पश्चाताप एवं अनशन लेना

सांभलीय मुनिवर तणीय वाणी रौद्र आरत परिहरि ।
क्रोध टाली क्षांति आणी भाव हीयडा सुं धरी । ॥ १६३ ॥
अणसण लीधुं काज सीधुं देवलोक ज अवतरी ।
सहि गुरुदेइ प्रतिबोध आप हत्या जीव मां करे ॥ ३ ॥ १६४ ॥
काणग लेई निरधार मुनिवर वन माहि तप करि ॥
अचल थयु जाणे मेर देहडी दमि नित आपणी ॥ १६५ ॥

ध्यान धरि महावीर तारन तेहनि कोइ नहीं ।। चे. ।।

वीरज तेहनि कोस घाति सहल पाडुं मयाडि । ।। १६६ ।।

सुकल ध्यान परवेशे कीधुं गुणस्थानिक चढ़ु तेरमि ।

उपनुं केवल महा निरमल मुगति नारी ते वरि ।

कासग लेई निरधार मुनिवर वन माहि
तप करि ।। चे. ।। ४ ।। १६७ ।।

दूहा

मुनिवर बिहि मुगति गया, सहिदेवी स्वर्ग सार ।

वासु कहि इम उच्चरु, जिम पामु भवपार ।। १६८ ।।

।। इति श्री सकोसल राय चुपई समाप्तः ।।

ब्रह्म गुणकीर्त्ति

ब्रह्म जिनदास के सात शिष्य थे। जिनके नाम हैं ब्रह्म मनोहर, ब्रह्म मल्लिदास, ब्रह्म गुणदास, ब्रह्म नेमिदास, ब्रह्म धर्मदास, ब्रह्म शान्तिदास एवं ब्रह्म गुणकीर्त्ति। ये सातों ही शिष्य साहित्य सेवी थे तथा ब्रह्म जिनदास को साहित्य निर्माण में सहयोग दिया करते थे। ब्रह्म जिनदास ने अपनी विभिन्न कृतियों में अपने शिष्यों के नामों का उल्लेख किया है। लेकिन उन्होंने अपनी कृतियों में जिस प्रकार दूसरे शिष्यों के नामों का उल्लेख किया है उस प्रकार ब्रह्म गुणकीर्त्ति का उल्लेख नहीं मिलता है। इससे पता चलता है कि ब्रह्म गुणकीर्त्ति उनके कनिष्ठतम शिष्य थे और उनके सम्पर्क में भी बहुत बाद में आये थे। यदि ऐसा नहीं होता तो ब्रह्म जिनदास उनका उल्लेख किये बिना नहीं रहते।

गुणकीर्त्ति नाम के एक भट्टारक भी हो गये हैं जिनका पट्टाभिषेक संवत् १६३२ में डूंगरपुर में बड़े उत्साह से हुआ था।[1] लेकिन हमारे नायक गुणकीर्त्ति तो ब्रह्मचारी थे। उनके गार्हस्थ्य एवं साधु जीवन के सम्बन्ध में नामोल्लेख के अतिरिक्त अधिक कुछ नहीं मिलता। कवि ने अपनी एक मात्र कृति में चित्तौड़गढ़ के नाम का दो बार उल्लेख किया है इससे यह तो अनुमान लगाया जा सकता है कि कवि का सम्बन्ध चित्तौड़गढ़ से रहा होगा लेकिन उनका शेष जीवन किस प्रकार व्यतीत हुआ इसकी अभी खोज होना शेष है।

ब्रह्म गुणकीर्त्ति की एक मात्र कृति "रामसीतारास" अभी तक हमारे देखने में आयी है। इसके अतिरिक्त कवि की और कितनी कृतियां हैं इसके सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता। लेकिन रामसीतारास को देखते हुए इनकी और भी कृतियां कहीं मिलनी चाहिये। ब्रह्म जिनदास ने संवत् १५०८ में विशालकाय रामरास की रचना की थी। अपने गुरु की विशाल कृति होने पर भी गुणकीर्त्ति के द्वारा एक लघु रास काव्य के रूप में राम के जीवन पर कृति लिखने का अर्थ यही हो सकता है कि पाठकों को संक्षिप्त रूप में राम कथा को जानने की इच्छा रही होगी।

---

1. राजस्थान के जैन सन्त—व्यक्तित्व एवं कृतित्व—पृष्ठ १४०

प्रस्तुत रामसीतारास की पाण्डुलिपि उसी गुटके में संग्रहीत है जिसमें भट्टारक सोमकीर्त्ति, ब्र० यशोधर एवं अन्य कवियों के पाठ हैं। मुझे तो ऐसा लगता जैसे इस गुटके के पाठों का संकलन मैंने ही अपने उपयोग के लिये कभी किये थे। प्रस्तुत पञ्चम भाग के अधिकांश पाठ इसी गुटके में से लिये गये हैं।

रामसीतारास एक खण्ड काव्य है जिसमें राम और सीता के जन्म से लेकर लंका विजय के पश्चात् अयोध्या प्रवेश एवं राज्याभिषेक तक की घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन किया गया है। इसमें १२ ढालें हैं जो ११ अध्यायों का काम करती है। जैन कवियों ने प्राचीन काल में इसी परम्परा को निभाया था। महाकवि ब्र० जिनदास ने भी अपने रास काव्यों को ढालों में ही विभक्त किया है। यह गीतात्मक काव्य है जिसको ढालों को गा करके पाठकों को सुनाया जाता था।

समय—रामसीतारास का रचना काल तो मिलता नहीं जिससे स्पष्ट रूप से किसी तथ्य पर पहुंचा जा सके लेकिन ब्र० जिनदास का शिष्य होने के कारण तथा गुटके के अन्य पाठों के समय निर्णय के देखते हुये प्रस्तुत रास को संवत् १५४० के आस पास की रचना होनी चाहिये। ब्र० जिनदास का संवत् १५२० तक का समय माना गया है। प्रस्तुत कृति उनकी मृत्यु के पश्चात् निबद्ध होने के कारण उक्त रचना काल मानना उचित रहेगा। इसी तरह हम इस कृति के आधार पर ब्र० गुणकीर्त्ति का समय भी संवत् १४९० से १५५० तक का निर्धारित कर सकते हैं।

भाषा—रास की भाषा राजस्थानी है यद्यपि गुजरात के किसी प्रदेश में इसकी रचना होने के कारण इस पर गुजराती शैली का प्रभाव भी स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है लेकिन क्रिया पदों एवं अन्य शब्दों को देखने से यह तो निश्चित ही है कि कवि को राजस्थानी भाषा से अधिक लगाव था। विचारीउ (विचारकर) मांडीउ (मांडे) आवीयाए (आये) यानकी (जानकी) घणी (बहुत) पाणी (हाथ) आपणा (अपना) घालीइ (डालना) जाणुए, बोलए, लीजिए जैसे क्रिया पदों एवं अन्य शब्दों का प्रयोग हुआ है।

सामाजिक स्थिति—रामसीतारास छोटी-सी राम कथा है। कथा कहने के अतिरिक्त कवि को अन्य बातों को जोड़ने की अधिक आवश्यकता भी नहीं थी उनके बिना वर्णन के भी जीवन कथा को कहा जा सकता था लेकिन कवि ने जहां भी ऐसा कोई प्रसंग आया उसके वर्णन में कवि ने सामाजिकता को अवश्य स्पर्श किया है। प्रस्तुत रास में रामसीता के विवाह के वर्णन में सामाजिक रीति-रिवाजों का वर्णन मिलता है। राम के विवाह के अवसर पर तोरण द्वार बांधे गये थे।

मोतियों की बांदरवाल लटकायी गयी। सोने के कलश रखे गये। गंधर्व एवं किन्नर जाति के देवों ने गीत गाये। सुन्दर स्त्रियों ने लकाछन किया। तोरण द्वार पर आंगन पर खूब नाच गान किये गये। सास ने द्वाराप्रेक्षण किया। जब चंवरी के मध्य आये तो सौभाग्यवती स्त्रियों ने बधावा गाया। लग्न वेला में पंडितों ने मंत्र पढ़े। हथलेवा किया गया। खूब दान दिया गया।

उस समय वृद्धावस्था आते ही अथवा अपनी सन्तान का विवाह होने के पश्चात् संयम लेने की प्रथा थी। संयम लेने के लिये सभी प्रकार के सांसारिक ऋणों से मुक्ति ली जाती थी। कर्ज चुकाया जाता था। दशरथ को भी अपने दिये हुये वचनों को निभाने के लिये केगामती की दोनों बातों को मानना पड़ा।

नगरों का उल्लेख—राम लक्ष्मण एवं सीता जिस मार्ग से दक्षिण में पहुंचे थे उसी प्रसंग में कवि ने कुछ नगरों का नामोल्लेख किया है। ऐसे नगरों में चित्तउगढ (चित्तौड़) नालछिपाटण, अरुणग्राम, बंशथल के नाम उल्लेखनीय है।

वर्णन की दृष्टि से अध्ययन—कवि ने रामकथा की लोकप्रियता, जनसामान्य में उसके प्रति सहज अनुराग, एवं अपनी काव्य प्रतिभा को प्रस्तुत करने के लिये रामसीतारास की रचना की थी। महाकवि तुलसी के सैकड़ों वर्ष पूर्व जैन कवियों ने रामकथा पर जिस प्रकार प्रबन्ध काव्य एवं खण्ड काव्य लिखे यह सब उनकी विशेषता है। जैन समाज में रामकथा की जितनी लोकप्रियता रही उसमें महाकवि स्वयम्भु, पुष्पदन्त एवं रविषेणाचार्य का प्रमुख योगदान रहा है। तुलसी ने जब रामायण लिखी थी उसके पहिले ही जैन कवियों ने छोटे-बड़े बीसों राम काव्य अथवा रास लिख दिये थे। ब्र० गुणकीर्ति का रामकाव्य भी इसी श्रेणी का है जिसका संक्षिप्त अध्ययन निम्न प्रकार है—

काव्य का प्रारम्भ—कवि ने सर्व प्रथम जिन स्तुति की है जो ऋषभदेव से लेकर मुनिसुव्रतनाथ तीर्थंकर स्तवन के साथ समाप्त होती है। दशरथ साकेता नगरी के राजा थे अपराजिता उनकी महारानी थी। इसके अतिरिक्त सुमित्रा, सुप्रभती एवं केगामती ये तीन और रानियां थी चारों रानियों के एक-एक पुत्र हुये जो राम, लक्ष्मण, शत्रुघ्न एवं भरत कहलाये। जनक मथुरा के राजा थे। विदेहा उसकी रानी थी। सीता उसकी पुत्री थी जिसको वैदेही भी कहा जाता था। सीता बहुत सुन्दर थी। कवि ने उनकी सुन्दरता का निम्न प्रकार वर्णन किया है—

ते गुणह ग्राम मन्दिर काम रूपधाम रसातली।
चन्द्रवदना मृगह नयना सघन घन तन पातली।

ते हाव भाव विलास विभ्रम सलय लावण्य व्यापिका ।
गौरवर्ण सुवर्ण छाया सुगंध परिमल कूपिका ॥७॥

सीता का स्वयंवर रचा गया । अनेक राजा महाराजाओं ने इसमें भाग लिया । धनुष चढाने की शर्त थी लेकिन धनुष चढाने में जब अन्य राजाओं को सफलता नहीं मिली तो दशरथ ने अपने पुत्र राम को धनुष चढाने के लिये कहा । राम ने पिता की आज्ञा को शिरोधार्य करके आनन्दित मन से धनुष चढा दिया ।

आपणा पिता तणी वाणी सुणति स्वामी अणंदीया ।
सिंह जिम सिंहासण मेल्हीय सकल सुर नर वंदीया ॥
वंदीय इन्द्र ते कनकधारे रत्न वरिषा करि घणी ।
जय जयारव साधु कलिरव ऊंभा नव तिहुयण धणी ॥१०॥

× × ×

निरमलह वेदीय उपरि चडि करि वाम हस्ति धनुलीउ ।
दक्षिण हस्ति गुण धरिवि रामिवि ज्ञावस चढावीयो ।
टणकार नादि दह दिसि, गंगन मंडल टलटल्या ।
पाताल शेषनि असुर सुर नर, दैत्य दाणव सलवल्या ॥१७॥

राम द्वारा धनुष चढाते ही सागर हिलोरे लेने लगा, सुमेरु पर्वत कांपने लगा, कितने ही तालाब फूट गये, देवता जय-जयकार करने लगे, सुगन्धित वायु बहने लगी एवं भ्रमर झंकार करने लगे ।

जयो जयो श्रीराम देवह कंठि वरमाला वालीयि ।

स्वयम्वर में वरमाला द्वारा पति स्वीकार करने के पश्चात् राम और सीता का विवाह हुआ । लग्न मंडप तैयार किया गया । तोरण द्वार बांधा गया । मोतियों की बांदरवाल लटकायी गयी । स्वर्ण कलश रखे गये । स्वयं राम भी विभिन्न अलंकारों से सज्जित किये गये । गंधर्व एवं किन्नर गा रहे थे । उनके सिर पर छत्र सुशोभित थे । चंवर ढोले जा रहे थे तथा सौभाग्यवती स्त्रियां मंगल गीत गा रही थीं तथा लवाछना ले रही थी ।

राम जब तोरण द्वार पर आये तो सब आनन्दित हो गये । उनकी सास के द्वारा प्रेक्षण किया और जब लगन मंडप में आये तो सौभाग्यवती स्त्रियों ने बधावा

गाया। पंडितों ने लगन पढ़ा तथा शुभ बेला में विवाह सम्पन्न हुआ। हथलेवा हुआ। चारों ओर जय जयकार के मध्य राम और सीता का विवाह सम्पन्न हुआ।

विदेहा अक्षाणु लीधु, सासू वर पुंखणु कीधु।
वर चवरी माहि आव्या साहासणीयि बधाव्या।
पंडित बोलए मंत्र, लगन तणा आव्या मंत्र।
शुभ बेला तिहां जोइ, वरति मगल सोई ॥६॥

शुभ योग सघलुउ भागु, सुलगनि हथेलु लागु।
सब हुउ जय जयकार, परणीय जानकी नार ॥७॥

राम के विवाह के पश्चात् लक्ष्मण, भरत एवं शत्रुघ्न इन तीनों भाइयों का भी सुन्दर कन्याओं से विवाह हो गया। वे सब मथुरा से अयोध्या लौट आये और राज्य सुख भोगने लगे। कुछ समय पश्चात् दशरथ ने वैराग्य लेने का विचार किया। उन्होंने अपने इस विचार को सभी को बता दिया। मन्त्री परिषद् की मीटिंग बुलाकर राम को राज्य तिलक देने की घोषणा कर दी। दशरथ की इस घोषणा से चारों ओर प्रसन्नता छा गयी। लेकिन भरत की माता केगामती को राम का राजा बनना अच्छा नहीं लगा। उसे चिन्ता हुई कि राम के राजा बनते ही भरत को उनकी आज्ञा माननी पड़ेगी। पहिले तो उसने भी दीक्षा लेने की सोची लेकिन बाद में भरत के प्रति मोह के कारण उसने अपना विचार बदल दिया। और राज्य सभा में जाकर दीक्षा लेने के पहिले दिये हुए दो वचनों की पूर्ति करने के लिये दशरथ से कहा।

घणुयत मागु देव भरत नरेसर थापयो।
दिउ मुझ पुत्रनि राज, तो स्वामी संयम लीयो ॥१२॥

जब दशरथ ने केगामती के प्रस्ताव सुने तो तत्काल भरत को राज्य देने का निश्चय किया गया। वैराग्य लेने के पूर्व सांसारिक ऋणों से मुक्ति पाना आवश्यक माना जाता है क्योंकि जिसके कर्ज होता है उसे दीक्षा नहीं दी जाती।

वाचारण पिता तणुं पुत्र उतारि इस जाणीइ।
केगामती का पुत्र भरतह राज देवा आणीइ।
राम स्वामी मुगति गामी पिता भाव ते जाणीउ।
भरत कुमरह बांहि साही रामि राज सभा माहि आणीउ ॥

भरत को राज्य देने के पश्चात् राम पिता के चरण छूकर तथा धनुषबाण हाथ में लेकर अपने भाई लक्ष्मण एवं पत्नी सीता के साथ बन को चल दिये।

राम पिता पगि वेग लागो, धनुषबाण ते करि लीउ।

बंधव लक्षमण सहित स्वामी सीता साथि वनवास भउ ॥

राम वनवास में चले तो गये लेकिन अयोध्या उनके बिना सूनी हो गयी। चारों ओर हाहाकार मच गया। दशरथ तो कितनी ही बार मूच्छित हुए लेकिन दोष किसको दिया जावे। कर्मों की लीला विचित्र होती है—

राम गये वनवास कर्मना अवर किम टलिए।

दोस न दीजि काम मूरछा आवी धरणी परयुए।

राम का वन गमन—

अयोध्या से राम मेवाड देश में आये और चित्तौडगढ़ गये। वहां से वे तीनों नलकच्छपुर मालछिपाटण) आये। विन्ध्याचल पर्वत को पार करने के पश्चात् रामपुरी बनाने का यश प्राप्त किया। फिर सोमापुर आये और तप एवं ध्यान करते हुए कुलभूषण एवं देशभूषण पर आये हुए उपसर्ग को दूर किया। इसके पश्चात् दण्डकवन में आकर रहने लगे। और वहां भी दो चारण ऋद्धिधारी मुनियों का उपसर्ग दूर किया।

दण्डक वन में राम सीता और लक्ष्मण रहने लगे। वहां भरत का शासन नहीं था इसलिये एक अलग ही नगर बसाने की योजना के लिये राम ने लक्ष्मण से कहा। लक्ष्मण उपयुक्त भूमि देखने के लिये निर्भय होकर घूमने लगे। शंबुक ने लक्ष्मण का मार्ग रोकना चाहा। इस संघर्ष में लक्ष्मण द्वारा शंबुक मारा गया। खरदूषण की स्त्री चन्द्रनखा अपने पुत्र की देखभाल के लिये वहां जब आयी और अपने पुत्र को मरा हुआ देखा तो रोने लगी। जब चन्द्रनखा ने राम सीता तथा लक्ष्मण को देखा तो उसे अत्यधिक क्रोध आया और वह पाताल लोक में जाकर खरदूषण से आकर शिकायत की। खरदूषण चौदह हजार विद्याधरों के साथ वहीं आये जहां राम लक्ष्मण थे। लेकिन अकेले लक्ष्मण के सामने वे कोई नहीं टिक सके। इसके पश्चात् चन्द्रनखा रावण के पास गयी और उसने राम लक्ष्मण के बारे में पूरा वृतान्त कहा। चन्द्रनखा की बात सुनकर रावण के हृदय में राम लक्ष्मण के प्रति विद्रोह हो गया और वह पुष्पोत्तर विमान द्वारा वहां पहुंचा। उसने सीता को देखा और उसका हरण करना चाहा। वहां उसने मायामयी लक्ष्मण का रूप बनाया और वन में सिंहनाद किया।

राम छला किम हुंं ए रामा, लक्ष्मण विद्या समरी माया
बामाभेद जणाव्यो

माया रूपि लक्ष्मण कीयो, मिघनाद तीणी तब दीयो
लीयो धनुषते बाण

रावण ने सीता का हरण कर लिया और उसे अशोक वाटिका में रहने के लिये छोड़ दिया। सीता बहुत रोयी चिल्लायी हाथ पैर पीटे लेकिन उसकी एक भी नहीं चली।

विलाप करंती दुःख धरंती राम नाम उच्चार ए
स्वामी लक्ष्मण वीर विचक्षण गृह संबर टालए ॥ १ ॥

कवि ने सीता के विलाप एवं रावण के साथ वार्तालाप का बहुत अच्छा किया है। इसी तरह राम के विलाप का कवि ने जो वर्णन किया है उसमें दर्द है, वियोग जन्य वेदना है।

सीता सीता साद करता कीधां कर्म ते सहए।
तरवरह डुंगर परति श्रीराम सीता सुधिज पूछए ॥८॥

राम सरोवर के पास जाकर चकोर से पूछने लगे कि उसकी सीता कहां गयी। क्या कोई दुष्ट उसे ले गया अथवा किसी व्याघ्र ने उसका भक्षण कर लिया अथवा किसी सिंह के मुख में पड़ गयी।

पूछए सुधि श्री राम नरेश्वर सरोवर कांठि ऊभु रही रे।
कहु न चकोर तम्हे चक्रवाकी दीठी सीतल मुझ सही रे।
सहीय सीता हरण हुवो कवण पापी लेइ गयो।
कि व्याघ्री आवी भक्षण कीध तेह तणो कटिण हीयो।
सार्दूल सकल कि सिंघ स्वापद सती सीता मुखि पडी।
वनह मज्झिम कोई मेहली कवण पुछुती यम घडी ॥६॥

धीरे धीरे सीता हरण का रहस्य खुलने लगा। सुग्रीव ने सीता हरण की पूरी बात राम को बता दी। साथ ही रावण की शक्ति एवं वैभव का भी उसने अच्छा वर्णन कर दिया जिससे राम लक्ष्मण को भी उसकी शक्ति का पता चल जावे। लेकिन राम को तो यह भी पता नहीं था कि लंका किस दिशा में है। जब सुग्रीव ने राम की बात सुनी तो वह भी हंसने लगे

राम पूछि कहु न सुग्रीव लंका कवण दिखाड़ै वसि ।
सुग्रीव तणी मम वाणी राम तणी सुण विहसि ।।१४।।

इसके पश्चात् राम ने सुग्रीव की सहायता से युद्ध की बड़ी तैयारी की । सर्व प्रथम हनुमान को अपनी मुद्रिका देकर लंका भेजा और उसमें अभूतपूर्व सफलता लाने के पश्चात् राम ने हनुमान को पूरा सम्मान किया ।

रामचंद्र दीउ मान धन धन जनम वन तम्ह पिता ।
धनि जननी कवि भानु । रा० । रामचंद्र दीउ मान ।।

लंका में अपनी पूरी सेना उतारने के बाद भी राम ने रावण से सीता को वापिस लौटाने का प्रस्ताव किया ।

सीता दीजि प्रीति कीजि राम राउ भावीइ ।

अन्त में राम रावण के मध्य घमासान युद्ध हुआ । रावण नें चक्र चलाया जो लक्ष्मण के हाथ में आया । वही चक्र लक्ष्मण द्वारा चलाया गया जिससे रावण का अन्त हुआ ।

युद्ध में विजय के पश्चात् लंका में चारों ओर राम की जय जयकार होने लगी । मंगल गीत गाये जाने लगे । गरीबों को खूब दान दिया गया । चारों ओर स्वर्ण ही मानों बरसने लगा । इतने में ही नारद ऋषि ने आकर राम से माता के दुःख एवं पुत्र वियोग का वृतान्त कहा । नारद की बात सुनकर तत्काल अयोध्या जाने का निर्णय लिया गया । और पूरे दल के साथ राम लक्ष्मण एवं सीता वहाँ से चल पड़े । राम की सेना बल का कवि ने निम्न प्रकार वर्णन किया है—

नव कोडी तोरंगमा तु पायदल कोडि पंचास तु,
रथ लक्ष बैयालीस तु, गज तेतला गुण रास तु ।
सोल सहस मुगट बंध तु, सेवा करि राम पाय तु ।
लच्छ तणी संख्या नहीं तु विभीषण आगिल जाइ तु ।

राम ने सपरिवार अयोध्या में प्रवेश किया । उस समय अयोध्या को खूब सजाया गया चारों ओर तोरण द्वार बनाये गये । बाजे बजने लगे तथा जय जयकार के नारों से आकाश गूंज उठा । कवि ने नगर प्रवेश एवं आगे राज्याभिषेक का अच्छा वर्णन किया है ।

वाजि दुंदुभि नाद तु, साद सोहामणाए ।
मदन भेरीय भणकार तु, ढोल नीसाण घणाए ।

कुसुम वरसिय अकास तु, पंच शबद नादिए ।
मलपत मयगल कुंभि तु, झरइ सुगंध मदए ।।३।।

राज्याभिषेक का एक वर्णन निम्न प्रकार है—

कलस कनकतणा जाणि तु, नीर कने नीरे भरिए ।
पंच रतन तणो चुक तु, पूरोउ मनि रलीए ।
रयण मणिमय थापितु, सिंघासण तिहां वली ए ।

राम ने राज्याभिषेक के पश्चात् लक्ष्मण को युवराज पद, शत्रुघ्न को मदचिन मथुरा का राज्य, विभीषन को लंका का राज्य दिया । हनुमान, नल नील आदि को अलग-अलग उपहार देकर सम्मानित किया ।

कवि ने रास समाप्ति पर अपनी लघुता प्रगट करते हुये लिखा है कि रामायण ग्रंथ का कोई पार नहीं पा सकता । वह तो स्वयं ही मतिहीन है इसलिये राम कथा को अति संक्षेप में वर्णन किया है ।

ए रामायण ग्रंथ तु एह नु पार नहीं ए
हु मानव मतिहीण तु, संखेपि गीत कही ए
विद्वांस जे नर होउ तु, बिस्तार ते करिए
ए राम भास सुणोवि तु, सुभ परि वखाणए ।।३४।।

राम को ग्रंथ प्रशस्ति में कवि ने अपना कोई विशेष परिचय नहीं दिया है केवल अपने गुरु ब्रह्म जिनदास एवं बाई धनश्री एवं ज्ञानदास जिनके आग्रह से प्रस्तुत रास की रचना की गयी थी का नामोल्लेख किया गया है—

श्री ब्रह्मचार जिणदास तु, परसाद तेह तणोए ।
मनवांछित फल होइ तु, बोलीइ किस्युं घणुए ।।३६।।
गुणकीरति कृत रास तु बिस्तस मनि रलीए
बाई धन श्री ज्ञानदास तु, पुण्यमती निरमलीए ।
गावउ रली रंगि रास तु, पावउ रिद्धि वृद्धिए ।
मनवांछित फल होइ तु, संपजि नवनिधिए ।

प्रस्तुत रास में १२ ढालें हैं जिनकी पद्य संख्या निम्न प्रकार है—

प्रथम ढाल	११
दूसरी ,,	१५

तीसरी ,,	१४
चौथी ,,	१४
पञ्चम ,,	११
षष्ठम ,,	१८
सप्तम ,,	२४
अष्टम ,,	१६
नवम ,,	८
दशम ,,	११
ग्यारहवीं ,,	१५
बारहवीं ,,	३८
	२०७

इस प्रकार १२ ढालों में २०७ पद्य हैं जो अलग-अलग भास रागों में निबद्ध है।

रामसीतारास

ॐ नमः

प्रथमह्न प्रणमीइ श्रीय जिन गणहर सारदा
सुंदरि नियगुरूए ।
तस पाय मनिधरी प्रणबुं विविध,
परिसमय सिद्धांतवरी एक चित्त ।

त्रोटक–एक चित्त दृढ करी बंदु, भवीयण आदि जिणवर नंदुये ।
अजित संभव धर्मह, धामतणो जिन कंदए ।
अभयनंदन सुमति पद्मप्रभ जिन सुपासु ए ।
चन्द्रप्रभह पुष्पदंतह, सीतल श्री गुणवासुए ।१।
गुणहतणा स्वामिश्रेयांस जिणवर ।
वासुपूज्य भवहर विमलनाथ ।
अनंत धरमनाथ शांति कुंथ अरनाथ ।
मल्लिनाथ जिन मुनिसोव्रत नाथ ।

त्रो०–मुनिहिसोव्रत स्वामि वारि आठमु
हलि उपनु तस तणुय अंबव हरि ।
हरवसुं सुरज वंसि नीपनु ।
साकेता नयरीय राय दशरथ ।
अपराजिता तस भामिनी ।
लक्षमीय सादृस रूप निरुपम ।
चन्द्रवदना कामिनी ।।२।।
चन्द्रवदनी सती सुमित्राए ।
सुप्रभाति बीजी राणी केगामती सुप्रजा चुथी ।
च्यारि राणी रायो घरे करि ।
राजइणी परे दशरथ पुण्यकरि जयवंताए ।।त्रो०।।
जयवंत जय जुगिसार सुंदर रामचन्द्र बखाणीइ ।

लक्ष्मीधर अर भरत सत्रुघन च्यारि पुत्र वर जाणीइ ।
कुलकमल दिनकर सकल सज्जन सुखानंदन महायशो ।
देव धरमह गुरु परीक्षण रामचन्द्रह क्षतिपती ।।३।।
क्षतिपती मथुराहीं नयर नरेसर जनक भूचर वर राज करीए,
तस तणी पटराणी सतीय सिरोमणी,
विदेहा सुंदरी एह गुण धरिए ।
त्रोटक—गुणह तणी जे धारिणि वाणी सारद सामिण आणीइ ।
तेह कुखिचहि सुंदरि यानकीय वषाणीइ ।
कलाज्ञान विज्ञान संपन रूप यूयन अवतरिये ।
जनक तणी पुत्री सीता महादेवी धरमभार तिणी धरये ।।४।।
धरयो धरम भार जनक नरेसर देषीय रूप मनि चमकीउ ए ।।
हकारिया परधान राया दीउ बहुमान सयल मली तिहां विचारीउए ।

सीता स्वयंवर

त्रोटक—विचारीउ तिहां सयल भूपति सीता सयंवर मांडीइ ।
अवर राजा दुष्ट दुरजन तेह तणां मन खांडीइ
नयर बाहिर वन निरोपम मेडा मंडप घलावीया ।
कंकोतरी चिहुं दिस मोकली राय तन सयल भूप बोलावीया ।।५।।
आवीया सर्वमली वंशु सुष महाबली ।
पगधरा मंडलीक आवीयाए ।
मलीयाए च्यारि वंस छत्रीस ए ।
कुलईस तिहां रामनरेश र आवीयाए ।।त्रोटक।।
आवीया चिहुंदिस चपटचुरी कनक केरी तिहां घडी ।
रयण माणिक उर मोतीहल हीरा हीर कण घणी जडी ।
झगमगति दह दिशि मुद्द सरासन चवरी उपरि रुपीया ।
वारवणीयर तणुं तेजह तिहा तीणे अनुपे लोपीया ।।६।।
लोपीया शशिकर वज्जावर्त्त परिकर,
सागरावर्त्त वर धनुयनाम ।
सयल श्रृंगार करी जानकी सुंदरी,
नयनि उपनि परिसुणइ ताम ।।

सीता का सौन्दर्य

ते सुराह धाम मंदिर काम रूपधाम रसातली ।
चंद्रवदना मृगहनयना सघनघन तन पातली ।
ते हाव भाव विलास विष मलय लावण्य वापिका ।
गौर वर्ण सुवर्ण छाया सुगंध परिमल कूपिका ।।७।।
कूपिका सुपतणी सहीयर ए साथि घणी,
सरमाला लेई पाणी आवीयाए ।
वेदीय उपरि चढावीय,
दशरिपरि यानकी सुंदरि भावीयाए ।।त्रो०।।
भावीया जन मन सबल सुंदर देखि राय चमकीया ।
रंभराणी कि तिलोत्तम श्रंब पदमनि समकीया ।
एह पंच सर वर समरभेदीय ग्रनंग रंग बहु उपना ।
चित्त चपल चलंति चलब सकल मनोभाव नीपना ।।८।।

स्वयंवर का वर्णन

नीपना जय जय पंच शब्द
घन कलिरव करि जन मन उलास ।
बोलए बिरद घनां अनेक रायां तणा ।
प्रताप सोहामणा गुण निवास ।।त्रो०।।
गुणनिवास सहास बोलयि, सयल भूपति जोवए ।
ग्रहंकार धरी करी एक उठे धनुष कालि जाई सोवए ।
एक राय उपाय चीतवि धनुष साहामु जोवए ।
सबल बल अभिमान सुंदर सकल ग्रहंकार खोवए ।।६।।
खोवए पुरुषारथ तव राजा दशरथ ।
सबहु परिसमरथ इम भणिए ।
उठउ तम्हे राम देवसुरकरि तह्य सेव,
धनुष चढावु देव आपणु ए ।।त्रो०।।

राम द्वारा धनुष चढ़ाना

आपणा पिता तणी वाणी सुबणि स्वामि आणंदीया ।
सिंह जिम सिंहासण मेल्हीय सकल सुर नर वंदीया ।
वंदीया इन्द्र ते कनक भारे रत्नवरिया करि घणी ।
जय जयारव साधु कलि रव ऊच्या तब तिहुयण धणी ॥१०॥
त्रिहुं धड तणु राय लागो पिता तणे पाय ।
धनुष साहामु जाय मतिवलूए ।
मलपतु पग मेल्हि वरणि टोडर बोलि ।
नहीं कोए राम तोलि निरमलोए ॥ओ०॥
निरमलह वेदीय उपरि चढि करि वाम हस्ति धनु लीउ ।
दक्षिण हस्ति गुणाधरवि रामिवि आवर्त्त चडावीयो ।
टणाकार नादि दह दिसि गगन मंडल टलटल्या ।
पाताल ऊपनि असुर सुर नर देव दाणव खलबल्या ॥११॥
खलभल्या सायर अष्ट कुल गिरवर कंपीया भूधर तिहां घणाए ।
तडाय फूटां सही थरहरी एह मही जय सही तिहां कही
देवतणाए ॥ओ०॥
देव शब्द सुणवि सुंदर सार शृंगार सीतावती ।
करहि माला कुसुम परिमल भ्रमर रण झणझणकारतीं ।
हंस गमणीय सुभग रमणीय सीता तिवर आवीए ।
जयो जयो श्रीराम देवह कंठि वरमाला घालीय ॥१२॥
घालीइ वरमाला सोहए कमला ।
राम पासे निरमला उभी रहीए ।
सयल विद्याधर सुर नर नर वर ।
कुसुम आंजलि भरी तिहां सहीए ।
कुसमांजलि सवि भरवि,
राजा राम स्वाम वधावीया ।

जनकभूपति विदेहा राणी साथि वेघ वर मन भावीया ।
रयण मणिमय जडित घन घन करीय परीयल भावनी ।
मोतिय थालि भराबि सामु मनह रंगि वधावती ॥१३॥ (१)
मास मध्वात्व मोडनी
वधावए सबिमली निरमली भाविल नावए पावरे,
धन धन सीतल बहु बर धन धन रामनीं मातरे ॥१॥
धन धन एह कुल निरमल सोहए सूरज वंस रे ।
पुरुषोत्तम एह उपनो नीपनो रघुराज हंस रे ॥२॥
सुधन धन राय दशरथ समरथ कौशल्या माए रे ।
रामदेव सेवा सुर करि समरतां पातिक जाइ रे ॥३॥
तब जनक राउ हरषीउ नरखीउ चहुबर चंग रे ।
राजाधिप तब अरचीउ, रचीउए मंडप रंग रे ॥४॥

विवाह वर्णन

थांभ कनक केरी घडीयाए, जडीयाए रयणमिमा तीरे ।
वेल भरी परवाल डेवण, घण हीरलायोति रे ॥५॥
कुसम माला तिहां लह लहे महमहि परिमल वास रे ।
रिमझिम करि भमरला समरला गावए भास रे ॥६॥
तोरणि कोरणी अतिघणी, मोतीडे बन्दरवाल रे ।
मण्डप द्वार समारीया समीचित नाटक साल रे ॥ ७ ॥
पट्ट कूल बहु आणीय आणीय मण्डप छाउ रे ॥
राय कनक जनकह तिहां सीतल पिताय उमाह्य रे ॥८॥
थांभला परतिय निरमली सोहजली लह लहे धज रे ।
सोना कलश माणिक जडी शोभाघड़ी झबकए तेज रे ॥९॥
छत्रीस कुलीय प्रति भली च्यारि वंसते आव्या रे ।
इन्द्र फुणींद सुचंदह मानसि श्रीराम भाव्या रे ॥ १०॥
सयल शृङ्गार ते भङ्गहि रंगहि रचीया श्रीराम रे ।

गन्धर्व किन्नर तुंबर गावए ते गुण ग्राम रे ।। ११ ।।
मयमत मेगल अतिबल उपरि ढालि अम्बाडी रे ।
चिहुँ दिशाइ धज मेल्हीय हेलीय जोवये नारी रे ।।१२।।
गय वर चंर आरोहीया सोहीया जिम जगनाथ रे ।
पञ्च शबद घन वाजए गाजए अम्बर नाद रे ।।१३।।
शिरि गिरी छत्र सोहामणा भामणां बोलए चंग रे ।
चमर ढलि गंगा जयवीय जीवन जाणुए गंग रे ।।१४।।
धवल देइ वर कामणी भामणी लुछणां कीजइ रे ।
राम नाम संभरंतहां जनमतणां फल लीजिए रे ।।१५।। (२)

भास धी हुँ ।।

तीसरी ढाल

विवाह उत्सव

तीजइ फल बहुरंग । एक नाथि नव नवरंग ।
कनक धारा मेघ बरसि, देखीय दशरथ हरषि ।
एक आनन्द रस दाखि, बीजीय भावना भाखि ।।१।।
छाणवर सहामु ते चढए, बहु परिस लोका पढए ।
सुललित ते गुणग्राम उत्तर चालि श्रीराम ।।२।।
वाजां बहु परिवाजिनादि निसाण गाजि
ढोल तिबल भेरी भावा, ताल कंसास सोहावा ।।३।।
सिम सिम वाजि मृदंग, तिवलीय नाद सुरंग ।
इम वर तोरण आव्या, सजन मनि बहु भाव्या ।।३।।

तोरण एवं विवाह मण्डप का वर्णन

विदेहा अखाणुं लीधुं, सासू वर पुंखणुं कीधुं ।
वर चवरी माहि आव्या, सीहासणीमि बझाव्या ।।५।।
पण्डित बोलए मन्त्र, लगन तणा आवया यन्त्र ।
सुभ वेला तिहां जोइ, वरति मंगल सोइ ।।६।।
भव योग सघलऊ भागु, सुलगनि हथोलु लागु ।
तव हुव जय जयकार, परणीय यानकी नार ।।७।।

सजन दान मान दीधा, जनम तणां फल लीधा ।
माइ बाप हीउ आणंद, वाध्यु धर्मनु कंद ॥८॥
इणि परि लक्षमण वीर, अतिबल साहस धीर ।
बीजु धनुष जे चंग, सागरावर्त्त उत्तंग ॥९॥
धनुष तीणि ते चडावी, अठार किन्या तिहां आवी ।
परणीउ लक्षमण चंग, होउ तिहां अभिनवु रंग ॥१०॥
जनक रायां तणो भाई, कनक राजा ते सरवाई ।
तेह तणी बेटी सुचंग, परणीउ भरत उत्तंग ॥११॥
अनेक रायां तणी धीय, रूपतणा छइजे लीह ।
सत्रुघ्न कुंवर ते सार, ते परण्यु गुणधार ॥१२॥
च्यारि कुंवरि सोहाव्या, परणीय अजोध्या आव्या ।
दशरथ राय जयवन्त, भोगवि राज महंत ॥१३॥
धरम तणु ए विस्तार, पूजि जिणवर सार ।
पालिए विविध आचार, दान देई अवसार ॥१४॥ (३)

चोथी ढाल

भास वणजारानी— वणजारा रे सूरज वंशीय राय इणी ।
परिराज करि घणु वणजारा रे ॥४०॥
दशरथ हूवो विराग राज लेवा मुनिवर तणू ।
मुनिवर तणु राज लेवा भावना भावि घणु ।
मुणवि सजन सयल परिवार अन्तःपुररेह घणु ।

राम का राजतिलक करने की घोषणा

हुंकारीया सवि भूप मन्त्री राज देवा कारणि ।
राम नाम कुमार तेडउ राजा दशरथ इम भणि ।।
आण्या कलस भरि नीर सिंहासन तिहां थापउं ।
केगामती तव जाणि राम तणो लोभ व्यापीउ ।

केगामती द्वारा विचार

व्यापीउ मनि मान अतिघणु सजन आगिलि ।
किम कहुं कंम पापि सुक तणाए पराभव हुं किम सहुं ।
कौसल्या नंदन जगत्र जीवन राम राजा थायसे ।

सुभ तणु पुत्र हवि भरत नर वर, तेहतणौं मान लोपसे॥२॥वण०॥
लोपसि सुभतणी आणि तु जीवीनि किसु करूं ।
हवि जाउं कंत पासि पति साथि संयम धरूं ।
संयम लीति तप कीति पुत्र मोह न छूटए ।
काम क्रोधह मान माया सहित करम न मूटए ।
आठ आगला बीस मूल गुण चलण पालण दोहिलुं ।
एह देगंबर तणौं मारग तप नहीं ए सोहिलुं ॥३॥विण०॥
दोहलुं अति घोर कंत मनावा आइस्यूं ।
नहीं मानिसु तउ तु भरतह राज मांगिसु ।
राज पालुं दुःख टालुं सुख भोगवुं अतिघणां ।
सवी समरथ सयल भूपति सेवक होसि पुत्र तणां ।
राम मंत्री सेहूत लक्ष्मण चमर ढाल सत्रुघन ।
इणी गिरि पुत्र पवित्र अह्मतणो राज भोगवसिए सु मन॥४॥व०॥
मनह तणि रे विचार केगामता उठी मनि रली ।
राजसभाह मझारि ततक्षण आवी निरमली ।

केगामती का राज्य सभा में आकर अपनी बात कहना

निरमलीय कर कमल जोडवि कांत ने पाये लागये ।
हुलहुलिय नयणां जीवन छंडि आपणु वर मांगये ।
रविवंश कमल विकाशह णीयर सुणु स्वामी वीनतडी ।
वैरागि गतु मुगति मातु अह्मं किहि तणी बापडी ॥५॥णव०॥
बापडी नारि विचारि कंत विहूणी किसु करि ।
शिशियर विण जिम राति तिम प्रभु विण जीव किम धरिवि
किम जीव धरीइ राजकरीइ कंत विहूणी कामिनी ।
वेलडी तरवरह पाखि भाग, पाखि कमलणी ।
मातड विवेक विहूणी सील विहूणी भामिनी ।
आचार पाखि कीरति स्वामी तिम कंत विहूणी कामिनी ॥६॥व०।
कंत विहूणी नारि चारित्र पाखि मुनिवरो ।

दया करुहवि नाथ संयम भावना परिहरु ।।
नवि तप लीजि राज कीजि सौख्य भोगवु अतिघणां ।
च्यारि राणी च्यार पुत्रह सयल बहुयर तेह तणां ।
सुकमाल कोमल अङ्गरंगिहि सयन आसन पाल्हीउ ।
पंच इन्द्रीय विषय सयल ते अष्ट भोग मन लालीउ ।।७।।अणु०।।
लालीइ मन अति घोर तपलिथि किमवि सहूइ ।।
दीक्षा दुरधर जाणि खडग धार ते इम जोउ ।।
खडग धारा उपरि चालि अञ्जन भरी छिउ वरीऊ ।
जल वस्त्रह मांहि पयसी कवण नीसरि घइ हुरी ।
मयमत्त मय गलकानि साहु किम मलपतु भावए ।
दयदीप्यमान कि अग्नि ज्वाला सांइ देवा को भावए ।।८।।अणु०।।
भावीइ मिग्र सिद्धांत कवण चाबि लोहमि चणा ।।
मेर करांगलि तोलि निम चारित्रह भार घणा ।
चारित्र भारते भांव दोहिलु पंच महाव्रत पालता ।
ठामि पाणी भात परिधरि दोहिलु मोह टालता ।
वीर विहूणा अंग स्वामी दंशमशक भूंवि घणा ।
भूमिसयन बावीस परीसह कष्ट सहिसु किम तणा ।।९।।अणु०।।

दशरथ का उत्तर

कष्ट साध्यइ तप जाणि सुण नारि ।
तपह बिना मुगति हि नहीं ।।
हवि तप तपसु जप जपसु कर्म्म खपिसु अति घणा ।।
संसार सागर जन्म मरणह दुःख टालिसु जग तणां ।।
चपल धन यौवन्न जाणीय सकल कुटम्ब ते कारिमु ।।
जिनवाणीय जाणीय सयल सम्पत्ति छांडीय
तप ब्रह्म धारिसु ।।१०।।अ०।।
नारि कैकामती जाणि कंत वयण सुणानि करी ।
रुदन करिए अपार मनमाहि कपट माया धरी ।
कपट माया वयण बोलि स्वामी संयम लेईशो ।
ब्रह्म तणी भर्तारि प्रसन हुया तेहवर ब्रह्म देयशो ।

केगामती द्वारा दो वचनों की मांग

सांभलीय दशरथ भणि कामिणी वर मांगु तुह्म आपणो ।
संयम लिना नरह् वांछित जे मागु ते देउं घणो ।।११।।व०।।
घणुय न मांगु देव भरत नरेसर थापयो ।।
दिउ मुझ पुत्रनि राज तो स्वामी संयम लीयो ।।
संयम लेवा राय दशरथ नारि बोलविति चरि ।
जो भरत कारणि राज देवा राजा सव आरंभ करि ।
तेडावीया श्रीराम लक्ष्मण अरु शत्रुघ्न आवीया ।
पिता तणे पगि केमि लागीय दशरथ पुत्र मन भावीया ।।१२।।व०।
पिताय भणि सुणु राम अनुक्रमि राजए तह्मतणु ।।
तपलेवा हुवि जाउ ऋण उतारू मह्म तणु ।।
वाचा रण पिता तणु पुत्र उतारि इम जाणीइ ।
केगामती का पुत्र भरतह् राजदेवा जाणीइ ।
रामस्वामी मुगति गामी पिता भाव ते जाणीउ ।
भरत कुमरह् बांहि साही रामि राजसभा माहि आणीउ ।।१३।।व०।
राजपालु तह्म सार बाप तणो ऋण टालीइ ।।
अह्मे य जाउं बन वास बाप तणो बोल पालीइ ।
पालीइ परमाण वाचा भरत राजा थपीउ ।
केगामती को लोक माहि सयल अपजस व्यापीउ ।
राम पिता पगि वेग लागी अनुज्ञ क्षण ते करि लीउ ।
बंधव लक्ष्मण सहित स्वामी सीता साथि बनवास गउ ।।१४।।

पांचवीं ढाल

भास नरेसूवानो

राम के वियोग में विलाप

रामस्वामी वनवास गया रे नरे सूवालो करिए।
विलाप जननीस रोति अति घणु ए ।।
उदय आध्युं मुझ पाप दशरथ राजा वीनवि ए ।।
अनुक्रम लोप्युमि सार सूरज वंसनु राजीउ ए ।।
राम गयो वनवास कर्मना अक्षर किम टलिए ।।

दोस न दीजि कास मूरछा आवी धरणीपडयुए ।। न. ।।
तब हूवो हाहाकार शीतल उपचारह करीए ।। न. ।।
चेत वाल्यु तव सार तब दशरथ राइ चामीउ ए ।। न. ।।
संयम लेवा काजि गुरह स्वामी तव वीनव्याए ।। न. ।।
ते थाप्यु मुनिराज संयम पालि निरमलोए ।। न. ।।
तप जप ध्यान करेइ मोह मछर सब चूरीयाए ।। न. ।।
महीयल सुजस लेइ राम जगदेशि राज करिए ।। न. ।।
भरत सत्रुघन मानि छत्र सिंहासन पट हस्तीए ।। न. ।।
ते नवि भोगवि जाणि रामनाम तणी रूयडीए ।। न. ।।
वरति भरण अपार कोशल देशनु राजीउए ।। न. ।।
पालि अनुक्रम सार जिहां राम तिहां अजोध्याए ।। न. ।।
सोहला रायनि रानि पुण्यवंत जीवकारणिए ।। न. ।।
पगि पगि नवह निधान राम स्वामी कीला करिए ।। न. ।
ऊलंघि वनह अपार हास विनोद कतूहलिए ।। न. ।।

वनवास

वन क्रीडा करि सार सकल भूषण करी मंडियाए ।। न. ।।
नर भय सिंह समान मेवपाट देश थोईउए ।।न. ।।
चीत्रुडगढ ते जाणि ।। ११ ।। ५ ।।

षष्टम ढाल

भास सही की—चीत्रुडगढ जोई केरी पछि आव्या देश पुरी ।
वर्जकरण राजा महलावीउए । सहीए ।। १ ।।
नालछि पाटणि आवीया, कल्याणमाला मनि भाविया ।
बालखेण राजा तिहां थापीउ रे । सहीए ।। २ ।।
वीन्ध्याचल परवत कही, लक्ष भील जीता सही ।
अरुणग्रामि आव्या ते निरमलाए । सहीए ।। ३ ।।
कंदि तब दीठा यति घणां, कपि लह बाह्य तेह तणां ।
नागकुमार देव ते आवीयोए । सहीए ।। ४ ।।
अन्न थाइ वहिरु कीधु, नाग भरी नाम दीधु ।

रामपुरी बसावी जस लीधुए । सहीए ॥ ५ ॥
च्यार महीना राम रावीया, भगति गुण तिणि दावीया ।
तिहां थका स्वामी ते वली चालीयाए । सहीए ॥ ६ ॥
वनमाला लक्ष्मण वरी, पछि आव्या क्षेमापुरी ।
पंचसांग तिहां लक्षमण साहीए ।सहीए ॥ ७ ॥
क्षेमश्री वरी निरमली, लक्ष्मणां कुंवरि मनि रली ।
तेह तिहां मूकी निवली चालियाए । सहीए ॥ ८ ॥
वंशथल नयर वली, वांसी परवत तेह तली ।
परवत मस्तकि मुनिवर रुयडाए । सहीए ॥ ९ ॥

कुलभूषण देशभूषण मुनियों के उपसर्ग दूर करना

कुलभूषण देशभूषण, तप जप ध्यान विचक्षण ।
चारित्र पात्र ते चिंतामणीए । सहीए ॥ १० ॥
तेह तणां उपसर्ग टालीया, ध्यान फले कर्म्म चालीया ।
केवलज्ञान स्वामी ते पामीयाए । सहीए ॥ ११ ॥
सुर नर सवे तिहां आवीया, राम लक्षमण मनि भाविया ।
धन धन पुरषोत्तम तह्मेँ अवतरयाए । सहीए ॥ १२ ॥
तिहां रहीया महीना च्यारि, सहस्रराय भगति करि ।
पछइए दंडकवन माहि पैठाए । सहीए ॥ १३ ॥
करणरवा आवी नदी, भोजन तणी सामग्रि कीधी ।

चारण ऋद्धिधारी मुनियों को आहार देना

चारण मुनिवर दान दीधुए । सहीए ॥ १४ ॥
पंचाचर्य तिहां पामी, हरष वदन श्री रामस्वामी ।
जटा पंखी आवी तिहां मल्युए । सहीए ॥ १५ ॥
तिहां थकी आधी कही, करणरवा नदी सही ।
तव राम स्वामी ते तिहां गया ए । सहीए ॥ १६ ॥
तिहां परवत एक निरमलो, गुफा सहीत ते सुह भलो ।
तिहां च्यारे जणे स्थिति कीधीए । सहीए ॥ १७ ॥

चुमासुं तिहां लीधु, धरम ध्यान निरमल कीधुं ।
वीपोछव तिहां वली नीपनुए । सहीए ।। १८ ।। ६ ।।

सप्तम ढाल
भास तीन चुवीसीनी

राम रायां रंग भरि भणि वीर, लक्ष्मण बांधव साहस धीर ।
सुणउ वचन शुभ सार ।। १ ।।
एह वन माहिं रह्या सुजाण,
इहां नहीं भरतहनी आण जाणी करु विचार ।। २ ।।
नगर एक इहां नीपजावु भूमि,
सकुन निमत्त पारखी तुम्हें कीजि काज असूल ।। ३ ।।
नगर एक इहां नीपजावु,
ऊंवऊ लक्षमण वार मलावु लुभावो मनि रंग ।। ४ ।।
पछि आणेवा तुं जाए, कौसल्या सुमित्रा माए ।
राज सूरजवंसि कीजिए ।। ५ ।।
रामवयण सुण्या तव सार, लक्षमण उठ्यु तिहां सुविचार ।
धनुष बाण करि लीधु ।। ६ ।।
भूमि जोवा लक्षमण चंग, हैयउ उतरउ मनि रंग ।
गरमय जैसु सिंघ ।। ७ ।।
एकवमस हींडइ वनमाहिं, निरमल जल सूरी मुंड चाहिं ।
माहिं परिमल पूर ।। ८ ।।
परिमल लागु लक्षमण चालि, मयमत्त मयगलनी परिमालि ।
बोलि अलि कुल चंग ।। ९ ।।
आगलि आतां तेज प्रकास्यो, बार दिनकर जिम संकाश ।
भासि सूरज हास ।। १० ।।
झगमग तेज बहु दिगिदीपि, सूरजहास खडग अरि जीपि ।
दीपि अमृत धार ।। ११ ।।
एक छेह लागु गयणंगणि, मुष्टि आवी षषस्तलि रंगणि ।
लक्षमण चाल्यु हाथ ।। १२ ।।
लक्षमण देव षडग करि साह्यु, हरष वदन हुवो ऊरमाह्यो ।

चाहुसी वंसह जाल ।। १३ ।।
वंश जाल छेदतां तूटउ, संबूक तणो माथु ते खूटउ ।
रूठउ जमत काजि ।। १४ ।।

दण्डक वन में शंबूक का वध

सिर तूटी धरणी तब पडीउ, लखमण भणिए पालि जडीउ ।
पडीउए अपराध ।। १५ ।।
षडग लेई रामनि दीधु, भाजि नमस्कार तिणि कीधु ।
लीधु प्राश्चित चंग ।। १६ ।।
खरदूषण नी नारि विशाल, चन्द्रनखा आनी गुणमाल ।
करवा पुत्र संभाल ।। १७ ।।
पुत्र पडयु दीठउ तीणी [illegible]
पीति आण्यू पाप ।। १८ ।।
लक्षमण मारि माणि ओबंती, तीरणी गुफाइ आवीय तुरंती ।
ऊभी रही रोयंती ।। १९ ।।
राम लक्षमणनि सीता देखी, इन्द्राणी मन माहि पेखी ।
कोण भली ते बाल ।। २० ।।

चन्द्रनखा का खरदूषण के पास जाना

पुत्र मारियो डाढा इम जाणी, चाली पाताल लंका भणी ।
चिठी तेह विमान ।। २१ ।।
खरदूषण आगिल कही बात, पुत्र तणु हूवो ते घात ।
दुःख पामीइं नाथ ।। २२ ।।
चोदस सहस विद्याधर साथि, सगला सुभट उठया एक हाथे ।
चाल्या जिहां छि राम ।। २३ ।।
राम भणि लक्षमण देव उठउ, विद्याधर तिनमसे रूठउ ।
छूटो लक्षमण वीर ।। २४ ।।
धनुष बाण लीधो साहस, करि सोहि ते सूरय हासि ।
साहांमु चाल्यु वीर ।। २५ ।।

रोद्र भूफ हुउ सविचार, एकलडो लक्षमण कुमार ।
बलह न लाभि पार ॥ २६ ॥
तेणि अवसरि ते चंद्रनखा, ततक्षण आईय मुहुतीश लंका ।
शंका रहित ते नारि ॥ २७ ॥
रावण बंधवनि तीणी कहीयो, महीयल रूप मर्यादा रहीउ ।
सहीए लक्ष्मी होइ ॥ २८ ॥

रावण द्वारा सीता हरण

रावण मनि उपनु नेह, नयणडे देखु नारिज तेह ।
जेहनु रूप विशाल ॥ २९ ॥
एकलडो तस लागो ध्यान, पुष्पोत्तर रचीयोय विमान ।
मा नमई रूप दीठि ॥ ३० ॥
राम छता किम हरूं ए रामा, ततक्षण विद्या समरी नामा ।
वामा भेद जणाव्यो ॥ ३१ ॥
माया कांद लक्षमण कीयो, सिंघनाद तीणी तव दीधो ।
लीयो धनुष ते बाण ॥ ३२ ॥
रामि शीतल गुफाइं मूकी, रक्षण मूक्यो जटायु पक्षी ।
सुखी चाल्यो वीर ॥ ३३ ॥
रावण गुफा माहि ते पिठो, सीतल हरी विमानज बिठो ।
दीठो ते जटा पक्षी ॥ ३४ ॥

अष्टम ढाल

भास श्री ह्रीं श्रावकाचारनी

रावण सीता रण ते कीउ, लीयो संग्राम विहंगमि रे ।
झलपि मारीय मुगट लिणि, पाड्यो ताड्यो स्रवणें
संगमि रे ॥ चट।वी०॥
संग्रामि ताड्यो धरणि पाड्यो करा करा करि घणी ।
संतोय सीता मनिहि चिंता उपनी पक्षी तणी ।

सीता का विलाप

विलाप करंती दुःख भरंती राम नाम उच्चारए ।

धामि लक्षमण वीर विचक्षण एह संकट टाल ए ।।१।।
टालु रे संकट मुझ तणां हो देवर सहोदर भावु विद्याधर रे ।
सानधि सयल सुरासुर कीधो लीधो यस सीयल तणो रे ।।च०।।
सीयल संपन्न देवर लखुमण भरत [illegible]
तात जनक कनक काका वेगि विह्लि पावयो ।
राम राम राम नाम क्षणि क्षणि वलीन वाचा मूकए ।
वैहूं कुल कमल उद्योत किरिणी सतीय सत्त न चूकए ।।२।।
सतीय सीता गयणंगणि रावण लालचि करय अपारन रे ।
पंचबाण घणु जीवन भेद्यु वेध्यु तह्न रूपि सारन रे ।।च०।।
सार सुंदरि सुणवि वाणीय प्रान सुखी तिहां हुई ।
सुण रे दुष्ट कुनष्ट स्वानर तेह नारि लक्षण जुई ।
हुं सतीय बहुमति संत कंतह राम मुझ तणो आतमा ।
अन्य नर जे सयल तिहूयण मुझनि ते बंधव समा ।।३।।
बंधव समा मुझ सुरपति इंदह घरणेन्द्र रवि शशिकर रे ।
सती सुं आलिम करे स हो मूरखा पुरषाम मेल्ह
कुसुम सर रे ।।च०।।
कुशम सर सु भाव परिहरि सील सवल सती तणो ।
जु ध्रुव लोटि वज्र फूटि चूरण हुइ गगननि घणो ।
सौधर्म्म स्वर्ग जो ठाम छांडि मेर मंदिर चाल ए ।
इम जाणी विवेक आणी एह वयण इम बोलए ।।४।।
बोल्या बोल जु केवलि चूकि मूकि जल जलधेसवरे ।
अष्ट कुल गिरि पायाल जोपिसि तुहि नवि सीयल
हुं परिहरु रे ।।च०।।
परिहरीय सील जे नरह नारि संसार माहिं घणुं भम्या ।
परनारि लंपट दुष्ट कुष्ट ते सातमि नरगि रम्या ।
जिहां छेदन भेदन तलीय तापन सूलारोपण अति घनां ।
तेत्रीस सागर आयु पामी दुःख भोगवि तिहां तणां ।।५।।
सतीय सीता तणी वाणी सांभली रावण राणु होउ दुःखी रे ।

चिंतातुर थो लंका पैठो प्रमीदावन माहि मूकी रे ।।
मूकीय प्रमदा वनह मझमि यानकी दुख चित करी ।

अशोक वाटिका वर्णन

असोक तरवर तलि निरमल सती बिठी आसण पुरी ।
श्रृंगार परिहरि धहिहि मन धरि नीम लीयो आहार नो ।
राम स्वामी सुद्धि पामु तब करू हु पारणो ।। ६ ।।
पारणो तब जब प्रभु सुधि पामु नामु सीसकंत पाव रे ।
एवडउ निरधारिउ यानकी सेवकी हुई राक्षसी खरीरे ।। च० ।।
षरदूषण बीर लक्षमण भणि विचक्षण राम स्वामी भावीया ।
यानकी वनमाहि एकली मूकी कांइ सही आवीया ।। ७ ।।
आव्या एकली मेल्ही यानकी कुड कीधु खगि षणु रे ।

राम की व्यथा

हवि वहत वलो राम जगनाथ आश्रम मेल्ह सीता तणु रे ।।च०।।
सीतहि तणु वाणि सांभली राम चाल्यु रंग भरी ।
आवीय गुफा माझि स्वामी नवि दीठी ते सुंदरी ।
सती सीता साद करता कीधा कर्म ते सहए ।
तर वरह डुंगर परति श्रीराम सीता सुधि ज पूछए ।।८।।
पूछए सुदि श्रीराम नरेश्वर सरोवर कांठि ऊभू रही रे ।
कहू न चकोर तह्ने चक्रवाकी दीठी सीतल मुश सही रे ।।च०।।
सहीय सीता हरण हुयो कवण पापी लेइ गयो ।
कि व्याघ्र आवी भक्षण कीधु तेह तणो कविण हीयो ।
सार्दूल सकल कि सिंघ स्वापद सती सीता मुनि पढी ।
वनह मझमि कांइ मेल्ही कवण पुहुती यम घडी ।।९।।
जम रूठो सीणि अवसरि जाण्यो षरदूषण बग हण्यो रे ।
लक्षमण वीरि सिर तस छेदी भेदीय रिपुदल जाण्यु रे ।।च०।।
जाणीय रिपु दल उपरि कुंवर विराधित ते भावीयो ।
विरीय मारीय वहुत लक्षमण राम कह्नि ते मावीयो ।

रामस्वामी सुगति गामी गलि लागी रोयए ।
बेहु बंधव वनहु मझ्कमि सीता काजि जोवए ।।१०।।
जोतां चिहुं दिसि रामलक्ष्मी धरनवि पामि कोही त्राणु रे ।
तिणि अवसरि वैरी जीपीनि विराधित आवी पगे लागु रे ।।च०।।
भणि विराधित वात बांकी एक काज तो सारीये ।
रावण तणो जमाइ तम्हे तां खर दूषण पग मारियो ।
हवि इमि कीजि ठाम लीजि भेद कुहुं हुं तीह्न सही ।
पैयाल लंका नही संका सीता सुधि कसूं तिहां रही ।।११।।
तिहां रहीनि रामकी जसे सकल काम विमान बिसु स्वामी
अह्म तणे रे ।
विराधित कुंमरनी वाणी सांभली राम भणि धन जीवो
तह्म तणी रे ।।च०।।
धन विराधित दोहिली वेलां परोपकार चडावीया ।
इम कहीय विमान चडीया पाताल लंका आवीया ।

सुग्रीव से भेंट

साहसमल्ल साहस गति खग सुग्रीव कपि मारीयो ।
सुग्रीव लाग सेस भरिनि कपि काज ते सारीयो ।।१२।।
सारीय काज सुग्रीव इम जाणी विमान बिसी सीता सुधि गउ रे ।
गयणंगणि धकु दीठु रतन जटी तब आनंद मनमांहि
भयो रे ।।च०।।
भयो आनंद आवीय सुग्रीव रतन जटी नि प्राण ए ।
कहु न भ्राता राम कांता शुद्धिजु तुं जाणए ।
रतन जटी तब भणे सुग्रीव बात सुणु न अह्म तणी ।
जे जानकी जनक तनया रावण लई गयो लंका धणी ।।१३।।
धणी त्रिभुवन तणु राम भेटावुं आवु तह्मे अह्म साथि
सहोदर रे ।
सयल कथावर्त्तिय सीता तणी राम स्वामी आगिल कहुं रे ।।च०।।
कहीय सुग्रीव रतन जटीनि राम कन्हि ते आणीयो ।

सीताय हरण वृतांत सघला राम लक्षमणि ते जाणीयो ।
राम पूछि कहु न सुग्रीव लंका कवण दिशाइ वसि ।
सुग्रीव तणो मंत्र वाणी राम तणी सुण विहसि ।।१४।।
हसिय राणी इम भणि रामचन्द्रह इन्द्र जे दसानउ रे ।
रावण नामि विख्यात विद्याधर अरि परि तपि जिम
भानु रे ।।२०।।

भानुतणो संकास वास विख्यात लंका जाणीइ ।

रावण की शक्ति का वर्णन

राक्षस वंस वितंस रावण हवि तेह तणो भय आणीइ ।
जिणि इंद्र चंदनि भानु राजा ग्रह बंदी ते राषीया ।
असुर खग नर दैत्य दाणव तेहां अभिमान लांषीया ।।१५।।
लांषीया अहंकार सोल सहस राया मुगटबंधउ सग करीए ।
नवकोटी वाजीनि मयमत्त मथ गल बेतालीस लक्ष तनु
धरिए ।।२०।।

धिरि बितालीस लक्ष रथ वर बियालीस कोटीय पायक ।
सोल सहस जे देश भोगवि तिहुं षंडनु नायक ।
सुणु न राम अति वीर लक्षमण दोहिलु रावण अति बलो ।
हवि सीतल तणी तह्नि आस मूको अजोध्यां भणी
पाछा वलो ।।१६।।

नवम ढाल
भास साहेलडानी

मंत्रीय वाणि सुणवि चार बोल्यु कवण रावण तणु नाम ।
सयल निशाचर खचर अमर नर लंका सहीत फेडुं ठाम ।
साहेलडी राम तणो परसाद लक्षमण धीर गंभीर वीर सिरोमणि
भणि अरि जुलारिसुं नाद ।
साहेलडी रामतणो परसाद ।।चडालो।।
परसाद साधु सुग्रीव बोलि बाप बलीउ वीर तुं ।
एह रामनामि एक लुपुण रावणनिहुं जीपि मुं ।

सुग्रीव तणी चौद अक्षोहणी कटक बहु परि मेलए।
कपि वंश मंडण अरय खंडण आवि नल नील वीर ए ।।१।।
नलनील गवय गवखराइ आवि सुग्रीव सेस पठावि।
चतुरंग दल बल सबल विमान चढी हनमंत वीर तव आवि,
साहिलडीपवन राजा तणी पुत्र अजना उपरि सुहो
रयण मणि रावण पाइ अदमुत साहिलडी। पवन राजा
तणो० ।।चढावो।।
पवन पुत्र विशाल भल लाग परोपकार चतुर नर।
राम नाम दुलंभ पामीय पगि लागि जोडीय कर।
तव राम स्वामी सुगति गामी आणी आलिंगन दीउ।
पछि लक्ष्मण वीर विचक्षण हनमंतही पासुं लीउ ।।२।।

हनुमान का लंका जाना

लीधो बीडो तिणि रामचन्द्र तणु गुण लीधो राम मुद्रि।
लंका जाइ ने शास गढ मोडीय आणी यानकी सुद्धि ।।सा०।।
रामचन्द्र दीउ मान धन धन जनम धन तह्य पिता।
धनि जननी कुलि भानु साहिलडी रामचन्द्र दीउ मान ।।च०।।
मान दीउ जस्म लीउ कपि वंश मंड ‸ आवियां।
रामस्वामी तणे पासे अनेक राय ते आवियां।
सैन संख्या सुभट लेखा सहस्त्र वि अक्षोहणी।

राम रावण युद्ध

विमान चढी श्री राम लक्ष्मण आव्या तव लंका तणी ।।३।।
आवीय हय गय रथ रे विविध परि विमान तणु नहीं पार।
वीस जोयण तणि फेरि कटक बैठु श्रीराम देवनु सार ।।सा०।।
वाजि भेर नीसाण ढोलति बल धन साद सोहावा।
कपिवंस राव सुजाणं साहिलडी वाजि भेर नीसाण ।।च०।।
भेरीय नाद नीसाण संभलि लंक लोक ते खलभल्या।
रत्नश्रवानि केकसीतणा चेतर कलकल्या।

अठार सहस्र अधिक राणी मंदोदरी इम बोलए।
सुणि न कंत विख्यात भुवि बल अवर नहीं तुझ तोलए ।।४।।
अवर नही तह्म सम बड़ि रावण न्यायवंत सवि सविचार।
सतीय सीता तणु हरणसि कीधु सीधु अपजस भार ।।मा०।।
[illegible] सपनहि दीठो रावि राघए [illegible] [illegible]।
विभीषण लंका राज थाप्यु साहेलडी आज सपनमि दीठो ।।च०।।
दीठो अभिनवु सपन स्वामी कृपा करु मुझ उपरि।
सती शिरोमणि जनक तनया मेल्हि राम अंतेउरि।
परि रमणि रली रंग ने नर राता ते विगूता बहू परे।
राक्षस वंसि विष वेलडी ए तुं आपि आपि ए सुंदरि ।।५।।
सुंदरी मंदोदरी तणी सुणी वाणी रावण धरि अभिमान।
विभीषण भण भणि सुणु राय दशानन।
हवि य गई तुह्म सान साहेलडी काइ न जाणु तुम्हे आज।
नलनील जंबूनाद हनमंत सुग्रीव विमान बांधी सिधु काज
साहेलडी काइ न जाणु तुम्हे आज ।।च०।।
आज पाज उलंघीया श्रीराम लक्षमण धावीया।
सकल दलबल चपल वानर सैन सहित ते आवीया।
हवि वेगविहलास विहि पहिला राम राणु मनावीइ।
सीता दीजि प्रीत कीजि एम रूड भावीइ ।।६।।
भावीइ इणी परि रूडा हो बांधव मनि म धरे अहिकार।
अमीय समाण विभीषण बोल बोल्या।
कोप्यु रावण गमार साहेलडी तब जाण्यु विपरीत।
धरि आवी विभीषणह विचार। हवि कीजि जीवहित ।।सा०।।
तव जाण्यु विपरीत ।।च०।।
विपरीत जाणीय होइ आणीय चीन अक्षोहणी दल भावीयु
विमान चढी बहु कणय रयण सु विभीषण वीर ते आवीयो।
कर कमल जोडवि मौलि मुगटहं राम तणे पगि आवियु।
रामि विभीषण भगत जाणी पंचमु बांधव थापियु ।।७।।
थापिउ विभीषण अचल लंकापति सतीय सीता मनि भाव्युं।

तब रावण बहुदलह करीनि लंका थकु रणभूमि आव्यु ॥सा०॥
अक्षोहणी सहस [illegible] श्री [illegible] वीर हुए रण रंग भरिए ।
आसन कीधि पीयारी साहेलडी अक्षोहणी सहस इग्यार ॥च०॥
इग्यार सहस्र अक्षोहणी दल मलीय बहु निसाचर ।
सहस्र ऐंड अक्षोहणी श्रीराम कल्हिहि वानर ।
संग्राम भेरी ते तब बहु परिनाद दह दिसि वाजए ।
नीसाण घण सु सद्द संभलि वीर बहु परि गाजए ॥८॥

दशम ढाल
मास राउरीक

युद्ध की भीषणता

गाजि वीर पडग करि साह्या बाह्या अरि सिर धार ।
दुधड धड धड ऊपरि लोटिय तन हुइ असवार ॥साहेलडी॥
झूझे रघुवंशी राम लक्ष्मण वीर महाबल भांजि ।
राक्षसनि नहीं ठाम साहेलडी झूझे रघुवंशी राम ॥१॥
सुग्रीव अगद नल नील राज । मरु रेवि गर्वित वीर ।
कुंभकरण मेघ मय दैत्य इंद्रजित संग्रामि रण रंगि वीर
साहेलडी० ॥२॥
रामनाम तणी पाखरि पहिरी हनमंत वीर सरि चूंबु ।
राक्षस रणि चरचा करिनाचि जाण्यु यम ए रूठो ॥सा०॥३॥
विभीषण रावण समवडि लागा, भागा रथ रे विमान ।
सकति समरि करि रावण लीधी, लक्ष्मण धरि अभिमान
॥सा०॥४॥
लक्ष्मण रावण गावण सनमुख रही विभीषण पाल्यु वांझि ।
मूकि सकति रे गयणु ता परी दशरथ नंदन हसि ॥सा०॥५॥
लंकेसर तब कोपि चडीउ सक्ति मेल्ही वीर पाड्यु ।
हनमंत वीर विशल्या आणी शक्ति भेद निणि काढ्यु ॥सा०॥६॥
तब रावण मनि विलखु हौउ समरिउ चक्र विशाल ।
आरा सहस्र सुं तेज पुंज करि आव्यु ते गुणमाल ॥ सा० ॥ ७ ॥
रावण भणि रे बाला लक्ष्मण काइ यमह तहीं आज ।
सीता राम रमणि मुझ आलु सुखिय मस तह्नें राज
॥ सा० ॥ ८ ॥

लक्षमण भणि सुभट मारीय रावण विभीषण लंका राज आपुं
जनक तणीए दुहिता सीता रामचन्द्रनि आपुं ॥ सा० ॥ ६ ॥
तव कोपारुण हुवो लंकेसर लक्षमण बोल न भाख्यु ।
फेरीय चक्र मेहल्यु तीणि अतिबल लक्षमण हाथि
ते आव्यु ॥ सा० ॥ १० ॥
रामतणें पग लागीय लक्षमण चक्र मूक्यु रे पचारि ।
भेदीय हृदय रावण तीणि पाडय्, राक्षसनि
आवी हारि ॥ सा० ॥ ११ ॥

ग्याहरवीं ढाल
मास भमारुलीनो

लंका विजय पर प्रसन्नता

हरष्, निशान दहु दिसतु भमारुलीनी हाजिम पुण आणि तु ।
रघुनंदन दलि जयह बोलु भमारुलीनी
वरतीय राम नीयाण तु ॥ १ ॥
लंका नगर सोहामणु तु भमारुलीनी तलीयाए तोरण चंग तु ।
धवल मंगल गीत नाद करीतु भमारुलीनी पात्र नाचि
नवरंग तु ॥ २ ॥
घरि मंदिर महोछव हवोतु भमारुलीनी गुडीयम ध्वज करेई तु ।
राम नाम राक्षस जपितु भमारुलीनी पिंडित करि तिहां
सांति तु ॥ ३ ॥
ढोल तिवल भेरीय तणा तु भमारुलीनी नाद हुइ घणा आणि तु ।
रामदेव गय वर बैठा तु भमारुलीनी आगिल बाजि
नीसाण तु ॥ ४ ॥
गिरि वर छत्र सोहमणुं तु भमारुलीनी चमर ढली मक्षीर तु ।
याचक जन वांछित पूरि तु भमारुलीनी दानदेइ विभीषण
वीर तु ॥ ५ ॥
देव सयल आनंदीया तु भमारुलीनी कनक धारा वरषंति तु ।
प्रमदा वन भणी चालीया तु भमारुलीनी यानक मनि
होइ हरष तु ॥ ६ ॥

राम रमणिए रंग भरी तु भमा० साहारीय श्रावीय सार तु।
राम सीता मेलावडु तु भमा० होउ तिहां
जय जय कार तु ॥ ७ ॥

मातु मयगल मलपंतु तु भमा० राम चड्यु सीता साथि तु।
लक्षमण विशला साथि तु भमा० वयठा ए
मलपति हाथि तु ॥ ८ ॥

वेहु बंधव अति रूवडा तु भमा० लंका कीयउ प्रवेस तु।
नव वरसां तिहां रह्या तु भमा० राम लक्षमणह
नरेस तु ॥ ९ ॥

तिणि अवसरि नारद मुनि तु भमा० अजोध्यां थका
आव्या चंग तु ॥
तह्म तणी माता दुःख करि तु भमा० बार बरसह वियोग तु ॥
तह्म विण पामी दुःख खाणि तु ॥ १० ॥

नारद वयण सुणी करी तु भमा० राम मनि हुवो आनंद तु।
माता मिलवा कारणि तु भमा० चाल्यु ए
दशरथ नंद तु ॥ ११ ॥

नव कोडी तोरंगमा तु भमा० पायदल कोडि पंचास तु।
रथ लक्ष बैंयालीस तु भमा० गज तेतला
गुण रास तु ॥ १२ ॥

सोल सहस मुगट बंध तु भमा० सेव करि राम पास तु।
लच्छ तणी संख्या नहीं तु भमा० विभीषण आगिल
जाइ तु ॥ १३ ॥

पनर दिन पंथ रत्न तु भमा० मेघ रूपे कीउ वर्षा तु ॥
अजोध्या नयर भलो तु भमा० आप्यो अमरावती
भाव तु ॥ १४ ॥

बारहवीं ढाल
भास रनादेवनी

राम लक्ष्मण का अयोध्या प्रवेश

अमरावती जिम जाणि तु, अजोध्या नयर कीउए।

तोरण मुखड़ मंडाण तु, ईणी परिजय लीउए।
सहीय समाणीय चालि तु, मोतिय थालि भरीए ।। १ ।।
राम लक्षमणह बधावि तु, मन माहि भाव धरीए।
वाजि दुंदुभि नाद तु, नाद सोहामणाए।
मदन भेरीय झणकार तु, ढोल नीसाण घणाए ।। २ ।।
कुसुम बरसिय अकास तु पंच शबद नादि ए।
मलपतं मयगल कुंभि तु, झरइं सुगंध मद ए ।। ३ ।।
इणी परि आव्या श्रीराम तु, पुष्पक विमान बिसी ए।
सोहि इन्द्र जिम जाणि तु, सीता इन्द्राणी जिसी ए ।। ४ ।।
मन घणे चडी बाट जोइ तु, जननीय राम तणी ए।
भरत सत्रुघन वीर तु, सेना मली अति घणी ए ।। ५ ।।
हय गय रथ सिणगार तु, पायक अति बली ए।
बेहू बंधव सविचार तु, चाल्या निरमला ए ।। ६ ।।
महाजन सयल विचार तु, नाना विधि भेट लीधीए ।।
रयण मणि मोती आदि तु, आपणी आपणी रिधि ए ।। ७ ।।
इणी परिमल्यु बहुलोक तु, कलिरव करि घणु ए ।।
राम साह्मा माते जाइ तु, पार नही तेह तणु ए ।। ८ ।।
गगन मंडल थका जोइ तु, राम स्वामी निरमला ए ।।
भरत सत्रुघन होइ तु, बंधव सुह जला ए ।। ९ ।।
जानकी पूछि श्री राम तु, साह्मा आवि माहाजन ए।
देवर देषुं स्वामि तु, भरत सत्रुघन ए ।। १० ।।
राम भणि सुणु नारि तु, पेलु भरत कही ए।
गयवर उपरि बैठु तु, मुकुट झलकि सही ए ।। ११ ।।
हय वरि असवार वीर तु, पेलो देषु सत्रुघन ए।
जानकी जोइ मनि रंगीतु, देवर धनु धन ए ।। १२ ।।
समीप आव्या सवे जाणि तु, राम स्वामी निरमला ए।
उतरया विमान वा सार तु, भूमि आव्या सुहजला ए ।। १३ ।।
राम लक्षमण दीठा सार तु, गरूड़ धजा लहलहिए।
भरत सत्रुघन वीर तु, सजन सुं गहगहिए ।। १४ ।।

ब्राह्मण आड्या तव जाणि तु, भूमि चालि अति वणा ए ।
मुगट उतारीय बंध तु, पगे लागा रामतणो ए ।। १५ ।।
राम लक्षमण एह वीर तु, भरत सत्रुघन ए ।
आलिंगन हुवो सविचार तु, पछि भेटया महाजन ए ।। १६ ।।
ति हुवो जय जयकार तु, मेघ कनके वूठा ए ।
आज सु धन दिन चंग तु, राम देव अम्ह तूठाए ।। १७ ।।
इणि परि बंधव सुसार तु, अजोध्या प्रवेश कीउ ए ।
मायने पगि सिर नामि तु, रामदेव जस लीयो ए ।। १८ ।।
मलीया अति बहु रूप तु, विधारि मनि रली ए ।
अंगद सुग्रीव हनमंत तु, नल नील महाबली ए ।। १९ ।।
विभीषण भणि अति चंग तु, भरति तप लीउ ए ।
राज रिद्ध सवे छांडि तु, मुगति हिं मन कीउ ए ।। २० ।।

राम का राज्याभिषेक

राजपाट देउ सार तु, सयल धरा तणो ए ।
रामस्वामी नि काजि तु, महोछव करु घणो ए ।। २१ ।।
विभीषण तणी सुणी वाणि तु, भूप हरष धरी ए ।
कलस कनक तणा जाणि तु, तीरथ ने नीरें भरीए ।। २२ ।।
पंच रतन तणो चुक तु, पूरीउ मनि रली ए ।
रयण मणिमय थापि तु, सिंघासण तिहां वली ए ।। २३ ।।
तिहां राम सीता बिसाडि तु, जय जयकार करी ए ।
आणंदि पूरीया धूप तु, कलस त करि धरी ए ।। २४ ।।
धवल मंगल गीत नाच तु, बीह कर सालीयां ए ।
महोछव सहित ते कुंभ तु, राम सिर ढालीं ए ।। २५ ।।
सयल प्रथ्वी तणो स्वाम तु, रामचन्द्र निरमलो ए ।
युवराजह पद वेंरु सार तु, लक्षमण अतिबलो ए ।। २६ ।।
लंका नगर को स्वाम तु, विभीषण थापियो ए ।। २७ ।।
करण कुंडल हणमंत तु, नल नील धिषपुरी ए ।
सत्रुघन बंधव ते सार तु, दक्षण मथुरां भणीए ।। २८ ।।
जे यथा योग्य होता भूप तु, ते तिहां थापीया ए ।
इणी परि करि राम राज तु, बहु जस व्यापीया ए ।। २९ ।।

अह निशि करि दया धर्म तु, दान देय मनि रलीए ।
त्रिभुवन माहि जयकार तु, जस बोलि सहूजलीए ।। ३० ।।
सोल धनुष तस देह तु, ऊंचा रामदेव कही ए ।
सतर सहस्र वृष आयु तु, तेह परमाण कही ए ।। ३१ ।।
एतला माहि सविचार तु, श्रीराम ग्रति बली ए ।
च्यार पदारथ सार तु, साध्या निरमला ए ।। ३२ ।।

कवि प्रशस्ति

ए रामायण ग्रंथ तु, एहनु पार नही ए ।
हूं मानव मति हीण तु, संखेपि गीत कही ए ।। ३३ ।।
विद्वांस जे नर होइ तु, विस्तार ते करि ए ।
ए रास भास सुणेवि तु, मुझ परि दया धरु ए ।। ३४ ।।
अक्षर मात्र हूं चि तु, पद छंद गरण चूक ए ।
सरसिति सामिरण देवि तु, अपराध मुझ मूकु ए ।। ३५ ।।
श्री ब्रह्मचार जिरणदास तु, परसाद तेह तणो ए ।
मनवांछित फल होइ तु, बोलीइ किस्युं घणु ए ।। ३६ ।।
गुणकीरति कृत रास तु, विस्तार मनि रली ए ।
बाई धनश्री ज्ञानदास तु, पुण्यमती निरमली ए ।। ३७ ।।
गावउ रली रंगि रास तु, पावउ तु, पावउ रिद्धि वृद्धि ए ।
मनवांछित फल होइ तु, संपजि नव निधि ए ।। ३८ ।।

इति श्री रामसीतारास समाप्तः ।।

गटका—पृष्ठ संख्या ६५ से ६१

भट्टारक यशःकीर्ति

भट्टारक यशःकीर्ति नाम के कितने ही भट्टारक एवं विद्वान् हो गये हैं जिनका वर्णन विभिन्न ग्रन्थ प्रशस्तियों में मिलता है।

इनमें से कुछ भट्टारकों का परिचय निम्न प्रकार है—

(१) प्रथम यशःकीर्ति काष्ठा संघ माथुर गच्छ के पुष्कर गण शाखा के भट्टारक थे जो अपने युग के श्रेष्ठतम साहित्यकार, कठिन तपस्वी, प्राचीन एवं जीर्ण शीर्ण ग्रंथों के उद्धारक एवं कथा साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् थे। वे भट्टारक गुणकीर्ति के शिष्य थे। अपभ्रंश के महान् वेत्ता पं. रइधू जैसे उनके शिष्य थे। जिन्होंने उनकी विद्वत्ता, तपस्या, तेजस्विता एवं अन्य गुणों का बहुत ही सुन्दर वर्णन किया है। उनके अनुसार वे आगम ग्रन्थों के अर्थ के लिये सागर के समान, ऋषीश्वरों के गच्छ नायक, विजय श्री [illegible], [illegible], सुन्दर, निर्भीक, ज्ञान मन्दिर एवं क्षमागुण से सुशोभित थे।[1] महाकवि सिंह ने अपने पज्जुण्णचरिउ में उन्हें संयम विवेक-निलय, विबुध-कुल लघुतिलक, भट्टारक भ्राता कहा है। यशःकीर्ति द्वारा प्रणीत चार रचनाएं उपलब्ध होती हैं जिनके नाम पाण्डव पुराण, हरिवंश पुराण, जिणरत्तिकहा एवं रविवयकहा हैं। पाण्डवपुराण का रचना काल सं. १४९७ एवं हरिवंश पुराण का सं. १५०० है।

यशःकीर्ति अपभ्रंश के महान् वेता के साथ-साथ ग्रन्थों की प्रतिलिपियां भी करते थे। राजस्थान के शास्त्र भण्डारों में उनके द्वारा लिपिबद्ध कितनी ही पाण्डुलिपियां मिलती हैं।

दूसरे भट्टारक यशःकीर्ति भट्टारक सोमदेव की परम्परा में होने वाले प्रमुख भट्टारक थे, वे अपने आपको मुनि पद से सम्बोधित करते थे। इनका विस्तृत वर्णन आगे किया जावेगा।

तीसरे भट्टारक रामकीर्त्ति के प्रशिष्य एवं विमलकीर्ति के शिष्य यशःकीर्त्ति हुए। ये भी अपने आपको मुनि लिखते थे। इन्होंने जगत्सुन्दरी प्रयोगमाला नामक आयुर्वेद ग्रंथ की रचना की थी। प्राकृत भाषा में निबद्ध आयुर्वेद विषय की एक मात्र कृति है जिसकी एक पाण्डुलिपि जयपुर के शास्त्र भण्डार में संग्रहीत है।

---

1. देखिये रइधू साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—डा. राजाराम जैन पृष्ठ ७४—७५.

चौथे यशःकीर्ति नागौर गादी पर भट्टारक हुए। जिनका संवत् १६७२ की फाल्गुन शुक्ला पंचमी को रेवासा नगर में भट्टारक पद पर पट्टाभिषेक हुआ था। एक भट्टारक पट्टावली में इनका परिचय निम्न प्रकार दिया हुआ है—

"संवत् १६७२ फाल्गुन सुदी ८ यशःकीर्ति जी गृहस्थवर्ष ६ दीक्षा वर्ष ४० पट्ट वर्ष १७ मास ६ दिवस ८ अन्तर दिवस २ सर्व वर्ष ६७ जाति पाटनी पट्ट रेवासा।

रेवासा नगर के आदिनाथ जिन मन्दिर में एक शिलालेख के अनुसार यशःकीर्ति के उपदेश से रायसाल के मुख्य मंत्री देवीदास के दो पुत्र जीत एवं नथमल ने मन्दिर का निर्माण करवाया था। उनके प्रमुख शिष्य रूपा एवं डूंगरसी ने धर्मपरीक्षा की एक प्रति गुणचन्द्र को भेंट देने के लिये लिखवायी थी तथा रेवासा के पंचों ने उन्हें एक सिंहासन भेंट किया था।

पांचवें यशःकीर्ति ने संवत् १८१७ में हिन्दी में हनुमच्चरित्र की रचना की थी जिसकी एक पाण्डुलिपि डूंगरपुर (राजस्थान) के कोटड़ियों के मन्दिर के शास्त्र भण्डार में संग्रहीत है।[1]

छठे यशःकीर्ति भट्टारक सकलकीर्ति की परम्परा में भ. रामकीर्ति के शिष्य हुए जिन्होंने धुलेव में सं. १८७५ में चारुदत्त श्रेष्ठिनो रास की रचना समाप्त की थी। इसकी एक पांडुलिपि दि. जैन संभवनाथ मन्दिर उदयपुर में संग्रहीत है। इनका भट्टारक काल संवत् १८६३ से प्रारम्भ होता है।

उक्त यशःकीर्ति नाम वाले भट्टारकों के अतिरिक्त और भी यशःकीर्ति हो सकते है। हमारे चरित्र नायक यशःकीर्ति १५-१६ वीं शताब्दि के विद्वान् थे। वे रामसेन की परम्परा में होने वाले भट्टारक थे जो भ. सोमकीर्ति के उत्तरवर्ती थे तथा सोमकीर्ति के पश्चात् भट्टारक पद पर अभिषिक्त हुये थे। ब्रह्म यशोधर ने नेमिनाथगीत में एवं बलिभद्र चुपई में इन्हें अपने गुरु के रूप में स्मरण किया है।[2]

यशःकीर्ति का समय १५०० से १५६० तक का माना जा सकता है। संवत् १५८५ में जब ब्रह्म यशोधर ने बलिभद्र चुपई की रचना की थी उस समय उनके पश्चात् भ. विजयसेन और हो चुके थे। यदि एक भट्टारक का काल २५ वर्ष का भी मान लिया जावे तो इस हिसाब से संवत् १५६० ही ठीक बैठता है।

---

1. राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रंथ सूची पंचम भाग—पृष्ठ सं. ४१६.

2. श्री यसकीरति सुपसाउलि ब्रह्म यशोधर भणिसार। नेमिनाथ गीत।

साहित्य सेवा---भट्टारक यशःकीर्ति की अभी तक कोई बड़ी रचना नहीं मिल सकी है। केवल २ पद, योगी वाणी एवं चौबीस तीर्थङ्कर भावना मिली है। जो लघु रचनायें हैं। दो पद उपदेशात्मक है जिनमें मनुष्य भव में अच्छे कार्य करने के लिये कहा गया है। गढ़, मठ, मन्दिर, घोड़ा हाथी कोई भी साथ जाने वाले नहीं है। केवल धर्म ही साथ जाने वाला है। दोनों ही पद भाषा एवं भाव की दृष्टि से अच्छे पद है।

योगी वाणी में ज्ञान एवं ध्यान में रहने वाले योगियों के चरणों की वंदना करने को कहा गया है। यशःकीर्त्ति ने कहा है कि जो शुद्ध ध्यान का धारण करता है उसी योगी के चरणों की वन्दना करनी चाहिये। योगी वाणी में आगे कहा गया है कि क्रोध, लोभ माया और मान इन सभी को अपने आप से दूर हटा तथा त्रस एवं स्थावर जीवों की रक्षा कर. काया से प्रेम मत कर तथा परीषह सहने के डर से चारित्र को मत छोड़ यही योगियों की वाणी का सार है। योगी संयमी एवं संतोषी होते हैं अल्प आहारी एवं अल्प निद्रा लेने वाले होते हैं। योगियों की पहचान योगी ही कर सकते हैं। इस प्रकार योगी वाणी लघु कृति होने पर भी गूढ़ अर्थ को लिये हुये हैं।

चौबीस तीर्थङ्कर भावना में चौबीस तीर्थङ्कर गुणानुवाद है। तथा अन्त में कहा गया है कि जो नर नारी भाव पूर्वक इनका साधन करेगा गुणानुवाद गावेगा वही भव से पार होगा।

इस प्रकार यशःकीर्ति अपने समय के अच्छे कवि थे तथा अपने भक्तों को शुभ कार्य करने की प्रेरणा दिया करते थे।

यशःकीर्ति भट्टारक होते हुए भी अपने आपको मुनि लिखा करते थे इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वे संभवतः नग्न रहते हों। सोमकीर्ति भी अपने आपको आचार्य लिखना अधिक पसन्द करते थे इसलिये यशःकीर्त्ति ने अपने गुरु से आगे न बढ़ कर मुनि लिखने में संतोष धारण कर लिया।

(१)

राग सबाक

तडकि लागि जिम मेह फूटि।
अंजलि उदक जिम आउपुं छूटि।

---

1. श्री रामसेन अनुक्रमि हुआ, यमकीरति गुरु जाणि।
श्री विजयसेन पदि थापिया, महिमा मेर समाण।। १८६।।
तास शिष्य इम उच्चरि ब्रह्म यशोधर भेद। बलिभद्र चुपई

अथिर धन योवन नही कोए केरा ।
कांई लाई जीवडा करि फोकट फेरा ।। १ ।।
गढ मढ मंदिर घोड़ा रे हाथी ।
अंतकाल कोई नावि रे साथी । अथि ।। २ ।।
मानव भवह्नि अति रे दोहेलु ।
कर एक धर्म जिम पामि सोहेलु । अथि ।। ३ ।।
अह निशि हीडिकांइ हा हा हू तु ।
माया रे जाल कावंत माहि खूतु । अथि ।। ४ ।।
काया रे कुटंब सहू भाडूत जाणी ।
पंचि रे इंद्री मन विण करे आणी । अथि ।। ५ ।।
सीष सुणु सहू एहह्नि सारी ।
श्री यस.रे कीरति गुरु कहि रे विचारी । अथि ।। ६ ।।

(२)

राग आसावरी

मयण मोह माया मदि मातु ।
तु उपरि रमणी रंगि रातु ।
रे लक्ष्मी कारणि हीडि धातु ।
जीव जाणेस परिभम जातु ।
काया कारमीए घट काचु ।
जीव करि एक जिन धर्म साचु रे ।। काया का ।। १ ।।
अंति काल जाए सजीव नागु ।
आई विषयाचे रस लागु ।
लक्ष चुरासी भमी भमी भागु ।
आता काढ़ीले सिवागु रे ।। काया का ।। २ ।।
पुत्र परिवार अथिर सवि जाणी ।
अजीय कोइ नवि जाणि ।
श्री यशकीरति मुनिवर इम बोलि ।
अचीसध्या दोहथागि रे ।। काया का ।। ३ ।।

(३)

योगी वाणी

ज्ञान त्रिभुती ध्यान लंगोटा पंच महाव्रत पालि रे ।

मोटा तस योगी चे पाय प्रणमीजि ।

सुद्ध चिद्रूपनु ध्यान धरीजि, तस योगी चे पाय प्रणमीजि ।। १ ।।

आगम सींगी दह दिशि कंथा जिनमारग प्रकाशि रे पंथा

तस योगी० ।। २ ।।

क्रोध लोभ मद मछर टालि, थावर त्रस जीव षट काय पालि

तस योगी० ।। ३ ।।

काया योगिणा गु माया न मांडि, परीषह मुद्र चारित्र न छांडि

तस योगी० ।। ४ ।।

संयम संतोष काने मुद्रा, अल्प आहारनि अल्पच्छि निद्रा

तस योगी० ।। ५ ।।

योगीयतेजे योग ज जाणि, मनमां कड इंद्री वसि आणि

तस योगी० ।। ६ ।।

श्री यस रे कीर्ति गुरु योग वखाणि डाहु ते ये मन माहि आणि

तस योगी० ।। ७ ।।

इति योगी वाणी

(४)

चौबीस तीर्थंकर भावना

श्री रिषभनाथ जिन स्वामि नामि रे नव निधि मंदिर पामीइ रे ।

तीर्थंकर चुवीस पूजिइ रे स्वर्ग मोक्ष सुख पामीइ रे ।। तीर्थ ।। १ ।।

प्रणमु अजित जिणंद जिणि जीता रे क्रोध लोभ मनमथ घणा रे

।। तीर्थ ।। २ ।।

भव भय भंजन नाथ संभव रे गिरूइ स्वामी भेटीइ रे ।। तीर्थ ।। ३ ।।

अभिनंदन आनंद पूरि रे सेवक जन संपति घणी रे ।। तीर्थ ।। ४ ।।

सुमति सदा फल देव सिद मति रे दाता जुग माहि जाणीइ रे
॥ तीर्थ ॥ ५ ॥

पद्मप्रभ गुण ग्राम जपंता रे २ संकट सवि दूरि पुलि रे ॥ तीर्थ ॥ ६ ॥

श्री सुपास मनि आस भवीयण रे २ पूरि स्वामी मन तणी रे
॥ तीर्थ ॥ ६ ॥

चन्द्रप्रभ चन्द्रज्योति ध्याइ रे २ पाप तिमर दूरि हरि रे ॥ तीर्थ ॥ ८ ॥

पुष्पदंत शिशिवन्न समरि रे २ आठ कर्म दूरि करि रे ॥ तीर्थ ॥ ६ ॥

शीतलनाथ सुरिंद शीतल रे २ वाणी आतपनी गमि रे ॥ तीर्थ ॥ १० ॥

श्रेयांस श्रीदातार श्रीकर रे २ स्वामी भावि भेटीइ रे ॥ तीर्थ ॥ ११ ॥

वासुपूज्य मनि रंगि मन रंगि रे २ वासव इंद्रि पूजीउ रे
॥ तीर्थ ॥ १२ ॥

विमलनाथ जिनराउ निर्मल रे २ केवल ज्ञान भूषीउ रे ॥ तीर्थ ॥ १३ ॥

अनंतनाथ अनंत अनंत रे २ चतुष्टय करी भूषीउ रे ॥ तीर्थ ॥ १४ ॥

धर्मनाथ सुधर्म धरम रे २ दाता स्वामी पूजीइ रे ॥ तीर्थ ॥ १५ ॥

सांतिनाथ सुभ शांति नामि रे २ शिवसुख निश्चल पामीइ रे
॥ तीर्थ ॥ १६ ॥

कुंथनाथ सुरनाथ सुरवर रे नामि रे दुख दालिद्र सवि वामीइ रे
॥ तीर्थ ॥ १७ ॥

अर स्वामी जिनराउ अरि रिपु रे २ मयणगइ
जिणि गांजीउ रे ॥ तीर्थ ॥ १८ ॥

मल्लिनाथ प्रभु देव सेविइ रे २ मोक्ष पदारथ पामीइ रे ॥ तीर्थ ॥ १९ ॥

मुनिसुव्रत व्रत धार सुरव्रत रे २ मारग स्वामी दाखवि रे
॥ तीर्थ ॥ २० ॥

नमिनाथ सुर राइ सुरपति रे २ तीन भुवन सुर भेटीइ रे
॥ तीर्थ ॥ २१ ॥

नेमिनाथ बाल ब्रह्मचार बाल पणि २ संयम वरी रे ॥ तीर्थ ॥ २२ ॥

श्री पासनाथ जिन राउ अतिसय रे २

दीसि महीयल दीपतु रे ॥ तीर्थ ॥ २३ ॥

श्री महावीर जिनराव इंद्रि रे २ मेरु सिहर

महिमा कीउ रे ॥ तीर्थ ॥ २४ ॥

जे जपमि नर नारि भावि रे २ गुणगाइ स्वामी तणा रे ॥

ते पामि भव पार श्री यसकीरत्ति मुनिवर भणि रे ॥ २५ ॥

इति चौबीस तीर्थंकर भावना

ब्रह्म यशोधर

ब्रह्म यशोधर १६ वीं शताब्दि के कवि थे। भट्टारक सोमकीर्त्ति के शिष्य एवं भट्टारक यशःकीर्त्ति के प्रशिष्य भ० विजयसेन को इन्होंने अपना गुरु माना है जिससे यह स्पष्ट है कि इन्होंने दोनों का ही शासनकाल देखा था।[1] और यह भी संभव है कि इन्हें अपने प्रारम्भिक जीवन में भ० सोमकीर्त्ति के भी पास रहने का सुअवसर मिला हो क्योंकि कुछ पदों में इन्होंने सोमकीर्त्ति भट्टारक को भी अपने गुरु के रूप में स्मरण किया है।[2]

भट्टारक सोमकीर्त्ति की परम्परा के अतिरिक्त, इन्होंने भट्टारक सकलकीर्त्ति की आम्नाय में होने वाले भट्टारक विजयकीर्त्ति का भी गुरु के रूप में स्मरण किया है और अपने गुरु की प्रशंसा में एक गीत भी लिखा है।[3] इससे यह स्पष्ट है कि ब्रह्म यशोधर सभी भट्टारकों के पास जाया करते थे और उनके चरणों में बैठ कर साहित्य साधना किया करते थे।

जन्म

ब्रह्म यशोधर का जन्म कहां हुआ था। कौन इनके माता पिता थे, कितनी आयु में इन्होंने ब्रह्मचारी पद प्राप्त किया तथा कितने समय तक वे साहित्य साधना करते रहे इन प्रश्नों का उत्तर देना कठिन है क्योंकि उन्होंने अपनी कृतियों में इस सम्बन्ध में कोई प्रकाश नहीं डाला। साधु बनने के पश्चात् गृहस्थावस्था का सम्बन्ध बतलाना शास्त्र सम्मत नहीं माना जाता इसी दृष्टि से ब्रह्म यशोधर ने भी अपना कोई परिचय नहीं दिया। लेकिन अपनी दो रचनाओं में रचनाकाल दिया है जिनमें नेमिनाथ गीत में संवत् १५८१ एवं बलिभद्र चुपई में संवत् १५८५ दिया

---

1. श्री रामसेन अनुक्रमि हुआ, यसकीरति गुरु जाणि।
   श्री विजसेन पदि थापीया, महिमा मेर समान
   तास सष्य इम उच्चरि, ब्रह्म यशोधर जेह ।। १८७ ।।
2. श्री सोमकीर्त्ति गुरु पाट धराधर सोल कला जिमु चंद्र रे।
   ब्रह्म यशोधर इणी परि वीनवी श्री संघ करि आणंदु रे ।। ७ ।।
3. श्री काष्ठा संघ कुल तिलु रे, यती सिरोमणि सार।
   श्री विजयकीरति गिरुउ गणधर श्री संघ करि जयकार ।। ४ ।।

है। इसी संवत् १५८५ में इन्होंने गुटके में कुछ पाठों की लिपि भी की थी।

जिन भट्टारकों का इन्होंने अपनी रचनाओं में स्मरण किया है। उनके आधार पर ब्र० यशोधर का जन्म संवत् १५२० के आस पास हुआ होगा। इनके जन्म स्थान के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। किन्तु इन्होंने अपनी रचनाओं में वंसपालपुर (बांसवाड़ा) गिरिपुर (डूंगरपुर) एवं स्कंधनगर का उल्लेख किया है। इससे पता चलता है कि इनका बागड़ प्रदेश मुख्य स्थान था और इसलिये जन्म भी इसी प्रदेश के किसी ग्राम अथवा नगर में हुआ होगा।

ब्रह्म यशोधर के पूर्व ब्रह्म जिनदास हो चुके थे जिन्होंने राजस्थानी में विशाल साहित्य की सर्जना करके सबको चकित कर दिया था। ब्र० यशोधर भी उन्हीं के पद चिह्नों पर चलने वाले साधु थे। यही कारण है कि उन्होंने जीवन के अन्तिम क्षण तक साहित्य देवता को अपने आपको समर्पित रखा।

शिक्षा

ब्रह्म यशोधर ने सर्व प्रथम भ० सोमकीर्ति के पास एवं उनके पश्चात् भ० यशःकीर्ति के पास शिक्षा प्राप्त की थी। संस्कृत एवं राजस्थानी भाषा पर अधिकार प्राप्त था। सर्व प्रथम इन्होंने ग्रन्थों की प्रतिलिपि करने का कार्य प्रारम्भ किया। इनकी लिपि बहुत सुन्दर थी। छोटे एवं गोल आकार वाले अक्षर लिखना इन्हें बहुत प्रिय था। इनके स्वयं के द्वारा लिखे हुये गुटके में पाठों का संग्रह मिलता है जैसे इनके अक्षर वैसा ही इनका निर्मल स्वभाव था।

विहार

कविवर ब्र० यशोधर अधिकांश समय भट्टारकों के साथ रहते थे या फिर उनकी गादी में रह कर अध्ययन एवं लेखन किया करते थे। स्वतन्त्र रूप से विहार नहीं होता था वैसे इनका अधिकांश समय साहित्य निर्माण में व्यतीत होता था।

रचनायें

कवि की अब तक निम्न रचनायें उपलब्ध हो चुकी हैं।

1. नेमिनाथ गीत—(रचना काल सं० १५८१)

---

1. संवत पनर एकासीइ जी वंसपाल पुर सार। नेमिनाथ गीत
2. गिरिपुर स्वामीय मंडणु श्री संघ पूरवि आस रे॥ मल्लिनाथगीत
3. सवत पनर पञ्चासीइ स्कध नयर मझारि
भवणि अजित जिनवर तणि, ए गुण गाया सार॥ १८२ वलिभद्र चुपई

2. बलिभद्र चुपई (रचना सं० १५८५)
3. विजयकीर्त्ति गीत
4. वासुपूज्य गीत
5. वैराग्य गीत
6. नेमिनाथ गीत
7. ,,
8. मल्लिनाथ गीत
9. पद संख्या १८

उक्त रचनाओं का संक्षिप्त परिचय निम्न प्रकार है--

१. नेमिनाथ गीत

कवि की संवतोल्लेख वाली दो रचनाओं में से नेमिनाथ गीत प्रथम रचना है जिसका रचना काल सं० १५८१ है। रचना स्थान बंसपालपुर (बांसवाडा) है। प्रस्तुत गीत में २८ अन्तरे हैं जिनमें २२ वें तीर्थंकर नेमिनाथ की एक झलक मात्र प्रस्तुत की गयी है। गीत में राजुल नेमिनाथ को सम्बोधित करके अपनी वेदना व्यक्त करती हैं और जब समझाने पर भी नेमि वापिस नहीं लौटते हैं तो स्वयं भी दीक्षा ले लेती हैं।

नेमिकुमार भड सांचरया जी प्रलुगा लहिर मझारि।
पंच महाव्रत आदरयां जी, राल्यु सवि सिरणगार।
हे राजिल मम करि मोह प्रयाण मोह हुइ परम नीहाण रे राजोल।

प्रस्तुत कृति की अपूर्ण प्रति गुटके में संग्रहीत है। केवल अन्तिम कुछ पद्य उपलब्ध होते हैं। २७ वां पद्य निम्न प्रकार है—

ब्रह्म यशोधर इम कहि जी भणसि जे नर नारि।
स्वर्ग तणां सुख भोगवी जी लहिसि मुगति दुयार। हो स्वामी।

२. बलिभद्र चौपई—यह कवि की अब तक उपलब्ध रचनाओं में सबसे बड़ी रचना है। इसमें १८६ पद्य हैं जो विभिन्न ढाल, दूहा एवं चौपई आदि छन्दों में विभक्त हैं। कवि ने इसे सम्वत् १५८५ में स्कन्ध नगर के अजितनाथ के मन्दिर में सम्पूर्ण[1] किया था।

---

१. संवत पनर पच्यासीइ, स्कन्ध नगर मझारि।
भवंणि अजित जिनवर तणी, ए गुण गाया सारि॥ १८८॥

रचना में श्रीकृष्ण जी के भाई बलिभद्र के चरित्र का वर्णन है। कथा का संक्षिप्त सार निम्न प्रकार है—

द्वारिका पर श्रीकृष्णजी का राज्य था। बलिभद्र उनके बड़े भाई थे। एक बार २२ वें तीर्थंकर नेमिनाथ का उधर विहार हुआ। नगरी के नरनारियों के साथ वे दोनों भी दर्शनार्थ पधारे। बलिभद्र ने नेमिनाथ से जब द्वारिका के भविष्य के बारे में पूछा तो उन्होंने १२ वर्ष बाद द्वीपायन ऋषि द्वारा द्वारिका दहन की भविष्यवाणी की। १२ वर्ष बाद ऐसा ही हुआ। श्रीकृष्ण एवं बलराम दोनों जंगल में चले गये और जब श्रीकृष्ण जी सो रहे थे तो जरदकुमार ने हरिण के धोखे में इन पर बाण चला दिया जिससे वहीं उनकी मृत्यु हो गई। जरदकुमार को जब वस्तुस्थिति का पता लगा तो वह बहुत पछताये लेकिन फिर क्या होना था। बलिभद्र श्रीकृष्ण जी को अकेला छोड़कर पानी लेने गये थे, वापिस आने पर जब उन्हें मालूम हुआ तो वे बड़े शोकाकुल हुए एवं रोने लगे और मोह से छह मास तक अपने भाई के मृत शरीर को लिए घूमते रहे। अन्त में एक मुनि ने जब उन्हें संसार की असारता बतलाई तो उन्हें भी वैराग्य हो गया और अन्त में तपस्या करते हुए निर्वाण प्राप्त किया। चौपई की सम्पूर्ण कथा जैन पुराणों के आधार पर निबद्ध है।

चौपई प्रारम्भ करने के पूर्व सर्व प्रथम कवि ने अपनी लघुता प्रगट करते हुए लिखा है कि न तो उसे व्याकरण एवं छंद का बोध है और न उचित रूप से अक्षर ज्ञान ही है। गीत एवं कवित्त कुछ आते नहीं है लेकिन वह जो कुछ लिख रहा है वह सब गुरु के आशीर्वाद का फल है –

न लहुं व्याकरण न लहुं छन्द, न लहुं अक्षर न लहुं बिंद।
हुं मूरख मानव मति नहीं, गीत कवित्त नवि जाणुं कही ।।२।।

दोहा

सूरज उग्यु तम हरि, जिम जलहर वूठि तांप।
गुरु वयणे पुण्य पामीइ, झडि भवंतर पाप ।।५।।
मूरख परिण जे मति लहि, करि कवि मतिसार।
ब्रह्म यशोधर इम कहि, ते सहि गुरु उपगार ।।६।।

उस समय द्वारिका वैभव पूर्ण नगरी थी। इसका विस्तार १२ योजन प्रमाण था। वहां सात से तेरह मंजिल के महल थे। बड़े-बड़े करोड़पति सेठ वहां निवास करते थे। श्रीकृष्ण जी याचकों को दान देने में हर्षित होते थे, अभिमान नहीं

करते थे। वहां चारों ओर वीर एवं योद्धा दिखलाई देते थे। सज्जनों के अतिरि दुर्जनों का तो वहां नाम भी नहीं था।

कवि ने द्वारिका का वर्णन निम्न प्रकार किया है—

नयर द्वारिका देश मझार, जाणे इन्द्रपुरी अवतार।
बार जोयण ते फिरतु वसि, ते देखी जन मन उलसि ।।११।।
नव खण तेर खणा प्रासाद, टह श्रेणि सम लागु वाद।
कोटीधज तिहां कहीइ घणा, रत्न हेम हीरे नहीं मणा ।।१२।।
याचक जननि देइ दान, न हीयडि हरष नहीं अभिमान।
सूर सुभट एक दीसि घणा, सज्जन लोक नही दुर्जणा ।।१३।।
जिण भवने धज वड भरहरि, शिखर स्वर्ग सुंवातज करि।
हेम मूरति पोढी परिमाण, एके रत्न अमूलिक जाण ।।१४।।

द्वारिका नगरी के राजा थे श्रीकृष्ण जी जो पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान सुन्दर थे। वे छप्पन करोड़ यादवों के अधिपति थे। इन्हीं के बड़े भाई थे बलिभद्र। स्वर्ण के समान जिनका शरीर था। जो हाथी रूपी शत्रुओं के लिए सिंह थे तथा हल जिनका आयुध था। रेवती उनकी पटरानी थी। बड़े-बड़े वीर योद्धा उनके सेवक थे। वे गुणों के भण्डार तथा सत्यव्रती एवं निर्मल-चरित्र के धारण करने वाले थे—

दूहा

तस बंधव अति रूयडु रोहिण जेहनी मात।
बलिभद्र नामि जाणयो, वसुदेव तेहनु तात ।।२८।।
कनक वर्ण सोहि जिसु, सत्य शील तनुवास।
हेमधार वरसि सदा, ईहण पूरि आस ।।२९।।
अरीयण मद गज केशरी, हल आयुध करिसार।
सुहड सुभट सेवि सदा, गिरुउ गुणह भंडार ।।३०।।
पटराणी तस रेवती, सील सिरोमणि देह।
धर्म धुरा भालि सदा, पतिसुं अविहड नेह ।।३१।।

उन दिनों नेमिनाथ का विहार भी उधर ही हुआ। द्वारिका की प्रजा ने नेमिनाथ का खूब स्वागत किया। भगवान श्रीकृष्ण, बलभद्र आदि सभी उनकी वंदना के लिए उनकी सभागृह में पहुंचे। बलभद्र ने जब द्वारिका नगरी के बारे में प्रश्न पूछा तो नेमिनाथ ने उसका निम्न शब्दों में उत्तर दिया—

दूहा—सारी वाणी संभली, बोलि नेमि रसाल ।
पूरब भवि अक्षर लखा, ते किम थाइ आल ।।७१।।

चुपइ—द्वीपायन मुनिवर जे सार, ते करसि नगरी संघार ।
मद्य भांड जे नामि कही, तेह थकी बली बलसि सही ।।७२।।
पौरलोक सरि ऊपरि जिसि, ते संघन नीकलसु तिसि ।
तह्माह सहोदर जरा कुमार, ते हनि हाथि मरि मोरार ।।७३।।
बार बरस पूरि जे तलि, ए कारण होसि ते सलि ।
जिणवर वाणी अमीय समान, सुणीय कुमर तब चाल्यु रानि ।।७४।।

बारह वर्ष पश्चात् वही समय आया । कुछ यादवकुमार अपेय पदार्थ पीने से उन्मत्त हो गए । वे नाना प्रकार की क्रियायें करने लगे । द्वीपायन मुनि को जो बन में तपस्या कर रहे थे उन्हें देखकर वे चिढ़ाने लगे ।

तिणि अवसरि ते पीधु नीर, विकल रूप ते थया शरीर ।
ते परवत था पाछावलि, एकि विसि एक धरणी ढलि ।।८२।।
एक नाचि एक गाइ गीत, एक रोइ एक हरषि चित्त ।
एक नासि एक उडलि धरि, एक सुइ एक क्रीडा करि ।।८३।।
ईणि परि नगरी आवि जिसि, द्विपायन मुनि दीठु तिसि ।
कोप करीनि नाखि ताम, देर गालबली लेइ नाम ।।८४।।

द्वीपायन ऋषि के शाप से द्वारिका जलने लगी और श्रीकृष्णजी एवं बलराम अपनी रक्षा का कोई अन्य उपाय न देखकर बन की ओर चले गये । वन में श्रीकृष्ण की प्यास बुझाने के लिए बलिभद्र जल लेने चले गये । पीछे से जरदकुमार ने सोते हुये श्रीकृष्ण को हरिण समझ कर बाण मार दिया । लेकिन जब जरदकुमार को मालूम हुआ तो वे पश्चाताप की अग्नि से जलने लगे । भगवान श्रीकृष्ण ने उन्हें कुछ नहीं कहा और कर्मों की विडम्बना से कौन बच सकता है यही कहकर धैर्य धारण करने को कहा--

कहि कृष्ण सुणि जराकुमार, मूड पणि मम बोलि गमार ।
संसार तणी गति विषमी होइ, हीयडा माहि विचारी जोइ ।।११२।।
करमि रामचन्द बनिगउ, करमि सीता हरणज भउ ।
करमि रावण राज जटिली, करमि लंक बिभीषण फली ।।११३।।

हरचन्द राजा साहस धीर, करमि अधमि घरि आण्यु नीर।
करमि नल नर चूकू राज, दमयन्ती वनि कीधी त्याज। ११४॥

इतने में वहीं पर बलिभद्र आ गये और श्री कृष्ण जी को सोता हुआ जानकर जगाने लगे। लेकिन वे तब तक प्राणहीन हो चुके थे। यह जानकर बलिभद्र रोने लगे तथा अनेक सम्बोधनों से अपना दुःख प्रकट करने लगे। कवि ने इसका बहुत ही मार्मिक शब्दों में वर्णन किया है।

जल विण किम रहि माछलु, तिम तुझ विणु बंध।
विरीड वनखिन सासीउ, साल्या असला रे संघ ॥१३०॥

छन्द

यद्यपि रचना में मुख्यतः चुपई एवं दोहा छन्द है लेकिन वस्तु बंध छन्द, एवं दो ढालों का भी प्रयोग हुआ है। जैसे कवि को दोहा एवं चौपई छन्द में काव्य रचना में अभ्यस्त था। १६ वीं शताब्दि में दोहा एवं चौपई दोनों ही छन्द अत्यधिक लोकप्रिय हो चुके थे तथा पाठक भी इन्हीं छन्दों को पसन्द करते थे।

भाषा

बलिभद्र चुपई राजस्थानी भाषा की कृति है। यद्यपि कवि का गुजरात से अधिक सम्बन्ध था लेकिन राजस्थानी भाषा से उसे अधिक लगाव था। फूल्या (४२) रयण (रत्न) सिंघासण (सिंहासन) ३६, आव्या (आया ४८) मानथंभ (मानस्तंभ ५६) खंच्यु (खेंचा १०६) जाग्यु (जगना १२६) जैसे शब्दों को बहुलता से देखा जा सकता है।

बलिभद्र चुपई के कुछ वर्णन तो बहुत ही अच्छे हुए हैं। भगवान नेमिनाथ का समवसरण क्या आया मानों चारों ओर धन धान्य, हरियाली, सघन वृक्ष, बसंत जैसी बहार ही आ गयी इसी का एक वर्णन कवि के शब्दों में देखिये—

फूल्या वृक्ष फली घण लता अनेक रूप पंखी सेवता।
ठामि ठामि कोइल गहि गहि, मधु पल्लव केतकि महि महि ॥४२॥
जिणवर महिमा न लहुं पार, रतु छोडी तरु फलीया सार।
मांग्या मेघ ते वरसि सदा, दुर्भख्य वात न सोयणे कदा ॥४३॥

जैन दर्शन में कर्म सिद्धान्त पर गहन विवेचन मिलता है। कवि ने भी कर्मों की भाषा का सोदाहरण वर्णन करके कर्मों के प्रभाव की पुष्टि की है। इसी पर आधारित एक पाठ देखिये—

करमि ऋद्धि वृधि पामि बहू एके निरधन करमि सहूं
करमि करि ते निश्चि होइ करम कारण नवि छूटी कोइ ।।११३।।
हरचंद राजा साहस धरि, करमि अधम घरि अण्यु नीर ।
करमि नल नर चूकु राज, दमयंती बनि कीधी त्याज ।।११४।।

लेकिन धर्म की महिमा कम नहीं है। जिसने भी धर्म को जीवन म उतारा उसी का जीवन सफल हो गया। बलिभद्र चुपई में कवि ने धर्म के महात्म्य का वर्णन करते हुए लिखा है—

धरमि धन बहू संपजि, राजा रमण भंडार ।
धरमि जस महीयल फिरि, उत्तम कुल अवतार ।।१८२।।
धरमि मन चीन्त्यु फलि, दूर देशांतर जेहु ।
हय गज रथ फिरि नित रहि, करी रमणी संग रहु ।।१८३।।
धरमि नर महिमा हुइ, धरमि लहीइ ज्ञान ।
धरमि सुर सेवा करि, धरमि दीजि दान ।।१८४।।
धर्म तणा गुण बहू अछि, ते बोल्या किम जाइ ।
चुगि फेरु टालसि, जो धुरि धर्म दयाल ।।१८५।।

3. विजयकीर्त्ति गीत

विजयकीर्त्ति भट्टारक थे तथा भट्टारक ज्ञानभूषण के शिष्य एवं भट्टारक शुभचन्द्र के गुरु थे। ये भट्टारक सकलकीर्त्ति की परम्परा के साधु थे। उनके महान् व्यक्तित्व के कारण परवर्ती कितने ही भट्टारकों एवं कवियों ने उनकी प्रशंसा की है। ब्र० कामराज ने उन्हें सुप्रचारक के रूप में स्मरण किया है।[1] भ० सकलभूषण ने यशस्वी महामना, मोक्ष सुखाभिलाषी आदि विशेषणों से उनकी कीर्त्ति गायी है।[2] भ० शुभचन्द्र भी उन्हें यतिराज, पुण्यमूर्त्ति आदि विशेषणों से अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की है। भट्टारक देवेन्द्र कीर्त्ति[3] एवं लक्ष्मीचन्द चांदवाड[4] ने भी अपनी कृतियों में विजयकीर्त्ति का गुणानुवाद किया है।

---

1. विजयकीर्त्तियो ऽभवन भट्टारकोपदेशिनः। जयकुमार पुराण
2. भट्टारकः श्रीविजयादिकीर्त्तिस्तदीयपट्टे वर लब्धकीर्त्तिः।
   महामना मोक्षसुखाभिलाषी बभूव जैनावनी प्राच्यं पादः। उपदेश रत्नमाला
3. विजयकीर्त्ति तस पटधारी, प्रगटया पूरण सुखकार रे। प्रद्युम्न प्रबन्ध
4. तिन पट विजयकीर्त्ति जैवंत, गुरु अन्यमति परवत समान। श्रेणिक चरित्र

ब्र० यशोधर ने भी भ० विजयकीर्ति की प्रशंसा में एक पूरा गीत लिखा है। जिससे पता चलता है कि उनकी विजयकीर्ति के प्रभावक जीवन में पूर्ण श्रद्धा थी। यशोधर ने लिखा है कि बचपन में ही विजयकीर्ति ने संयम धारण कर लिया तथा सकलकीर्ति की वाणी को सुन कर प्रसन्नता से भर गये थे। संसार को असार जानकर पंच महाव्रत स्वीकार किये तथा विश्वसेन मुनि के पास जाकर दीक्षा ले ली। वे बाईस परिषहों के सहने लगे।

विजयकीर्ति की माता का नाम ... था। विजयकीर्ति के प्रभाव के सामने अनेक राजा महाराजा नत मस्तक थे जिसमें मालवा, मेवाड़, गुजरात, सौराष्ट्र एवं सिंध के अनेक राजा थे। दक्षिण में महाराष्ट्र, कोंकण के प्रदेश थे। वे ३६ लक्षणों वाले थे तथा ७२ भाषाओं के जानकार थे। वे काष्ठा संघ के यति शिरोमणि थे।

आगम वेद सिद्धान्त व्याकण भाषि अवीयण सार।
नाटक छंद प्रमाण बूझि नित जपि नवकार ॥
श्री काष्टसंघ कुल तिलु रे यती सरोमणि सार।
श्री विजयकीरति गिरुड गणधर श्री संघ करि जयकार ॥४॥

४ वासुपूज्य गीत

बंसपाल (बांसवाड़ा) नगर में वासुपूज्य स्वामी का जिन मन्दिर था। ब्र. यशोधर की उनके प्रति अतीव श्रद्धा थी इसीलिये सभी समाज से वासुपूज्य स्वामी के दर्शन, पूजा एवं स्तवन करने के लिये आह्वान किया है। कवि ने लिखा है कि वासुपूज्य स्वामी के आगे भाव विभोर होकर अष्टमकारी पूजा करने के लिये कहा है तथा निम्न प्रकार पूजा करने का फल बतलाया है –

अष्ट प्रकारी जिनवर पूज करेसि रे।
भावि भक्ति लक्ष्मी सक्ति संसार तेरसि रे ॥
नयर बंशवाला मंडण तु स्वामी रे
ब्रह्म यशोधर असि घणु वलिवि
देयो तह्म गुणग्राम रे ॥१२॥

गीत की राग कामोद धन्यासी है जिसमें १२ पद्य है।

५. वैराग्य गीत

यह गीत राग धन्यासी में लिपि बद्ध है। इस गीत में मनुष्य जन्म की

दुर्लभता का वर्णन करते हुए विभिन्न प्रकार के पापों से बचने के लिये प्रेरणा दी गयी है। गीत बहुत छोटा है।

६. नेमिनाथ गीत

राजुल नेमि के जीवन पर यह कवि का दूसरा गीत है। इस गीत में राजुल नेमिनाथ को अपने घर बुलाती हुई उनकी बाट जोह रही है। गीत छोटा सा है जिसमें केवल ५ पद्य हैं। गीत की प्रथम पंक्ति निम्न प्रकार है—

नेम जी आवु न घरे घरे।
वाटडीयां जोइ सिवगामा (ला) डली रे ।।

७. नेमिनाथ गीत

यह कवि का नेमिनाथ के जीवन पर तीसरा गीत है। पहले गीतों से यह गीत बड़ा है और वह ६६ पद्यों में पूर्ण होता है। इसमें नेमिनाथ के विवाह की घटना का प्रमुख वर्णन है। वर्णन सुन्दर, सरस एवं प्रवाह युक्त है। राजुलि–नेमि के विवाह की तैय्यारियां जोर शोर से होने लगी। सभी राजा महाराजाओं को विवाह में सम्मिलित होने के लिये निमन्त्रण पत्र भेजे गये। उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम आदि सभी दिशाओं के राजागण उस बारात में सम्मिलित हुये। इसी वर्णन को कवि के शब्दों में पढ़िये:—

कुंकम पत्री पाठवी रे, गुज्र आवि अतिसार।
दक्षिण मरहठा गालवी रे, कुंकण कन्नड राउ ।।२२।।
गूजर मंडल सोरठीयारे, सिन्धु सबाल देश।
गोपाचल नु राजाउरे, ढीली आदि नरेस ।। २३ ।।
मलवारी मारुयाडना रे, खुरसाणी सवि ईस।
बागडी उदल मजकरी रे, लाड गउडनाधीस ।। २४ ।।

कवि ने उक्त पद्यों में दिल्ली को 'ढीली' लिखा है। १२ वीं शताब्दी के अपभ्रंश के महाकवि श्रीधर ने भी अपने पासचरिउ में दिल्ली को 'ढिल्ली' शब्द से सम्बोधित किया था।[1]

बारातियों के लिये विविध फल मंगाये गये तथा अनेक पकवान एवं मिठाइयां

१. विक्कमणरिंद सुपसिद्ध कालि, ढिल्ली पट्टणि धण कण विसालि।
सनवासी एयारह सएहिं, परिवाडिए वरिसह परिगएहिं ।।

बनवायी गई। कवि ने जिन व्यन्जनों के नाम गिनाये हैं उनमें अधिकांश राजस्थानी मिष्ठान हैं कवि के शब्दों में इसका आस्वादन कीजिये—

पकवान नीपजि नित नवां रे, मांडी मुरकी सेव।
खाजा खाजडली दही थरां रे, फेंदर घेवर हेव ।। २५ ।।
मोतीया लाडू मूंग तणा रे, सेवइया अतिसार।
काकरी पापड़ सूधीयारे, साकिरि मिश्रित सार ।। २६ ।।
सालीया तंदुल रूपडारे, उज्जल अखंड अपार।
मूंग मंडोरा अति भला रे, घृत अखंडी धार ।। २७ ।।

राजुल का सौन्दर्य अवर्णनीय था। पांवो के नुपूर मधुर शब्द कर रहे थे वे ऐसे लगते थे मानों नेमिनाथ को ही बुला रहे हों। कटि पर सुशोभित 'कनकती' चमक रही थी। अंगुलियों में रत्नजटित अंगूठी, हाथों में रत्नों की ही चूड़ियां तथा गले में नवलख हार सुशोभित था। कानों में झूमके लटक रहे थे। नयन कजरारे थे। हीरों से जड़ी हुई ललाट पर राखड़ी (बोरला) चमक रही थी। इसकी वेणी दण्ड उतार (उपर से मोटी तथा नीचे से पतली) थी इन सब आभूषणों से वह ऐसी लगती थी कि मानों कहीं कामदेव के धनुष को तोड़ने जा रही हो—

पायेय नेउर रणझणिरे, घूघरी नु घमकार।
कटियंत्र सोहि रूडी मेखला रे झूमणुं झलक सार ।।४३।।
रत्नजड़ित रूड़ी मुद्रकारे, करियल चूड़ीतार।
बांहि बिंटा रूड़ा बहिरखारे, हीयडोलि नवलखहार ।।४४।।
कोटीय टोडर रूयडुं रे, श्रवणे झबकि झाल।
नलविट टीलुं तप तपि रे, खीटलि लटकि चालि ।।४५।।
वांकीय भमरि सोहामणी रे, नयले काजल रेह।
कामिधनु जाणु तोडीवरे, नर मन पाड़वा एह ।। ४६ ।।
हीरे जड़ी रूड़ी राखड़ी, वेणी दंड उतार।
मयणि पन्नग जाणे पासीउरे, गोफणु लहि किसार ।।४७।।

नेमिकुमार ६ खण के रथ में विराजमान थे जो रत्न जड़ित था तथा जिसमें हांसना जाति के घोड़े जुते हुये थे। नेमिकुमार के कानों में कुण्डल एवं मस्तक पर छत्र सुशोभित थे। वे श्याम वर्ण के थे तथा राजुल की सहेलियां उनकी ओर संकेत करके कह रही थी यही उसके पति हैं ?

नवखणु रथ सोभ्रणमि रे, रयण मंडित सुविसाल ।
हांसला अश्व जिणि जोतर्‌या रे, तह लहधिजाय अपार ।। ५१ ।।
कानेव कुंडल तपि तपि रे, मस्तिक छत्र सोहंनि ।
सामला अरण सोहाम णुरे, सोइ राजिल तोरू कंत ।। ५२ ।।

इस प्रकार रचना में घटनाओं का अच्छा वर्णन किया गया है। अन्त में कवि ने अपने गुरु को स्मरण करते हुए रचना की समाप्ति की है।

श्री यशकीर्ति सुपसाउलि, ब्रह्म यशोधर भणिसार ।
चलण न छोडउ स्वामी तणा, मुझ भवना दुःख निवार ।। ६८ ।।
भणसि जिनेसर सांभलि रे, भ- भ- े अवतार
नव निधि तस घरि ऊपजि रे, ते तरसि रे संसार ।। ६६ ।।

भाषा-गीत की भाषा राजस्थानी है। कुछ शब्दों का प्रयोग देखिये---

गासुं-गाऊंगा (१) कांइ करू-क्या करू (१ नीकल्या रे-निकला (३) तह्या, म्हा (८) तिहां (२१) नेउर (४३) आपणा (५३) तोरू (तुम्हारा) मोरू (मेरा) (५०) उतावलु (१३) पाठवी (२२)

छन्द--सम्पूर्ण गीत गुडी (गोडी) राग में निबद्ध है।

८. मल्लिनाथ गीत

डूंगरपुर स्थित दि. जैन मन्दिर में मल्लिनाथ स्वामी की प्रतिमा के स्तवन के रूप में प्रस्तुत गीत लिखा गया है। इसमें उनके पंच कल्याणकों की महिमा का वर्णन किया गया है। गीत में ६ अन्तरे हैं। अन्तिम पाठ निम्न प्रकार है—

ब्रह्म यशोधर वनिविइं हवि तहम तणुदास रे
गिरिपुर स्वामीय मंडणु श्री संघ पूरवि आस रे ।।४।।

६. पद साहित्य

ब्रह्म यशोधर ने अब तक १८ पद मिल चुके हैं जो विभिन्न राग-रागनियों में निबद्ध है। कवि ने अधिकांश पदों में नेमि राजुल का वर्णन किया है। कहीं राजुल की विरह-वेदना है तो किसी में तोरण द्वार से लौटने की घटना पर क्षोभ प्रगट किया गया है। ऐसा लगता है कि ब्रह्म यशोधर भी भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमदचन्द्र के समान नेमि राजुल कथानक से अत्यधिक प्रभावित थे और उनके विविध रूप पाठकों के सामने रखना चाहते थे। कुछ पदों में भगवान पार्श्वनाथ की स्तुति की गयी है। एक पद अपने गुरु यशःकीर्ति की प्रशंसा में लिखा गया है।

१७ वीं एवं १८ वीं शताब्दियों अपने गुरु भट्टारकों का गुण गान करने की प्रथा थी। इन पदों में इतिहास ने कितने ही तथ्य छिपे हुए होते हैं।

राग सबाब में कवि ने कबीरदास के समान ही अपने में संसार की गहनता पर चर्चा की है तथा चौरासी लाख योनियों में यह प्राणी अनेक पंथों एवं धर्मों में भटकता रहता है लेकिन उसे तारनहार कोई नहीं मिलता। इसलिये जिनदेव ही एक मात्र तारनहार है इन्हीं तथ्यों पर आधारित यह पद्य लिखा गया है। पद बहुत छोटा है लेकिन सार गर्भित है।

इस प्रकार ब्रह्म यशोधर का सम्पूर्ण साहित्य अत्यधिक महत्वपूर्ण है। वे अपने समय के समर्थ कवि थे तथा समाज में अत्यधिक लोकप्रिय थे। अपनी छोटी-२ रचनाओं के माध्यम से वे पाठकों में अपनी कृतियों के पठन-पाठन में रुचि पैदा किया करते थे। उन्होंने सब से अधिक नेमि राजुल से सम्बन्धित कृतियां लिखी थीं फिर चाहे वे छोटी हो या बड़ी।

कवि ने अपना पूरा साहित्य राजस्थानी भाषा में लिखा है। राजस्थानी भाषा से उन्हें अधिक लगाव था और उनके पाठक भी इसी भाषा को पसन्द करते थे। वास्तव में उस शताब्दि में होने वाले अधिकांश जैन कवियों ने राजस्थानी भाषा में अपनी रचना निबद्ध करने को प्राथमिकता दी थी।

———

बलिभद्र चुपई

प्रणमी जिनवर जिनवर रिसह,
जे नाम जुगला धर्म्म निवारणु ।
संसार सागर तरण तारण
सारद सामिण वली नवु सुमति सारहुं वेग मागुं ।
कुड कुबुधि सवि परिहरु हंस वाहणि तुम्ह पाय लागुं ।
भाव भक्ति पूजा रची सहि गुरु चलण नमेस ।
कर जोडी कवियण कहतु हलधर चरित्र कहेस । १ ।

चुपई

न लहुं व्याकरण न लहु छंद न लहुं अक्षर न लहुं बिंद ।
हूं मूरख मानव मति नही । गीत कवित्त नवि जाणु कही ।। २ ।।
कोइल समरि जिम सहिकार । बप्पहीउ समरि जल धार ।
चक्रवाक रवि समरि जेम । गुरु वाणी हूं समरु तेम ।। ३ ।।
गुरु वचने अक्षर पामीइ । गुरु वचने पातिक वामीइ ।
गुरु वचने मन लहीइ ज्ञान । गुरु वचने घरि नवह निधान ।। ४ ।।

दूहा

सूरज उग्यु तम हरि, जिम जलहर वूठि ताप ।
गुरु वचणें पुण्य पामीइ, भाजि भवंतर पाप ।। ५ ।।
मूरख परिण जे मति लहि, करि कवित्त अति सार ।
ब्रह्म यशोधर इम कहि ते सहि गुरु उपगार ।। ६ ।।
सो ए गुरु वाणी मनि धरी, कवीयणनि आधार ।
रास कहुं रलीयामणु, अक्षर रयण भंडार ।। ७ ।।

चुपई

अवनीय जंबूदीप वखाण । भरह क्षेत्र तस भितर जाणि ।

सोरठ देश अपूरव कही, अवर देश कोइ ऊपम नही ॥ ८ ॥
नयर अपूरव दीसि घणा, कंचण रयण तणी नही मणा।
वनि वनि वृक्ष तणु नही पार, रायण पुग अनि सहिकार ॥ ९ ॥
नागबेल खजूरी एल, दाडिम द्राक्ष मंडप घणु केल।
वाव सरोवर कूप अपार, घरि घरि मंडया सनूकार ॥ १० ॥

द्वारिका नगरी वर्णन

नगर द्वारिका देश मझारि, जाणे इन्द्रपुरी अवतार।
बार जोयण ते फिरतु वसि, ते देखी जन मन उलसि ॥ ११ ॥
नव खण तेर खणा प्रासाद, हट्ट श्रेणी सम लागु वाद।
कोटीधज तिहां कहीइ घणा, रत्न हेम हीरे नही मणा ॥ १२ ॥
माचक जननि देई मान, हीयडि हरष नही अभिमान।
सूर सुभट एक दीसि घणा, सज्जन लोक नही दुर्जणा ॥ १३ ॥
जिण भवने धज बहु फरिहरि, शिषर स्वर्ग सु वातज करि।
हेममूरति पोढी परिमाण, एके रत्न अमूलिक जाणि ॥ १४ ॥
जिन चैत्याले मंडी घणी, दीठिया पथवारी बणी।
धर्मवंत लोके घणा पूर, दुःख दालिद्र तिहां नासि दूर ॥ १५ ॥
जिन मंदिर ते पूजा करि, भवह तणां पातिग परिहरि।
झालिर ढोल भेर भर हुरि, वेणां वंस मधुर सरकरि ॥ १६ ॥
नाचि खेला अबला बाल, वा हकांसी मरुज बिसाल।
सरणाई रव सोहि घणा, धुलि पाप पूरव भव तणा ॥ १७ ॥
पुरी पाषि लगि रूह प्राकार, सोना सहित कोसी ससार।
च्यार पोल तोरण सह घडी, माणिक मोती हीरे जड़ी ॥ १८ ॥
समुद्र सरीषी षाई जाण, अभिनवी इन्द्रपुरी परिमाण।
उत्तम लोके पूरी खरी, इन्द्रादेशी धनपति करी ॥ १९ ॥

श्रीकृष्ण महिमा

तस पति सोई क्रिशन नरेंद, ग्रह गण माहि जिम पूनिमचंद।
सयहु परवत मेर गिरीस, छपन कोडि कुल कृष्ण अधीश ॥२०॥
बाल पणि मंडया सुर वार, अरघ, गोवर्द्धन करि तीणी वारि।
गोवत्स रख्या कारणि जेण, संख चक्र धनु साध्यां तेण ॥२१॥

काहनउ वेगि पंचालि गउ, कमल नालि वासिग नाथउ ।
एकि एकि पंथ सहस्र पंखडी, ते लेई आव्यु एकि घड़ी ।। २२ ।।
नाग सेज विसहर जिणी नउघु, दैत्य दाणव असुर सुं भउथ् ।
कंस मुष्ट चाणु रह काल' सोई मधसूदन नंद गोवाल ।।२३।।
दानि कल्पवृक्ष जे कही, वर्ण अट्ठारह पोषि सही ।
सूरपणि अरि जीता घणा, लेई दण्ड कीधां आपणा ।। २३/१ ।
रूपि मयण तणु अवतार, सोल सहस घाऊ घणि नारि ।
रुषमणि सुं पटराणी आठ, नयने मृग जीता वनि आठ ।। २४।।
रूपि रूयडी सीलि सती, पाप दूरकरि धरमि रती ।
देइ दान जिन पूजा सजि, कृष्ण रायनि अह निशि भजि ।।२५।।
सोनानी परिझलकि देह, दिन दिन वाधि नव नव देह ।
सोइ राणी सुं विलसी राज, अनोपम अवर नहीं को आज।।२६।।
माता मेगलछि घरि जास, हेषारव घणा घोड़ां लास ।
इणी परि वलभि अवनी भूप, अवर राइ नही जास सरूप ।२७।।

दूहा

बलिभद्र प्रशंसा

तस बंधव अति रूयडु, रोहिण जेहनी मात ।
बलिभद्र नामि जाणयो, वसुदेव तेहनु तात ।। २८ ।।
कनक वर्ण सोहि जिसु, सत्य शील तनु वास ।
हेम धार वरसि सदा, ईहण पूरि आस ।। २९ ।।
अरीयण मदगज केशरी, हल आयुध करि सार ।
सुहड सुभट सेवि सदा, गिरूउ गुणह भण्डार ।। ३० ।।
पटराणी तस रेवती, सील सरोमणि देह ।
धर्मधुरा भालि सदा, पति सुं अविहड नेह ।। ३१ ।।
सुख सागर झीलि सदा, जासु न लहि काल ।
बे बंधव इणी परि रमि, करि प्रजा प्रतिपाल ।। ३२ ।।

चुपई

गिरिवर गिरूह श्री गिरिनार- समोसरचा तिहा नेमिकुमार ।
समवसरण सोहि मंझारण, रच्यु धनदत्ते कहं वखाण ।। ३३ ।।

समवकरण का प्रभाव

वाखिल फिरता त्रण प्राकार, च्यार पोल सोवण घणसार ।
ठामि ठामि हीरा झलकंति, माणिक रयण पदारथ पंति ॥३४॥
मानथंभ धजा फरिहरि, स्वर्ग समी जाणे स्पृद्धा करि ।
तेहि भवीयण देइ मान, एतु कहीइ पुण्य प्रधान ॥ ३५ ॥
आव्या सुरपति देव बहुत, करि भक्ति वासव संयुत ।
रयण सिंघासण मांड्यू चंग, बिठा जिनवर अनोपम अंगि ॥३६॥
एके छत्रधरि सिर देव, चुसठि चामर ढालि देव ।
भेरी रव घंटा एक घणा, सहिजी इन्द्र करि लुंछणा ॥ ३७ ॥
गुहिरि दुन्दुभि वंश विसाल, नाचि अपछरा बहु विधि ताल ।
वांइ वेणा एक गावि गीत, इणी परिरञ्जि जिणवर चित ॥३८॥
गढ भितरङ्कि कोठा बार, नाट साल वेदी वर सार ।
मोती तणा चुक परि गरि, सची इन्द्र जिन पूजा करि ॥ ३९ ॥
चिहुँ दिशि च्यार सरोवर भला, निरमल नीर रमि हंसला ।
हाटक हीरे बंधी पाल, कमलणि कमलणि मधुकर माल ॥४०॥
बाग चहुँमुख बहु आराम, पीइ नीर जिन लेइ विश्राम ।
खेचर सुर नर क्रीड़ा करि, मुगति तणी पयडी संचरि ॥ ४१ ॥
फूल्या वृक्ष फली घण लता, अनेक रूप पंषी सेवता ।
ठामि ठामि कोइल गहि गहि, मधु पलव केतकि महि महि ॥४२॥
जिणवर महिमा न लहुं पार, रतु छोड़ी तरु फलीया सार ।
माग्या मेघ ते वरसि सदा, दुर्भक्ष वात न सोयणे कदा ॥ ४३ ॥

वहा

गाइ तणां जे वाछरू, करि वाघिण सुं खेल ।
ससक समी सीयालणी, हरि कुञ्जर गति गेल ॥४४॥
केकी सु विसहर रमि, नाग नकुल विहुं नेह ।
अवर वात सवि परिहरु, जिणवर अतिसि एह ॥४६॥
सारंगीनि सिंघनो बालक रमलि करंति ।
मांजारीनि हंमलु फरी फरी नेह धरंति ॥४७॥

चुपई

एक दिवस माली वनि गउ, अचरित देषी उभु रह्यु ।
फल्या वृक्ष सवि एकि काल, जीवे वैर तज्यां दुःखजाल ।। ४७ ।।
फरी फरी जोश्रा लागु बन्न, समोसरणि जिन दीठा धन्नि ।
आव्या जाणी नेमिकुमार, नमस्करी जंपि जयकार ।। ४८ ।।
लई भेट [illegible] मूक्यं, [illegible] जोडी [illegible] ।
रैवि गिरि जग गुरु आवीया, सभा सहित मिव आवीया ।। ४९ ।
कृष्ण राय तस वाणी सुणी, हरष वदन हूउ त्रिहुं खंड धणी ।
आलितोष पंचांग पसाउ, दिशि सनमुख थाई नमीउ राउ ।।५०।।
राइ आदेश भरी रथकीया, छपन कोडि हींयडि हरषीया ।
भव्य जीव थाइ घस मसि, करि प्रीत एक मनमाहि हसि ।।५१।।
पट हस्ती पाषरि परिवरच्यु, जाणे ऐरावण अवतरच्यु ।
घंटा रचना रणण टणकार, घिचि घिचि घुघर घम घम सार ।।५२।।
मस्तकि सोहि कुंकुम पुञ्ज, भरि दान तै मधुकर गुञ्ज ।
वांसि ढाल नेजा फरिहरि, सिणगारी राइ आगिल धरि ।।५३।।
चड्यु भूप मैगलनी पूठ, देइ दान मांगत जन मूठ ।
नयर लोक अंतेउर साथि, धर्मतणि धुरि दीधु हाथि ।। ५४ ।।

दूसरी ढाल । राग सही को ।

समहर सजकरी कृष्ण संचरिया, छपन कोडि परिवरिया ।।
छत्र तणा शिर उपरि धरिया, राही रुषमणी समसरीया ।।
साहेलडी जिणवर वंदण जाइ, नेमितणा गुण गाइ ।
साहेलडी रे जग गुरु वन्दण जाइ ।। ५५ ।।
ढोलतिवल वणु वाजां वाजि, ससर सबद सबे छाजि ।
झुहिरनाद नीसाण ज गाजि, वेगा वंस विराजि ।सा०।जिण०।५६।
आगलि अपछर नाचि सुरंगा, चामर ढालि चंगा ।
देइय दान ए धार जिम गंगा, हीयडलि हरष अभंगा ।
।साहेलडी० ।। ५७ ।।

मेगल उपरि चडीउ हो राजा, धरइ मान मन माहि ।
अवर राय मुझ समउ न कोई, नयणडे निम जिन चाहिं ।

। साहेल० ।। ५८ ।।

मानथंभ दीठि मद भाजि सह लहि धजाय ए रूडी ।
परिहरी कुंजर पालु चालि धरदं मान मति थोडी

।। साहेल० ।। ५९ ।।

समोसरण माहि कृष्ण [illegible] मांहि इंद्रविचार ।
रयण सिंघासण बिठा दीठा सिवादेवी तणउ मल्हार

।। साहेल० ।। ६० ।।

समुद्रविजय ए अवर बहु राजा वसुदेव बलिभद्र हरषि ।
करीय प्रदक्षण कृष्ण सुं नमीया नयनडे नेमि जिन नरखि

।। साहेल० ,।। ६१ ।।

वस्तु

हरषीया यादव यादव मनह आणंदि
पुरुषोत्तम पूजा रचि नेमिनाथ चलणे निरोपम
जल चंदन अक्षत करी सार पुष्प चरु अनोपम
दीप धूप सवि फलघणां रचीय पूज घन हाथ ।
कर जोडी करि वीनती तु बलिभद्र बंधव साथ ।। ६२ ।।

चुपई

स्तवन करि बे बंधव सार, जेठउ बलिभद्र अनुज मोरार ।
करसंपुट जोडी अंजुली, नेमिनाथ सनमुख संभली ।। ६३ ।।
भवीयण हृदयकमल नु सूर, जांइ दुःख तुझ नामि दूर ।
धर्म्मसागर नुं सोहि चन्द, ज्ञान करणं दव वरसि इंदु ।। ६४ ।।
तुझ स्वामि सेवि एक घडी, नरग पंथि तस भोगल जडी ।
वाइ वेगि जिम बादल जाइ, तिम तुझ नामि पाप पलाइ ।। ६५ ।।
तोरा गुण नाथ अनंता कह्या, त्रिभुवन माहि घणा गहि गह्या ।
ते सुर गुरु बोल्या नवि जाइ, अल्प बुधि मि केम कहाइ ।। ६६ ।।

बलिभद्र चुपई

नेमनाथ जी अनुमति लही, बल केशव बे बिठा सही ।
धम्मदेश कह्या जिन तणा, खचर अमर नर हरख्या घणा
।। ६७ ।।

एके दीक्षा निरमल धरी, एके राग रोष परिहरी ।
एके व्रत बारि सम चरी, भवसागर इम एके तरी ।। ६८ ।।

दूहा

प्रस्ताव लही जिणवर प्रति, पूछि हलधर वात ।
देवे वासी द्वारिका, तेतु अति हि विख्यात ।। ६९ ।।
त्रिहुं खंड केरु राजील, सुर नर सेवि वास ।
सोइ नगरीनि कृष्ण नु, कीणी परिहोसि नास ।। ७० ।।
सीरी वाणी संभलि, बोलि नेमि रसाल ।
पूरब भवि अक्षर लख्या, ते निम थाइ आल ।। ७१ ।।

चुपई

नेमिनाथ द्वारा भविष्यवाणी

द्वीपायन मुनिवर सार, ते करसि नगरी संधार ।
मद्य भांड जे नामि कही, तेह थकी वली बलसि सही ।। ७२ ।।
पौर लोक सवि जलसि जसि, बे बंधव नीकलसु तिसि ।
तह्म सहोदर जराकुमार, तेहनि हाथि मरि मोरार ।। ७३ ।।
बार वरस पुरि जे तलि, ए कारण होसि ते तलि ।
जिणवर वाणि अमीय समान, सुणीय कुमार तव
चालयु रानि ।।७४।।
कृष्ण दीपायन जे रषि राय, मुकलाविनि पर पंथ जाइ ।
बार संवछर पुरा थाइ, नगर द्वारिका आवु राइ ।। ७५ ।।
ए संसार असार ज कही, धन यौवन ते थरता नहीं ।
कुटंब सरीर सहू पंपाल, ममता छोडी धम्मं संभाल ।। ७६ ।।
पजुन संबुनि भानकुमार, ते यादव कुल कहीइ सार ।
लीधो छोडसु सवि परिवार, पंच महाव्रय लीधु भार ।। ७७ ।।
कृष्णा नारि जे आठि कही, सजनराइ मोकलावि सही ।

अह्म आदेश देउ हवि नाथ, राजमतीनु लीधु साथ ।। ७८ ।।
वसुदेव नंदन विलखुथई, नमीय नेमि निज मंदिर गउ ।

द्वारिका दहन

बार बरसनी अवधिज कही, दिन सवे पूग आवी सही ।। ७९ ।।
तणि अवसरि आव्यु रषि राय, लेईय ध्यान ते रह्यु मन माहि ।
अनेक कुमर ते यादव तणा, धनुष धरी रमवा आव्या घणा ।।८० ।।
वनखंड परवत हीडिमाल, बाजि लूय तष्या ततकाल ।
जोतां नीर न लाभि किहां, अपेय थान दीठां ते तिहां ।। ८१ ।।
तिणि अवसर ते पीधु नीर, विकल रूप ते थया शरीर ।
ते परवत था पाछा वलि, एकि विसि एक धरणी ढलि ।। ८२ ।।
एक नाचि एक गाइ गीत, एक रोइ एक हरषि चित्त ।
एक नासि एक वंडलि धरि, एक सूइ एक क्रीडा करि ।। ८३ ।।
इणि परि नगरी आवि जिसि, द्वीपायन मुनि दीठु तिसि ।
कोप करीनि ताडि ताम, देइ गाल वली लेई नाम ।। ८४ ।।
पाप कर्म्म ते करि कुमार, पुहुता द्वारिका नगर मझारि ।
केशव आगिल कही तीणि वात, द्वीपायन अह्मे ताड्यु तात ।। ८५ ।।

दूहा

कुमर ज वाणि संभली, केशव धरि अणाहि ।
अविहड अक्षर जे लख्या, ते किम पाछा थाइ ।। ८६ ।।

चुपई

केशव हलधर बे बन जाइ, कर जोडी मुनि लागा पाइ ।
दीन वचन बोलि अति घणा, क्षमु साधु कहि दया मणा ।। ८७ ।।
कर संज्ञा जाणी तिणि राइ, अति दुःख आणी नगरी जाइ ।
अगिन कोप तव दीठु सह हलधर कृष्ण उपाय करयू ।।८८ ।।
सागर वाल्यु नयरी माहि, तपि तेल जिम घडहड थाइ ।
नयर लोकते करि विलाप, पुण्य भवनु प्रगट्यु पाप ।। ८९ ।।
एक बलतां बुंबार व करि, बालक लेइ एक नगरी फिरि ।
एक कहे ऊगायस माइ, एक दुख काया सह्यु न जाइ ।। ९० ।।
एक मोह्या धन धरती धरि, एक लक्ष्मी रखवालां करि ।
क्षमा एक अणसण आचरि, एके एक क्षमापन करि ।। ९१ ।।

नयर द्वारिका दीठु नास, हलधर केशव छोडी आस।
लेई तात जब गोपर गया, जडीय पाल तब उभा रह्या ॥ ९२ ॥

दूहा

देवे वाणी उच्चरी, कांइ भोला सारंग पाणि।
जाणी जिणवर जे कह्यु, ते किम हुइ अप्रमाण ॥ ९३ ॥
तजीय तात जब नीकल्या, सबल सहोदर वीर।
केशव बिलखु इम भणि, क्षण एक पडपुवीर ॥ ९४ ॥

तीसरी ढाल दमयंतीनी

द्वारिकां दहन देवी करी, सखी वन खंड चालि रे, चालि रे
शालि दुख दोहिल घणीए ॥ ९५ ॥
मात तात सजन घणा सखी सपरिवार रे।
परिवार निसार सवे विछटी गयां ए ॥ ९६ ॥
लक्ष्मीय मेल्हीं कअ गणी सखी रयण भंडार रे।
भंडार निसार सोवण सवे तिहां रह्या ए ॥ ९७ ॥
पवन वेग तोरंगमा सखी मेगल माता रे।
मातानि विख्यात अंजन गिरि जिसाए ॥ ९८ ॥
रथवारू रलीयामणा सखी बहुपण सोहता रे।
सोहता रे निर्मोहता मन सविविह लीया रे ॥ ९९ ॥
नव नव नेह नारी तणा सखी शशिहर वयणी रे।
वयणीनि मृगनयणी मेहली गया ए ॥ १०० ॥
अगि आभूषण आवरता सखी बाह्य वस्त्र रे।
वस्त्रनि शस्त्र रह्यां अनेक रतणां ए ॥ १०१ ॥
हय गज रथ आरोहता सखी सबिका संयुती रे।
पूती ते पहूती पायन पाणही ए ॥ १०२ ॥
रदन करि पगलां भरि सखी क्षण क्षण झूरि रे।
झूरिनि पूरि दिन ए दुख तणा ए ॥ १०३ ॥
कौशांब वन माहि सांबरिबे सुभट सुजाण रे।
जाणनि प्राण तणु संस हूउ ए ॥१०४॥

केशव विलषु इम भाणि मुझ पावउ नीर रे।
नीरनि वीरा वेगी माणीइ ए ।। १०५ ।।
वचन मनोहर उच्चरी सुणु माघव वीर रे।
नीर हो माणु वडतलिवीसमु ए ।। १०६ ।।

दूहा

नीरज लेवा संचरयु, मनहुंन मेहिल माण।
मुड करि सूतु सही, वड तलि सारंग पाण ।। १०७ ।।

चुपई

जरा कुमर जे भागि कह्यु, बार वरसि पहिलु वनि गयउ।
लक्षु निलाड विधाता जेह, तिणि वनि कुमर पहूतु तेह ।।१०८।।
कृष्ण पाइ तव पद्मज दीठ, जाणे कोइ वनेचर बैठ।
भागि लक्षु ते करि सुजाण, धरीय धनुष तव पंच्यु बाण ।।१०९।।
करीय रोसनि मर्म्म जाम, लाग्यु पगि मनि चमक्यु ताम।
जाग्यु कृष्ण ते हा हा करी, उपरि कुमर गउ संचारी ।। ११० ।।
धरि दुःख मगि कूटि होउं, धिग् धिग् दैव तिएसुं कीउं।
पाप तिमर करी हूं उहूं अंध, करयु कुकर्म्म मि हणीउ बंधु ।।१११।।
कहि कृष्ण सुणि जरा कुमार, मूढपणि मम बोलिसमार।

कर्मों की गति

संसारतणी गति विषमी होइ, हीयडा मांहि विचारी जोइ ।।११२।।
करमि रामचन्द्र वनि गउ, करमि सीता हरण ज भउ।
करमि रावण राजजटली, करमि लंक विभीषण फली ।। ११३।।
हरचंद राजा साहस धीर, करमि अधम घरि आण्यु नीर।
करमि नल नर चूकु राज, दमयंती वनि कीधी त्याज ।। ११४ ।।
राय युधिष्टर वाचा सार सूरवीर रण चढि झूझार।
द्यूत क्रीडा ते करमि करी, करमि अवनी कौरव हरी ।। ११५ ।।
करमि ऋधि वृधि पामि बहु, एके निरधन करमि सहु।
करम करि ते निश्चि होइ, करम कारण नवि छूटि कोइ ।। ११६।।
उठउ वछ मत लाउ षेव, जब लगि नावि बलभद्र देव।
कौस्तुभ मणि आली समझाइ, दक्षण मथुरां वेगु जाइ ।। ११७ ।।

पूरव बीतग जाइ कहे, राई युधिष्ठर पासि रहे ।
मोकलावीनि गउ सुजाण, तब लगि कृष्णि छंड्या प्राण ॥ ११८ ॥
हलधर वन माहि जोइ वारि, गिरी कंदरनु न लहि पार ।
तोह तणु तणि दीठु गात, कीउं नीर ... [illegible] ॥ ११९ ॥
हीयड़ा माहि विरगुं अचिह्न, बंधव पाइ पीउं पाचिह्न ।
कमल पत्र तब दुंदु कीउ, भरीय उदक पाछु चालीउ ॥ १२० ॥
पाणी पात्रि करी आवीउ, सुललित वाणी बोलावीउ ।
ऊठउ बंधव साहस धीर, मुखह पखाली पीउ नीर ॥ १२१ ॥
करि साद पुण बोलि नही, जाण्यु कृष्ण रिसाणा सही ।
आगि सहोदर मकरि घणहि, दुख सागर पडतांदि बाहि ॥ १२२ ॥
रैवि रमणते चिंति इसु, कृष्ण न उठि कारण किसुं ।
मुख ढेबर ते पाछु कीउ, सासन देषिवि लघु थीउ ॥ १२३ ॥

दूहा

बदन कमल सीचि सही, कांठि न जाइ नीर ।
तनु जोउ बंधव तणु, कुणि वनि षंडव घाउ बीर ॥ १२४ ॥
बांहि करी बिठु कीउ, मुखह निहालि लेह ।
एकाकी मेहली गउ तुं देवि दीधु छेह ॥ १२५ ॥
हा हा कार करी घणुं, झूरि बलिभद्र भाइ ।
वाइ अंदोल्यु तरु पडि, तिम धरणी गलि थाइ ॥ १२६ ॥
बे बंधव अवनी ढल्या, अवरन कोइ सहाइ ।
वन पवनि जाग्यु सही, तु हलधर मेल्हि लघाइ ॥ १२७ ॥

ढाल

बलिभद्र का विलाप

विलवि. वीरा हुं एकलु वनि रहिणु न जाइ ।
तुझ विण घड़ी एक पापणी वरसा सु थाइ ॥ १२८ ॥
बंधव बोलदि तुझ विण रहिण न जाइ ।
बंधव बोलदि युदु पंसीराइ बंधव बोलदि ॥ १२९ ॥
जल विण किम रहि माछलु तिम तुझ विणुं बंध ।
विरीइ वनडिउ सासीउ साल्या असलारे संध ॥ १३० ॥

परिभवि कि मुनि हुस्याइ बोल्या कि उपवाद ।
दामोदर दुख देई गउ, रोइ सरलि साद ॥ १३१ ॥
किसर फोडिमि पालडी, किउ थाप्या अघाट ।
श्रीरंग सब पेषु सही, बसति उठीरे भाट ॥ १३२ ॥
सतीय शृंगार कि अपहर्या, गुरु जनम लीयां रे मान ।
किणिन पूजामि परिहरी, बछवि हिल्यु तु रानि ॥ १३३ ॥
बनदेव तिविरणि कहुं, सुण वह रे प्रमाण ।
सरणि होतु तह्म तणि, कुणि लीया रे पराण ॥ १३४ ॥
ऊलंभा कहीं इम किहुनी, किहि सु कीजिन रोस ।
कीधु करम आपरिण, दैवह दीजि न दोस ॥ १३५ ॥
रविकर कहुं सुणु वातडी, सुणु निसपति चंद ।
विरीगउ किणी बाटडी, जीणि हुण्यु रे गोविंद ॥ १३६ ॥

दूहा

रे हीयडा तुझनि कहुं रसडि किमिम रोइ ।
बंधव मार्यु आपणु, सोइ अरीयण वनि जोइ ॥ १३७ ॥
मोहनी कर्मि घणु मोहीउ, हृदय कमल ध्यु मंघ ।
दक्षिण दिश प्रति संचरितु, केशव कीधु कंधि ॥ १३८ ॥
अन्नज आणि अति भला, वनफल विविध विशाल ।
भोजन करु भाई भणि तु, भरी करी मूकि थाल ॥ १३९ ॥
दिन प्रति इम करतां हुया, हलधरनि षट्मास ।
मोह थकी माया करितु, नवि छोडि सब पास ॥ १४० ॥
इन्द्र कहि अमरह प्रति, ज्ञान तणि प्रयोग ।
बलभद्र मरसि मोहीउ, तु लहिसि धर्म वियोग ॥ १४१ ॥

चुपई

इन्द्र द्वारा प्रतिबोध

इन्द्र कहि तह्मे जाउ मही, प्रतिबोधु हलधर तिहां रही ।
चाल्या सुरसहि लही आदेस, मननीय रूप करिय असेस ॥ १४२ ॥

असुर भली बुधी कीधी नवी, पथर उपरि पोयण ठवी।
सींचि नीर कमल निताम, तिणि अवसरि तिहां पहुतु राम
॥ १४३ ॥

कहि बलिभद्र तह्लें भोला थाइ, पथर उरि मूल न जाइ।
सुणु कुंवर ए मूड आगसि, तु पथरि पोयण लागसि ॥ १४४ ॥
करीय रोस आवु संचरि, वेलू लेई एक घाणी भरि।
उभु रही बल पूछि वात, वेलू पीलुं सुण हो भ्रात ॥ १४५ ॥
शिक्षा पीक्षण स्नेह न होइ, मूरख होइ विचारी जोइ।
वेलू ताडि तेल न तोइ, मूउं मडुं नवि जीवि कोइ ॥ १४६ ॥
रोस करी पगआभरि, असुर उपाय अनेक करि।
विषनु वृक्ष एआवि मही, अमृत फल कहि लागि सही ॥ १४७ ॥
सीरी कहि मम बोलि असार, विष अमृत किम होइ गमार।
विष अमृत नवि हुइ ताम, मुडं मडुं किम जीवि राम ॥ १४८ ॥
बलिभद्र मच्छर मनि परिहरि, हीयडा माहि विमासणि करि।
अमर कहि साचुं य सुजाण, मुइ मडि नवि आवि प्राण ॥ १४९ ॥
अज्ञान पणि अब वह्यु सरीर, दहन करुं हवि केशव वीर।
अदह मुंडहुं पाबु जिहां, कान्हड काया जालुं तिहां ॥ १५० ॥
शव लेई मूक्युं पृथ्वी जाम, धरणी बोलि सुणि हो राम।
दहन करे बचिति ताम, अनेक वार बाल्यु इणि ठाम ॥ १५१ ॥
तु जिहां जिहां जाई उभु रहि, तिहां तिहां अवनी अधिकुं कहि।
परबत माहि पेथी वाट, चइच् तुंगेश्वर विषमाघाट ॥ १५२ ॥

दूहा

संस्कारि श्रीरंगि, देखी दुद्धंर ठाइ।
अनुप्रेक्ष्या वारि भली, तु चिंति हलधर राइ ॥ १५३ ॥
हीयडा सुं हरषि भल्यु, कहिम करेश मोह अयाण।
मोह थकी जे नर मूया, ते पाम्या दुख खाणि ॥ १५४ ॥
वली वली हुं तुझ सुं कहुं, रहे चित्त निज ठाम।
धर्म अहिंसा सुं रमि सत्तु, सरसि तुझ काम ॥ १५५ ॥

पंच महाव्रत परिवरयु, पंच सुमति सुविसाल ।
संसार तणा संग परिटरया, तु मुक्यूं मायाजाल
॥ १५६ ॥

चुपई

तप साधना

पंचेन्द्री नि च्यार कषाइ, मयण मल्ल सु मुंज्यु ठाइ ।
लक्ष चुरासी समचित करी, क्षमा षडग जीणि करि धरी
॥ १५७ ॥

मद मेगल जे आठइ कही, तप केशरी विदारया सही ।
मोह मछर अहि विषनाम, वैनतेय जिम मंज्यु ठाम
॥ १५८ ॥

मन थी माया कीधी दूर, समता रस घणु भीलि पूर ।
क्रोध लोभ बे बोधी जेह, संतोष सेल गही कीधा छेह
॥ १५६ ॥

जिणवर दीक्ष्या लाग्यु मास, हलधर ध्यान रह्य, षट् मास ।
काया स्थिति करवा कारणि, बल मुनिवर उत्तरि पारणि
॥ १६० ॥

चिंता पुर पुहुचि रषिराय, ईर्यापथ सोधंतु जाइ ।
रूप तणु नवि लाभि पार, पगि पगि ऊभी नरषि नारि
॥ १६१ ॥

एक कहि ए सुरपति होइ, एक कहि ए नल वर सोइ ।
एक कहि ए नशपति चंद्र, एक कहि अहिपति नागेन्द्र ॥ १६२ ॥
एक कहि साविश्री स्वामि, एक कहि सीता पति राम ।
एक कहि गिरजा पति ताम, एक कहि ए रति पति काम
॥ १६३ ॥

निरमल चित बोलि एक नार, सुणु सखी कहुं तह्म वचन विचार ।
पूरव भवि पुण्य कीधु कोइ, तु अह्म इसु बंधव बेटु होइ ॥१६४॥
एक नारि मनि धरि विकार, ए हवुं नरही हणि संसार ।
तु मानव भव कहीइ सार, निश्चि लहीइ ए भरतार ॥ १६५ ॥

दूहा

यति मंभी मुनिवर प्रति, मूकि मुसर नीसास ।
कुंभ बरांसि कामनि, दिइ बालक गलि पास ॥ १६६ ॥
हलधर करुणा हीश्न धरी, देखी बालक फंद ।
मुनिवर कहि सुणि कामनी, हृदय कमल थई श्रंध
॥ १६७ ॥

चपई

मि देख्यु सुभ रूप असंभ, मोहुं चित्त थंम्यु जिम थंभ ।
सुणि हो स्वामी कारण तेउ, मोह थकी नवि जाण्यु भेउ
॥ १६८ ॥
तव मुनिवर पाम्यु वैराग, नयर माहि नही जावा लाग ।
अन्न तणु तिणि कीधु त्याग, पग पग जोइ परवत भाग ॥ १६९ ॥
चडयु तुंगेश्वर परवत शृंगि, लीया नाम मन सुधि अभंग ।
पिठु गिरिवर किंदर जाइ, ध्यान धरी विठु रिषिराइ ॥ १७० ॥
तृषा काल वृक्ष मूले रहि, दंसमसक परीसा बहु सहि ।
वरसि मेघनि वाजि वाय, श्रंगि उघाडुंछि यतिराय ॥ १७१ ॥
सीतकाल सी वाजि बहू, हेम तणा भर बहुना सहू ।
ठौरि नदीनि बालि रान, तिम तिम मुनिवर लाग्यु ध्यान
॥ १७२ ॥
उन्हालि लू उही वाय, तपन ताप तनु सह्यु न जाय ।
द्वादश दसहू परीसह कह्या, तीह तणी परि सूधा सह्या ॥ १७३ ॥
उष्ण शीत वृष त्रहि काल, शरीर श्रादि सुख तज्युं संपाल ।
ध्यान अगिन तप साध्या सार, कर्म काष्ट जिणि दह्या विकार
॥ १७४ ॥
संयम साध कीउं धर्मध्यान, तजीय तनु गउ अमर विमान ।
स्वर पंचमि जाई स्थिति करी, अमर वधू जिणि लीलांवरी
॥ १७५ ॥

जय जय कार करि बहु देव, ग्रह निशि करि तह्म पाय सेव ।
वाद्द मादल वंश कंसाल, नाचि अपछर बहु विधि ताल ।। १७६ ।।
जरा न आवि तिहां ते कदा, नवयौवन सुखसेवि सदा ।
कनक तेज जिमि झलकि काय, परिपूरण सवि कहीइ आयु
।। १७७ ।।
आधि व्याधि नवि पामि किसी, निरमल देह अमर तिहां तिसी ।
मनवांछित फल देव मझारि, ते सहू धर्मतणु उपगार ।। १७८ ।।
पुरवना तपतणि प्रयोग, अमरी सरसावमसि भोग ।
ब्रह्म यसोधर दाषि कही, ते तु पुण्यि पदवी लही ।। १७९ ।।
चुथि काल तीर्थंकर सार, अवतरसि सोइ भरह मझारि ।
ध्यान करीनि मनरोषसि, लहीय ज्ञान भवीयण बोधसि ।। १८० ।।
घाति कर्मनु करीय विणास, मुगति क्षेत्र जाई करसि वास ।
धर्मतणां फल एह ज जाणि, धर्म करंता म करु काण ।। १८१ ।।

दूहा

धरमि धन बहु संपजि, राजा रयण भंडार ।
धरमि जस महीयल फिरि, उत्तम कुल अवतार ।। १८२ ।।
धरमि मनचींत्यु फलि, दूरदेशन्तर जेह ।
हय गज रथ धिरि नित वसि, धर्मतणां फल एह ।। १८३ ।।
धरमि नर महिमा हुइ, धरमि लहीइ ज्ञान ।
धरमि सुर सेवा करि, धरमि दीजि दान ।। १८४ ।।
धर्मतणा गुण बहु अछि, ते बोल्या किम जाइ ।
चुगिफेड टालसि जे, धुरि धर्म दयाय ।। १८५ ।।

प्रशस्ति

श्री रामसेन अनुक्रमि हुया, यसकीरति गुरु जाणि ।
श्री विजसेन पदि थापीया, महिमा मेर समाण ।। १८६ ।।
तास सष्य इम उच्चरि, ब्रह्म यसोधर जेह ।
भूमंडलि दणीयर तपि, तारहु रास चिर एह ।। १८७ ।।

संवत पनर पंच्यासीइ, स्कंध नयर मझारि।

भवणि अजित जिनवरतणी, ए गुण गाया सार ।। १८८ ।।

वस्तु बंध

भणि भवीयण भवीयण चरित, ए सार हरष करी

हलधर तणुं हीया माहि सुणि ज्ञान आणीय

नरभव सुख सेवू अनुभवी सरग रिधि बहु लहि असमाणीय

देवी सुर सेवा करि, इन्द्र तणि अवतार।

मुगति रमणि अनुक्रमि वरि जिहां सौख्य तणा भंडार ।। १८९ ।।

इति बलिभद्र चुपई ।।

विजयकीर्त्ति गीत

सरसति सामिणि चलणेहुं लागु'य मांगुय मति अति निरमलीए

गायसु' यतीवर विजयकीर्त्ति गुरवर वर

आलु रे माता भारती ए चढाव ।।

वेगि वर वर आलि वाणी हंस वाहिणी भामिनी ।।

करिहि कमंडलु वेण पुस्तक जाप जपति तु' स्वामिनी ।

असुर सुर नर खचर दानव पाय पंकज नुति करि ।

भाव भगति मनह रंगति अनेक योगी अणसरि ।।

रायल कवीयण वि दुख बाळु चलण तोरे नित लुलि ।

दिइ विद्या विवेक वाणी तेहनां संकट टलि ।

कमल केतुकि कुंद करणी पूजा करी करूं आरती ।

करह जोडी पाय लागु दिउ वर वर भारती ।। १ ।।

भारती तूठीय अक्षर आलए मोरूं मन चालिरे गुरु चलणे सही

सहि गुरु स्वामीय तणि परसादिय वाछिय काज केहुं नही ए ।।च.।।

वाछिय काजि केहु नही रे गाइसु' गुरु राय

एक चिति मकह सुधि हीइ धरी बहु भाउ ।

बाला पणि बुधि ऊपनी चारित्र लेवा चंग ।

श्री सकलकीरत्ति केरीय वाणी सुणी हदि हुउ रंग ।

सुणी हृदि हुउ रंग रूयडु ज्ञान ध्यान धुरा धरि ।

पंच महाव्रय प्रबल प्रौढां तेह लेवा चित करि ।

ससार एह असार जाणी संग सघला परिहरि ।

हेलांहि मयण हराबीउ संयम श्री मुनिवर वरि ।। २ ।।

मुनिवर विश्वसेन सहिय आपए संयम आपण रूयडुं ए ।

पंच महाव्रत पंच सुमति अण गुपति सहित मुनि ऊजलु ए ।।च०।।

उजलउ मुनिवर सदा सोहि उपमा गौतम सार ।

जंबूय कुमर ज अवतरयु जाणे लेवा चारित्र भार ।

अनेक वादी विकट कविजण गुंजता गजराय ।
सींहनी परि सबल सुं फलि मंजीया मडवाइ ।
आठिय मद जे कर्म तिलां प्रबल नाग प्रचंड ।
सुपर्ण नीपरि छडपि लीया कायां ते सत षंड ।
काम क्रोधह मान माया मोह रीसु जेह ।
बावीस परीषह जीपतु धरिीय निरमल देह ।। ३ ।।
निरमल देहह्वि एह रवि रायहि माता रंगीय उयरि उपनुए ।
साह भीमिग सुत कुल अजू यालए ।
अनेक राजा चलणे नमिए ।। चढाउ ।।
अनेक राजा चलण सेवि मालवी मेवाड ।
गुजर सोरठ सिधु सहिजि अनेक भड भूपाल ।
दषण मरहठ चीण कुंकण पूरवि नाम प्रसिद्ध ।
छत्रीस लक्षण कला बहुतरि अनेक विद्या रिधि ।
आगम वेद सिद्धान्त व्याकरण भाषि भवीयण सार ।
नाटक छंद प्रमाण बूझि नित जपि नवकार ।
श्री काष्ठ संघ कुल तिलु रे यती सरोमणि सार ।
श्री विजयकीरति गिरुउ गणधर श्री संघ करि जयकार ।। ४ ।।

इति श्री विजयकीर्त्ति गीत ।।

वासुपूज्य गीत

राग-कामोद धन्यासी

सगुण सलूणु वासपूज जिन सोहि रे ।
भव भय भंजन जन मन रंजन भवीयण वा मन मोहि रे ।।
भावु साहेलडी वेगि वारमलावु रे ।
हंसता रमतां जिन हरि जासु वासुपूज
गुण गावु रे ।। भावु ।। १ ।।
नरमल जलना कुंभ जिनहरि वालु रे ।
स्वामीनि तनु तेह ज ढालु मनना पाप पखालुं रे ।। भावु ।। २ ।।

चंदन केशर कपूर घसावु रे।
जेहनि नामि दुःख पुलावु आंगी आंगि रचावु रे॥ आवु॥ ३॥
सालि सुगंधी तेहना तंदुल सारू रे।
जिनजी आगलि पुंज रचीजि आलि निज गुण
सारू रे॥ आव॥ ४॥

बेडल वालु बुल सरीनांहारू रे।
स्वामी निशि निशि पूजा कीजि देह भवचा
पारू रे॥ आवु॥ ५॥

मोतीया लाडू वटक विशालु रेवा फीणि,
अति घण फीणी घेवर रसालू रे॥ आवु॥ ६॥
वह्नै घनि पूरी सोन्रण घालू रे,
जिनजी आगिल पूजा कीजि स्वामी संकट टालू रे॥ आवु॥ ७॥
रत्नयोति जिम आरती अतिहि उत्तंगू रे,
सुगति तणा गुण सेवा कारणि दीवा करू
सुचंगू रे॥ आवु॥ ८॥

सघर धूप जे कृष्णागर वर सारू रे,
जिनजी आगिल तेह दहीजि टालि कर्म विकारू रे
॥ आव० ॥ ९॥

करणां चारू सोपारी नव सारू रे,
श्रीफल सरसी पूजा कीजि लहीइ सुख अपारू रे
॥ आवु० ॥ १०॥

अष्टप्रकारी जिनवर पूज करेसि रे,
भावि भक्ति लक्ष्मी सक्ति संसार तरेसि रे॥ आवु० ॥ ११॥
नयर वंशवाला मंडण नुं स्वामी रे।
ब्रह्म यसोधर अतिघणु वीनवि देयो तह्म गुणग्राम रे
॥ आवु० ॥ १२॥

इति वासुपूज्य गीत॥

वैराग्य : गीत

राग धन्यासी

संसार सागर एह गहन छि रे
भमिउ भमिउ चुगि जाण जिणवर रे ॥
परमपुण्य एक नक लध्यु रे
जिम छूटुं नरबाण स्वामी रे ॥
त्रिभुवन तारण तुं वडली रे,
तार तारु गहन संसार जिणवर रे ॥
समरथ नाणी निमि मणसरचु रे,
जनम मरण दुखटाल स्वामी रे समरथ ॥ १ ॥
लाख चुराशी [illegible] रे
वसीउ वसीउ बार बहुत रे । जिणवर रे ।
धरम न कीधुं एक दया धरीरे ।
पाप पटल पंकि खूत, स्वामी जिणवर रे ॥ २ ॥
असन परिणयमि अतिघणां रे ।
कीधी कीधी जीवविणास जिणवर रे ।
पर नारीय लंपट थकिरे पाम्यु पाम्यु नरयावास स्वामी
जिणवर रे ॥ ३ ॥
तृष्णा नदीइ प्राणी ताणीउ रे
कीधा कीधा अतिघणा द्रोह, जिणवर रे ।
च्यारे कषाय जीव गलि धर्‍यु रे
राल्यु राल्यु दुरमति थोह, स्वामी जिणवर रे । ४ ।
पांचे इन्द्रीए प्राणी परिभम्यु रे
मयण धूताकमली माहि, जिणवर रे ।
पंथि चलाव्यु ए पातिग तणि ए ।
समरथ बाहरि नुं थाइ, स्वामी जिणवर रे ॥ ५ ॥
पुन्य पसां इमि तुं पामीउ रे,
सफल जनम हूउ आज, जिणवर रे ।
ब्रह्म यसोधर हरषि इम कहि रे,
अवर नही मुझ काज, स्वामी रे जिणवर रे ॥ ६ ॥

इति वैराग्य गीत

नेमिनाथ गीत

राग गुडी

सारद सामणि वीनवु रे, माग्यु एक पसाउ ।
दिउ वाणी ब्रह्म निरमली रे, गासु नेम जिनराउ ।
साभला मण वीनवि राजिल नारि पूरव भव नेह संभारि ।
यादव जीवी नवि राजिल नारि मुझ कांइ कर निरधारि ।
दयाल राय वीनवि राजिल नारि ।। १ ।।
बसंत रमेवा कारणि रे पुहुता वनह मझारि ।
सोल सहस्र गोपांगना रे सरसा नेमि मोरारि । साम ।। २ ।।
वाला केरा मांडवा रे सुरतर कुंकम पुंज ।
केसूय मरूउ मोगरु रे पाडिल किरणी कुंज । साम ।। ३ ।।
चंपक बेउल बुलसरी रे तेह तणां कंठि हार ।
सिर घालि जासूलडां रे कमले ताडिकृष्ण नारि । साम ।। ४ ।।
चंदन केशर घसि करी रे वापीय पूरी सार ।
गलयंत्र सुं वली छांटणां रे रमिते विविध प्रकार । साम ।। ५ ।।
क्रीडा करी नेम नीकल्या रे वापीय तीरि जाणि ।
भावेज सुं तव इम भण्यु रे पोतिनी चोउ माणि । साम ।। ६ ।।
नेमि वयण सुणी करी रे जांबुवती धरि मान ।
ए वितु ग्रह्मनि न दीजीइ रे, देउर नही तुझ सान । साम ।। ७ ।।
उरग सेयां सुं लह्यो विसकरी रे पूरच, पंचायण ।
हे वइरणि निति ग्रह्मनि न आदरि रे गोपी केरु देव । सा० ।। ८ ।।
अपणु देवाकारणि वली अस्थि तुझ आशि ।
इम जाणु नरवाहु सिरे लु परणु नेमनाथ । सा० ।। ६ ।।
जांबुवती वयण सुणी रे कोपि धउ रे कुमार ।
मेगलनी परिमल पतु रे पुहुतु आयुध द्वारि । सा० ।। १० ।।
नागसेया जाई पुढीउ रे पुरच, पंचायण हेव ।
तेहनि सब्दि घरा धडहडी रे चमक्यु, केशवदेव । सा० ।। ११ ।।
मुझ उपरि धरि आवीउ रे दैत्य दाणव नर राउ ।
महारु संख कुणि पूरीउ रे तेहनु फेडुं हुं ठाव । सा० ।। १२ ।।

कृष्णपुलि उतावलु रे प्रायुध साल मझारि ।
देखीय प्राक्रम नेमनु रे झांखु थयउ अपार । सा० ।। १३ ।।
प्रबला वयरण सुणी करी नेम तें मुं केहु रोस ।
उरग थाइ छइ आकुलु रे एसुं केहु दोस । सा० ।। १४ ।।
कष्णइ नेम संतोषीया रे पुहुता निज निज गेह ।
बलिभद्र सुं आलोचीउं रे ब्रह्म राज हरेसि एह । सा० ।। १५ ।।
समुद्र विजय रायां मंदिरे रे कान्हड पहुता जाइ ।
प्रणमीय कहि कामीयनि रे करू नेमि वीवाह हो । सा० ।। १६ ।।
शिव या कहि कृष्ण सांभलु रे तुं छि ब्रह्म कुलि धीर ।
तिच्छति ब्रह्म चिंता केही रे परणावे ताहा व वीर
। सा० ।। १७ ।।
उग्रसेन राया मंदिरे रे पहुता देव मोरारि ।
धी परणावु नेमनि रे मेगिम लाउ वार । सा० ।। १८ ।।
यादव ना कुल नंदनि रे लग्न लीउं तिणी वारि ।
जूनिगढि द्वारामती रे उत्सव बहुत अपार । सा० ।। १९ ।।
घरि घरि गुडीय उच्छलि रे चिरि चिरि मंगलाचार ।
तलीयां तोरण उभीयां रे गीत मांड अन्न दसार । सा० ।। २० ।।
मोटा मंडप तिहां रच्या रे थांभ कनक केरा सार ।
वेल भरी पर वालडेरे रयणमि पोल पगार । सा० ।। २१ ।।
कुंकुम पत्री पाठवी रे नृप आवि अति सार ।
दक्षिण मरहठ मालवी रे कुंकण कनड पाउ । सा० ।। २२ ।।
गूजर मंडल सोरठीया रे सिंधु प्रवाल देश ।
गोपाचल नु राजीउ रे ढीली आदि नरेस । सा० ।। २३ ।।
मलबारी मारूयाडना रे षुरसाणी सुविईस ।
वागडीउ दल मज करी रे लाड गउडना धीस । सा० ।। २४ ।।
मंगनि वंग तिलंगीया रे उर मेवाडु राय ।
भाद महरमज चीणना रे द्वारावती सहू जाइ । सा० ।। २५ ।।
षारिक षडी चारुली केलां अषोड बदाम ।
षांडि सुं रायण भली रे श्रीफल खरजूर जाणि । सा० ।। २६ ।।

पकवान नीपजि नित नवां रे मांडी मुरकी सेव ।
खाजां खाजलडी दहीथरां रे फेवर घेवर हेव । ॥ २७ ॥
मोतीया लाडू मगतप्यारे सेवईया अति सार ।
काकरी पापड सूषीया रे साकिरि मिश्रित सार । सा० ॥ २८ ॥
सालीया तंदुल रूयडा रे उज्वल अखंड अपार ।
मुग मंडोरा अति भला रे घृत अखंडी धार । सा० ॥ २६ ॥
विवध वानीनां सालनां मूकि यादव नारि ।
कर्पूरि वास्यु करं बलु रे छोल श्रीसि एक सार । सा० ॥ ३० ॥
वास्यां नीर अति निर्मलां रे जाणे जे सुगंग ।
चलूय करावि यादव पोषिता देसलीय आलि एक चंग
। सा० ॥ ३१ ॥
उज्वल वस्त्रश कोमलां रे करे ते लुंछन करंति ।
पान सोपारी चेउलां रे कर्पूरि सुं आणी धरंत । सा० ॥ ३२ ॥
चंदन करपूर केसरि रे भरीय कंचोली एक जाइ ।
यादव करि वली छांटया रे हीयडलि हरष अपार । सा० ॥ ३३ ॥
भान पजूनि सुं बलिभद्र रे नेमनि करि सिणगार ।
पुंपतरि शिरि सोभतु रे काने कुंडल गलि हार । सा० ॥ ३४ ॥
मस्तकि सोहि रूडु नवग्रहु रे बाहि बाजू बंध सार ।
आंगलीए रूडी मुंद्रडी रे पहिरघु सघि सिणगार । सा० ॥ ३५ ॥
गोपीयपति तव दम भणि रे देवमलाउ वार ।
धव धव तेधुं सटपटि रे यादव लेइ सिणगार । सा० ॥ ३६ ॥
राही रूपाणि चंद्रावली रे रुक्मिण केसव नारी ।
शिवा देवी माता मनि रली रे पुंपि नेमिकुमार । सा० ॥ ३७ ॥
गय गुडघा हय पाखरघा रे रथे कीया सिणगार ।
पायक चालि मनिरली रे जानत लाभि पार । सा० ॥ ३८ ॥
वाजिन्न वाजि अति घणां रे ढोल तिवल कसाल ।
भेरीय संख सोहामणा रे गाजि नीसाण अपार । सा० ॥ ३६ ॥
नेम जिन रथि आरोहीया रे होइ जय जयकार ।
याचक जननि मनि मनि रली रे आपिय सोवण सार
। सा० ॥ ४० ॥

सारथीइ रथ खेडीउ आडी मींनी जाइ।
भार्वीयंभंरव कलकले रे यमणु राजा थाइ। सा० ॥ ४१ ॥
वाह उतारि एक कामनी रे पात्र नाचि अति चंग।
धप-मप-मद्दल रण कीउं रे बेरणा ताल सुरंग ॥ सा ॥ ४२ ॥
हय गय रथ सवि सांचरि रे येहिं स्नाउ रे प्रकास।
पाताल नु रायसल संल्यु रे वनिता देइ एक भास ॥ ४३ ॥
लगन नु दिन जब आवीउ रे रायमि करि सिरणगार।
याद रहूली कांचली रे पहिरणि फाली सार ॥ सा ॥ ४४ ॥
पायेय नेउर रणझणि रे घूघरी नु घमकार।
कटियंत्र सोहि रूडी मेखला रे झूमणु झलकि सार ॥ ४५ ॥ सा ॥
रत्नजडित रूडी मुद्रिका रे करीयल चूडी तार।
बाहिं बिठा रूडा बहिरखा रे हीयडोलि नवलख हार
॥ सा ॥ ४६ ॥
कोटिय टोडर रूयडु रे श्रवणे झबकि झाल।
नल विट टीलु तप तवि रे चीटली चटकि चालि ॥ सा ॥ ४७ ॥
वांकीय भमरि सोहामणी रे नयणे काजल रेह।
कामिधनु जाण ताडी उरे नर मन पाडवा एह ॥ सा ॥ ४८ ॥
हीरे जडी रूडी राखडी रे वेणीय दंड उतारि।
मयणि पन्नग जाणे पासीउ रे गोफणु लहिकि सार
॥ सा ॥ ४९ ॥
मस्तकि मुगट सोहामणु रे सिंहिथि सींदूर पूर।
चोउ चंदन रूडां फूलडां रे पान बीडीय अमूल ॥ सा ॥ ५० ॥
सवि सिरणगार साजी करी रे उपरि उडीय घाट।
धवल देइ सर कामनी रे जय जय बोलि भाट ॥ सा ॥ ५१ ॥

नेमि की बारात

सखी ये राजिल परवरी रे मालीइ पुहुती जाम।
गुण चडी जोइ चालीए रे कहु सखी केहु मोह स्वाम
॥ सा ॥ ५२ ॥
नव घणु रथ सोहामणि रे रयण मंडित सुविसाल।
हींसला अस्व जिणि जोतर्या रे लहलहि धजाय अपार
॥ सा ॥ ५३ ॥

कानेय कुंडल तप तपि रे मस्तिक छत्र सोहंति ।
सामला वरण सोहामणु रे सोइ राजिल तोरु कंत ॥ सा ॥ ५४ ॥
आपणा कंतनि निरखता रे हीयडलि हरष न माइ ।
आगा पालीमि जिनतणी रे पाम्यु एहवु नाह ॥ सा ॥ ५५ ॥
कान्हडि कूड कपट करीरे जीवे भराव्या वाड ।
तोरणि जव वर आवीउ रे पसूडे करीय रोहाड ॥ सा ॥ ५६ ॥
नेमि सारथी पूछीउ रे ए जीव विलविलाइ ।
पसूय वन्द्रेसि उग्रसेन रे यादव गुरव थाइ ॥ ५७ ॥ सा ॥
करुणा वाणी जव सांभलि रे सारथी तु अवधार ।
धिग धिग पड इणि परणत्रिरे नही करु ससार संघार
॥ सा ॥ ५८ ॥

जिनजी बंधन काटीया रे पसूयां मेहल्या रानि ।
रथवाली वेगि वल्यु रे पुहुतु सहसा वन्न ॥ सा ॥ ५९ ॥

राजुल का विलाप

तव राजिल विलपी हुई रे कह सखी कवण विनाण ।
केहा अवगुण मि कीया रे चली गउ नाह सुजाण ॥ सा ॥ ६० ॥
तव राजिल धरणी ढली रे सीतल करि उपचार ।
वाय वालि वर वीजिणे रे चेत वाल्यु तीणीवार ॥ सा ॥ ६१ ॥
नेम पूठियाली पुलि रे प्रीउ प्रीउ करती जाइ ।
नव भव केरी मागि प्रीतडी रे कोइ वासु मोरु नाह ॥ सा ॥ ६२ ॥
कंकण फोडि करतणा रे रयण मइ त्रोडि हार ।
काजल लूहिलु हणेरे रालि न मोहूर सार ॥ सा ॥ ६३ ॥
संसार संग सवि परिहरी रे होउ बाल ब्रह्मचार ।
मुगतिनु पंथ जिणि आदरयु रे लीधु संयम भार ॥ सा ॥ ६४ ॥
राजिल राणी झूरती रे जाई मली नेमि पास ।
स्वामीइ संयम आलीउ रे रयणमि गलि जास ॥ सा ॥ ६५ ॥
गिरि गिरिनारि जाई चडयु रे आदरयु सुलसुध्यान ।
घाति करम सवि चूरीयां रे उपनु केवल ज्ञान ॥ सा ॥ ६६ ॥
इन्द्रासन तव कांपीउं रे नेम नि प्रगट्यु ज्ञान ।
सुर नर पन्नग आवीया रे रच्यु समोसरण ताम ॥ सा ॥ ६७ ॥

ज्ञान महोछव नीपनु रे जय-जय रव होइ जाम ।
सुर नर पन्नग रमी करी रे पुहुता निज निज ठाम ॥ सा ॥ ३८ ॥
देशवदेश संबोधीया रे चली आव्या गिरिनार ।
काया कुटीरज परिहरी रे मुगति होइ भरतार ॥ सा ॥ ६९ ॥
श्री यसकीरति सुपसाउलि ब्रह्म यसोधर भणि सार ।
चलण न छोडउं स्वामी तह्म तणा मुझ भवचां दुःख निवार
॥ सा ॥ ७० ॥
भणसि जे नर सांभलि रे धन धन ते अवतार ।
नवनिधि तस घर उपजि रे ते तरसि संसार ॥ सामला ॥ ७१ ॥

इति नेमिनाथ गीत समाप्ता:

नेमिनाथ गीत
राग सोरठा

नेम जी आवु न घरे घरे, बाटडीयां जोइ सिवया माडली रे ।
तुं तु पशूआं देखि दयाल रथ रे वाली रेवि गिरि गउ रे ।
नेमजी आवु न घरे । १ ।
कपट करीय मोरारि नेम रे कारणि रायमि आई वरी रे ।
मलीयान अपार अपार, मूना रे गढ भणी सामला रे ।रूडा नेमि. । २
तोरणि आयु वर नेमि २ पसूआ रे करुणामह तिहां रडि रे ।
दया धरी दीनदयाल छोडी रे सहसावन प्रति सांचर्‍या रे ।
नेमजी । ३ ।
उग्रसेन धी ताम, कारण रे जाणी नेमनि वीनवि रे ।
नव भव तुं भरतार, पशमि रे देव दया करू रे । नेमजी । ४ ।
रायमि गई गिरिनार २ नेम रे चलणि तप आचर्‍यु रे ।
भव सागर मुझ तार २ ब्रह्म यसोधर इम वीनवि रे ।
नेमजी आ० । ५ ।

मल्लिनाथ गीत

सरसति स्वामिण वीनवुं मागुं एक पसाउ रे ।
तह्म परसादि गाइसुं रूयडा जिणवर राउ रे ।

(३)

प्रणमु नेमिकुमार सार जिणि संयम धरउ ।
प्रणमु नेमिकुमार मयण समरंगणि वरउ ।
प्रणमु नेमिकुमार तजीय जिणि राजलि राणी ।
प्रणमु नेमिकुमार कर्म आठह अंति आणी ।
प्रणमतां जनमि आठि अहर मुगति नारि जेह चित वसी ।
ब्रह्म यशोधर इम कहि तेह पाप पंक जाइलसी ।। १ ।।

(४)

करु धर्म्म एक सार वार मम लाउ प्राणी ।
वली समरु नवकार भाव तै मन माहि प्राणी ।
सेवु अरिहंत आदि बाद भाजि भव केरा ।
दया करी दिउ दान ज्ञान पामु बहुतेरा ।
मन बच काया वसि करी आपणपुं इम तारीइ ।
ब्रह्म यशोधर इम भणि जिम नरय तणां दुख वारीइ ।।१।।
पुहुवि परगट पास जास वासुग फणि सोहि ।
कमठ उतारय, नाद देव मानव मन मोहि ।
डाकिणि शाकिणि भूत वेगि विंतर भय टालि ।
अतिसय अधिक अपार मनहवंछित वर आलि ।
सेवुज स्वाम मूरति सकल अकल रूप आनंद करि ।
ब्रह्म यशोधर इम भणि तै सेवतां स्वामि दालिद्र हरि ।।२।।

(५)

राग केदार

पसूडा तोरणि परिहरी, रायमि जीणी परिहरी ।
परिहरि विषयाकेरी वेलडी जी ।। १ ।।
मयणराउ जिणि मोडीय, वाल्यु रथडु मोडीय ।
मोडीय मोह माया अंगि आवंता जी ।। २ ।।
उग्रसेन मनवा लिहो तेहज मन नवि वालि हो ।
वालि हो मनडु ए मुगति भणी जी ।। ३ ।।
सुर नर मलीया केवडा नेमि गुण गाइ केवडा ।
केवडा गिरिनारी उत्सव करिजी ।। ४ ।।

नेमि संयम पामीयां, केवल रमणी पामीयो ।
पामीयां सिद्धवधू त्रिभुवन पतीजी ।। ५ ।।
यादव ना गुण बोलि हो ब्रह्म यसोधर बोलि हो ।
बोलि हो सिवसुख प्रभु सामला जी ।। ६ ।।

इति नेमिगीतं

(६)

राग सामेरी

नेमि निरंजन नाथ निरोपम तोरणि पसूडां निहाली री ।
सयल जीवदा बंधन टाली चाल्यु रथधु वाली री ।
बोलंती राणी रायमि नेमि पुहुतु गढ गिरिनारी ।
मुगति रमणि लणि रंगि रातु पूरव प्रीत विसारी री । बोलं ।।१।।
पंच पीध करतां लुंछि पाली यत्र संयम नेमि भाली री ।
पंच महाव्रत दुद्धर झाली विषय तणीं सुख पाली री
बोलं ।। २ ।।
सामला वर्ण सेवक सुख कर्त्ता काम कुंजर मद हर्तारी ।
ब्रह्म यसोधर नु स्वामी समरथ अविचल पद
सोइ वर्तारी ।। बोलंतो ।। ३ ।।

(७)

राग प्रभाती

मूरति मोहण बेल भणी जि, अवर उपम्म कहु कुण दीजि ।
यादु भणीयण पास पूजी जि, मानव भव फल निश्चिली । प्रा । १ ।
चंदन केसर घणां घसी जि, मंगीय अंगी मलगिरि रची जी
। प्रा । २ ।
चंपक बेल बुल सरीरे वालु, कुंद किरणी करी भव भय-टालु
। प्रा । ३ ।
भरणि ययो मया सेवा सारि, मलीपवि धन्न प्राबंतडां वारि
। प्रा । ४ ।
ब्रह्म यसोधर कहि सिर नामी, सिव सुख दाता नेमीमुनि स्वामी
। प्रा । ५ ।

(८)

राग प्रभाती

पशूडां कारणि परहर्यु रे राजिल सरसु राज ।
सयल सजन मोकलावी चाल्यु करवा आतम काज ।
बाई रे शिवा देवी कहि माहरु ।
सामलीउ रे वरिषा अनि किम रहिसि
अंगि उघाडु एकलडु रे सीता तप किम सहिसि । शि । १ ।
गढ़ गिरिनार जाई तप मंड्यु, मयण राउ जिणि दंड्यु ।
मोह मच्छर मद हेलां खंड्यु, सविहि परिग्रह छांड्यु । शि । २ ।
ध्यान अनल परगट जिणि पूरी, कर्म काष्ट सब चूरी ।
ब्रह्म यसोधर कहि सिर नामी, मुगति गई तेणि पामी गई

(९)

राग गुडी

सकल मूरति ए सोहामणु स्वामीय श्री पास जिणंद रे ।
परम सायर सोहि चंद्रमा दीठडि रे हुइय आणंद रे ।
आवु आवु भवीयण भेटवा, दाबुजीछि देवदयाल रे ।
भाव भगति सु पूजा रचु गीत नृत्य करु अवला वाल रे
। आवु । १ ।
अश्वसेन रायां अंगो अमी नयर वाणारसी वास रे ।
वम्मा देवी राणी उयरि उपनु सेवकनी पूरवि आस रे
। आवु । २ ।
नयर जीराउलि मंडणु नाम सुर नर वहि आण रे । आवु । ३ ।
जिनवर कहीइ मेवीसमु मोड्यु कमठ चुमाण रे ।
श्री विजय कीरति गुरु पाय नमी अवरन मागउ देव रे
। आवु । ४ ।
ब्रह्म यसोधर हरषि वीनवि भवि भवि तह्म पाय सेव रे
। आवु । ५ ।

(१०)

राग आसाउरी

समुद्र विजय सुत यादव राजा, तोरणि आया करी दिवाजा ।

वांहिडी साहि सुणु समरथ सांई, भवरनाथ हु न मागु कांई
। बांहि । १ ।

हिरण रोझ सवि संबर पेषी, पसूय छोडी नागी गड उवेषी
। बांहि । २ ।

विरह वियापी राजिल नारि, नेमनाथ मेरे जीवन आधार
। बांहि । ३ ।

रैवि गिरि श्री नेम तप करीयु, यसोधर ब्रह्म नु स्वामी
मुगति वरीउ । बांहि । ४ ।

(११)

राग सोरठा

गढ जूनु बस तलहटी रे लाई गिरिसवां माहि सार ।
जेह सिर स्वामि समोसर्या लाई राजमती भरतार ।
हो नेमजी सेवकनी करे सार ।
तोरा गुणह न लाभु पार तु त्रिभुवन तारण हार ।नेम० । १ ।
शिषर पांचि सोहि भलां रे लाइ रेवैया केरि शृंग ।
स्वाम पूजन विनायक रे अलरणा सहिर अंबाई उतंग हो
। नेम० । २ ।
अस पाजि पग मांझ तारे लाई हीयडो लि अतिहि आणंद ।
गयंदमि कुंड अंग क्षाली रे लाई पूजिवु नेमि जिणंद
। हो नेम० । ३ ।
मानव भवजु पामीउ रे लाई सफल करु रे संसार ।
ब्रह्म यसोधर इम कहि रे लाई सामलु सुख दातार ।
हो नेम० । ४ ।

(१२)

राग धन्यासी

यान लेई नेमि तोरणि आउ, पसू छोडी गउ गिरिनार ।
अब कब आविगु रे, इम बीनवि राजिल नारि ।
नेमि कब आविगु रे । अब० । १ ।
हु एकलडी निरधार नाह कब आविगु रे ।
मेरे प्राण जीवन आधार अब कब आविगु रे ।

समुद्र विजय सवया नंदन यादव कुल सिणगार । अब० । २ ।

ऊर्जालि गिरि तप लेई जिन सीधु पाम्यु सिवपुर वास । अब० । ३ ।

ब्रह्म यसोधर वली वली वीनवि दुखदहन चलणे राय

। अब० । ४ ।

(१३)

राग सबाब

संसार सागर गहन अपारा ।

लाख रे चुराती माहि मंदिर विहारा ।

चेत रे प्राणी सुणु जिनवाणी, ध्याउ एक परम पुरुष

मनि प्राणी । चे० । १ ।

पंच वरणा तु फिरि फिरि आउ, तारण धरमति एक न

पाउ । चौ० । २ ।

मणुय जनमन दोहिली लाधु, तु हवि जीवडा आतम

साधु । चे० । ३ ।

तारण केवली तु जिनदेवा, यसोधर ब्रह्म करि तुझ

पाम सेवा । चे० । ४ ।

(१४)

राग सोरठा

वागवाणी वर मागु माता दि मुझ अविरल वाणी ।

यसकीरति गुरु गाउं गिरिया, महिमा मेर समाणी ॥

आवु आवु रे भवीयण मनि रली रे

चाउल रयणे चुक पूराबु सहि गुरु चलण वधावु । आवु ॥ १ ॥

सोमकीरति गुरु केरी वाणी, ज्ञानपणि मनि आणी रे ।

संसार ए असा भंगुर जाणी, चारित्र सु मति माणी रे ॥ २ ॥ आवु ॥

पंच महाव्रत कुंडर धरीया, क्षमा षडग अणसरीया रे ।

काम क्रोध माया मद मछर, दूरि सवि परिहरीया रे ॥ ३ ॥ आवु ॥

अभिनवु गौतम शिषि अवतरीउ, थूल भद्र जिम सोहि रे ।

चिद्रूप चिंतन करि निरंतर, वाणी भजन मन मोहि रे ॥ ४ ॥ आवु ॥

माता लीलादे उमरि उपनु, साहु वीरा मल्हार रे ।

काष्ठ संघ दिन कर जिम सोहि, नंदीतट गच्छ सिरछत्र रे।

॥ ५ ॥ आवु ॥

देश विदेश विख्यात विभूषण, सात तत्त्व गुण आणि रे।

रामसेन कुलदीपक उदय, सकल सिद्धांत बखाणि रे॥ ६ ॥ आवु ॥

श्री सोमकीर्ति गुरु पाट भोरीधर सोल कला जिसु चंद्र रे।

ब्रह्म यशोधर इणी परि वीनवि श्री संघ करि आणंदु रे॥ ७ ॥ आवु ॥

(१५)

राग सोरठा

गढ जूनु जस तलहटी रे लाई गिरि सवां माहि सार।

जेह सिर स्वामि समोसर्‌या रे लाई राजमती भरतार।

हो नेमजी सेवक नी करे सहाय।

तोरा गुणह न लाभु पार, तुं तु त्रिभुवन तारण हार

॥ १ ॥ हो नेमजी ॥

शिखर पांचि सोहि भला रे लाई रेवैया केरि श्रृंग।

स्वाम पूजन विनायकरे अलूणा सहिर अंबाई उत्तंग ॥ २ ॥ हो नेमजी ॥

जस पाजि पग मांझि तारे लाइ हीयडोलि अतिहि आणंद।

गयंदमि कुंड अगछाली रे लाई पूजिनु नेमि जिणंद ॥ ३ ॥ हो नेमजी ॥

मानव भव जु पामीउ रे लाई सफल करु रे संसार।

ब्रह्म यशोधर इम कहि रे लाई, सामलु सुखदातार ॥ ४ ॥ हो नेमजी ॥

(१६)

राग धन्यासी

प्रीतडी रे पाली राजिल इम कहिरे।

हीय डोलि हरस न माइ घरि घरि गुडी जूनिगढि

उछली रे।

घस्यु रे नीसाणे घाइ ॥ प्रीतडी० ॥ १ ॥

छपन कोडि यादव मिल्या रे।

रथ रे घोडा नहीं पार।

पेहडीयां रे पेर बिछाईउ रे।

पुहुतलारे तोरण बार ॥ प्रीतडी० ॥ १ ॥

सोल रे शृंगार रायमि अंगि करीरे ।
सखीए पर वरी सार ।
कुसरे चढीनि जोउ राणी कालीए रे ।
मझ मन नेह रे भरतार ।। प्रीतडी० ।। २ ।।
गुहिर गुफराङु जीवे माडी नेमजी रे सुणी देई कान ।
परिहरी चाल्यु राणी रायमि मेह्लीडां धरंतों हो ते रानि ।
प्रीतडी रे पालु पेला भवतणी रे ।
अबला म मेह्लु रे निरधार ।
रथडु रे वाली देव दया करु रे ।
भवि भवि तु भरतार ।। प्रीतडी० ।। ३ ।।
दुखरे दहन श्री गिरिवर गउ रे ।
रायमि करि रे विलाप ।
कोडि रे नगोधर बाजु बंध बहिरखारे ।
प्रीछवि रे उग्रसेन बाप ।। प्रीतडी० ।। ४ ।।
नेमरे चलणे तप मांडीउ रे ।
छाडीउ रे काम विकार ।
ब्रह्म रे यशोधर इम वीनवि रे ।
त्रिभुवन तारण मुझ तार ।। प्रीतडी० ।। ५ ।।

(१७)

राग बसंत

अंगि हे अनोपम वेष रे करी उग्रसेन घरि आय राजिल वरी ।
बोलि बोलि रे राणी राजमती ।
नवहु भवंतर नेह तजीनि दयामि नेमि थया यती ।। बोलि ।। १ ।।
छपन कोड यादव दल रे साजी,
बार कोडि साडी बाजित्र वाजी ।। बोलि ।। २ ।।
अति रे उछाहु नेमि तोरणि गया,
पसूडां पोकार सुणी उभारे रह्या ।। बोलि ।। ३ ।।
नेमजी कहि रे ईणो कवण काज ।
परण्यां गुख तह्मनि यादव राज ।। बोलि ।। ४ ।।

सुण रे सारथी तह्नि कहुं रे आप ।
अपर जीवकेरु अनंत पाप ।। बोलि ।। ५ ।।
सुख बइठी राजिल जोइ रे आली ।
पसूड़ा बंधन छोडी गउ रथ वाली ।। बोलि ।। ६ ।।
पूरब प्रीतडीयां स्वामी मन पखा ।
दुर्जन ना बोल तह्मे मन थी टालु ।। बोलि ।। ७ ।।
राजिलि नेमि पामी जाई गिरनार ।
ब्रह्म रे यशोधर कहि संसार ।। बोलि ।। ८ ।।

(१८)
राग कालेरु

चेतु लोई २" थिर म कहु दया दान
जे उदय आरोही सिवपुर जामि सोई ।चेतु।१।।
चंचल धन तनु चंचल जाणु यौवन चंचल माणु रे ।
बीज तेज जिम क्षण एक दीसि हीयडि अस्थिर आणु रे ।।चेतु।।२।।
बंधव पुत्र कलित्रज कहि ना पितर माइ परिवारा रे
अबंरि अभ्र पटल जिम दीसि आथिर एह संसारा रे ।।चेतु।।३।।
लंक राइ जे रावण राणु नल नहुष परिमाणु रे ।
अवर राइ वर कोई न रहीया हूया होसि जे जाणु रे ।।चेतु।।४।।
ज्ञान दृष्टि तह्मे जोउ विचारी परिहस धन परनारी रे ।
ब्रह्म यशोधर ए गुण दाखि तेहनि समरथ सरणि राखि रे ।।५।।

नामानुक्रमणिका

नाम	पृ. सं.
अश्वसेन	२५
अमरकीर्ति	२५
अमृत महादेवी	४३
अजितनाथ	१६६
अनन्तकीर्ति	८२
अभयमति	६३
अभयचंद	६३
अनन्तदास	२
आदित्यसेन	८१
आदिनाथ स्वामी	५, २६, ८०
अभयकीर्ति	२५, ८३
उदयसेन	२५, ८२
उपाध्याय संवेग सुन्दर	२
कनककीर्ति	२५
कल्याणकीर्ति	६४
कबीरदास	२
कनकप्रभसूरि	२
कनकसेन	८१
काऊ	६
कीर्तिध्वज	६८
कीर्तिधर	६४, ६५
कृष्णदास	४, १०
कुमारसेन	२५, ८३
कुमुदचन्द्र	१७५
कुलभूषण	८१, १२५
कुतबनशेख	२
कुन्दनलाल	६३
कुन्दकुदाल	८३
केगामती	१३०
कैलाश	७९
केशवसेन	८१
कौशक	१५, ४३, ६३
साहु खेमारा झांझु	७
गंगसेन	७६
गंगा	५४
गारवदास	१
गांधी भूपा	६
गुरुनानक	२
गुणसेन	८२
गुणचन्द्र	१५८
गुणकीर्ति	१, २, ८१, १२०, १२२, १२८, १५६

नाम	पृ. सं.	नाम	पृ. सं.
गुणदेव	२५, ८२	जिनसेन	२५, ८३
गूजर	१६५	जिनदास	२, ४, ६४, १२०
गोजसेन	७६		१२१, १२८, १५६
घर्मदास	१२०	जोहरापुरकर	४
घनश्री	१५४	ठक्कुरसी	१
घर्मसेन	३, २५, ८६	महाकवि तुलसीदास	१२६
चरणदास	२	दशरथ	१३०
चन्द्रसेन	८१	देशभूषण	१२५
चन्द्रमति	१४, ४१, ६२, ६६	देवकीर्ति	८१
चन्द्रावति	१६	देवभूषण	२५, ८२
चतुरुमल	१	देवेन्द्रकीर्ति	१७१
चारुसेन	२५	नंदासुनन्दा	६०
चारुकीर्ति	२५	ब्र. नाना	६
चारुदत्त	१५८	नागसेन	७६
चारित्रसेन	८१	नाभिराय	८६, ६४
छीहल	१	नेमसेन	७६, ८०, ८१
जयसेन	२५, ८२	नेमिदास	१२०
जयकीर्ति	२५, ८३	भ. नेमिनाथ	१६५, १६६,
जसोधर	६२, ६६		१७३, १६८
जसोमति	४३, ५३	नोपसेन	७६
जंबूस्वामी	७४	पद्मकीर्ति	२५, ८१ ८३

नाम	पृ. सं.
पद्मसेन	८३
पद्मावती	७९
भ. पार्श्वनाथ	६
पुरुषोत्तम	२
बलिभद्र	१७७
बहलोल लोदी	४
बूचराज	१
भवसेन	२५
भवकीर्ति	२५, ८३
मट्ठ	८०
भानुकीर्ति	२५
भीमसेन	२ ८, २५, ८६
भुवनकीर्ति	२५, २६, ८४
भूषण	४
महसेन	२५, ८३
महेन्द्रसेन	८१
महमूद	२६
महसेनाचार्य	८३
मनोहर	१२०
महकीर्ति	८१
मनदकीर्ति	८२
भ. मल्लिनाथ	१७५, २०४
मल्लिदास	१२०
महाकवि सिंह	१५७
रानी मल्हिदेवी	६४
वाचक मतिशेखर	२
मारसेन	८१
मारदत्त	१३, ३४
मालव	१७३
मिश्र बन्धुविनोद	१, २
मेरुकीर्ति	८२
मेरसेन	८१
मेघसेन	८१
मृगावती	२
यशःकीर्ति	१, २, ८१, १५७, १५८, १६०, १६१, १६३, १६४, १८२
यशोधर	१, २, ७, ११, १४ १५, १६, ४२, ६६ ६३, १२१, १६४ १६५, १७२, १७७ १८२, १८७, २०३

नाम	पृ. सं.
	२०५, २०९, २१०
	२११
यशोमति	१५, ४५, ६२, ६४
योगी	१६१
रत्नकीर्ति	२५, २६, ८२, १७५
रमणकीर्ति	८५
रइधू	६४
रविकीर्ति	२५
रविषेणाचार्य	१२२
रामकीर्ति	८३, १५७, १५८
राजकीर्ति	२५
रामसेन	८, ९, ७६, ७७
	७८, ८१, १६४, १९२
रामचन्द्र शुक्ल	१
रामचन्द्र सूरि	२
रुकमणी	१०
रत्ना	६
रैदास	२
लक्ष्मीसेन	६

नाम	पृ. सं.
लक्ष्मसेन	२५, २७, ८५, ८६
लक्ष्मीचन्द चाँदवाड़	१७१
ललितकीर्ति	८२
लोककीर्ति	२५
वरदत्त	५८
वासुपूज्य स्वामी	१६६, १७२,
	१९९
वासवसेन	२५, २६, ८१
विजयकीर्ति	२५, ८१, ८३,
	१६४, १६५, १७१,
	१७२, १९४, १९५
विजयसेन	८१, १५८, १६४
	१९२
विमलकीर्ति	८२, १५७
विशालकीर्ति	२५, ८२
विश्वसेन	२५, ८२
विश्वनन्दि	२५
वीरसेन	५, ६, ७, ८१
शान्तिदास	१२०

नाम	पृ. सं.
शान्तिनाथ स्वामी	४, ८६
शीतलनाथ स्वामी	५, ७, ११, १२, १३
शुभचन्द्र	११, १७१
शुभकीर्ति	२५
सकलभूषण	१७१
सकलकीर्ति	११, १५८, १६४, १७२, १९४
सहदेवी	१८
संभवनाथ	७, १५८
सहस्रकीर्ति	८१
सांगु	१, २, १०, ९३, ९४, १०४
सुदत्ताचार्य	१७
महाकवि स्वयंभू	१२२, २६, ९२
सुरसेन	२५
सुमति	१३०
सोमकीर्ति	१, २, ३, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, २५, २६, २८, २९, ३०, ३१, ३२, ३३, ७३, ८१, ८६, ९१, ९३, १२१, १६४, १६५, २११
सोमदेव	१२, २६ ९२, १५७
संयमसेन	२५
सहस्रसेन	८१
सुकोसलराय	९२, ११९
हरिषेण	९७
हरसेन	८१
हरिराम	२
श्रुतकीर्ति	८१
श्रीकीर्ति	२५, ८३
श्रेयांस	७, ९०

नाम	पृ. सं.	नाम	पृ. सं.
श्री शान्ति	७८	उपाध्यायज्ञानसागर	२
त्रिलोचनदास	२	ज्ञानभूषण	११, १७१
त्रिभुवनकीर्ति	८१	ज्ञानदास	१२८, १५६
त्रिलोककीर्ति	२५	ऋषभनाथ	२७, ९१, ९४

ग्रंथानुक्रमणिका

अष्टाह्निका व्रत कथा ९, १०
आदिनाथ विनती १, २६, ६१
गीता भानुप्रकाश २
गुरुनामावलि ९, २६, ३३, ७४, ८३
धर्मविवेक २
धर्मपरीक्षा १५८
चिन्तामणी पार्श्वनाथ जयमाल ९, ३२, ३३, ९२
चौबिस तीर्थंकर भावना १६१
जसहर चरिउ १२
जगत सुन्दरी प्रयोगमाला १५७
जिणरत्तिकहा १५७
नेमिनाथ गीत १५६, १६६, १७३, १९८, २०३
पज्जुण्णचरिउ १५७
पद साहित्य १७५
प्रद्युम्न चरित्र ८, १०
पाण्डव पुराण १५७
बलिभद्र चुपई १६६, १६७, १७७
मल्लिगीत ९, ३०, ३१
मल्लिनाथ गीत १६६, १७५, २०३
मृगावली २
यशोधर चरित्र ८, १०, १३
यशोधर रास ९, १२, १३, १३, ३४, ७३
यशस्तिलक चम्पू १२
योगीवाणी १६१

नाम	पृ. सं.	नाम	पृ. सं.
राजर्षि चरित	२	वैराग्य गीत	१६६, १७१,
रामसीतारास	१२०, १२१,		१६७
	१३०, १५६,	सप्त व्यसन कथा	४
रामरास	१२०	सप्तव्यसन कथा समुच्चय	८
राजस्थान के जैन सन्त	१२०	समवसरण पूजा	६, १०
रिषभनाथ	६, २९, ३३	सारसिखामन रास	२
की धूली	८७, ६१	सुकोशलराय	६३, ६४,
बृहत्कथाकोश	६३	चुपई	१०४, ११६
वासुपूज्य गीत	१६६, १७२	हरिवंश पुराण	१५७
	१६५	षेपनक्रियागीत	६, २८, ३३
विजयकीर्त्ति गीत	१७१, १६४	श्रीपालरास	२
		(ज्ञानसागर)	

नगर, ग्राम एवं प्रदेशानुक्रमणिका

अंगदेश	१००, १०६	उजैणी-उजैनी	१६, ४१, ४३
अरुणग्राम	११२		५३, ५६, ५८,
अष्टपद	१०२, १०४		६२, ६३
अयोध्या	६४, १०४, १०५	उदयपुर	५
	१०८, ११३,	कुंकणनि	६७
	१२५, १५१३	कुंडलपुर	६७
अहमदाबाद	६	करणाट/कर्नाटक	५३, ६७,
आमेर	६		१०२, १०८

नाम	पृ. सं.
करहाटक	५३
कोंकण	९७, १००
कोशल	८७
खरासण	९७, १००, १०४
गउड़	१७२
गूजर देश	९७, १७३
गुजरात	४, ७, ११, ९७, १०२
गिरिपुर	१६५
गुडलीनगर	११, १२
गोपाचल	१०८, १६३
चम्पापुर	१००, १०६
चित्रकोट	७४
चीतुड़गढ	१२२, १२४, १४०
चीण	१००, १०४
जयपुर	५, ६, १३, १५७
जम्बुद्वीप	१३, ३४, १०४ १७७
जयसिंहपुरा खोर	५
जाउर	७४
जोधपुर	२
डूंगरपुर	५, ९, ४४, १५८ १७५
ढीली	१७३

नाम	पृ. सं.
देहली	४
धुलेव	१५८
नागौर	१५८
नालछिपाटण	१४०
पावापुर	१००, १०४,
पोयणपुर	१००
[illegible]	७
बंगदेश-बंगाल	१००, १०४
बंसपाल	१७२
बागड़	६
बांसवाड़ा	१६५
मगध	१००
मथुरा	७५, १२१, १०८, १५५
मरहठ, महाराष्ट्र	९७, १०२ १७३
मरुस्थली	९७, १००
मालव	४९, १७३
मारवाड़	९७, १०९
मुलतान,	९७, १००, १०२ १०९
मेवाड़ मेदपाट	११, ७६, ९७ १०६
मोथ देश	३४
रणथम्भोर	१३

नाम	पृ. स	नाम	पृ. स.
राजपुर	१३, ३४	साकेता	१३०
राजस्थान	५, ७, ६, ७६	सांगानेर	६
रामपुरी	१४१	सूरपुर	५
राजग्रही	१०४	सोजित्रा	४, ७, ३६, ८६
रेवासा	१५८	सोमापुर	१२५
लाड देश	६७, १७३	हथिणाउर	१०, ६८ १००
[illegible]	१२२, १४१		१०१